अंक 2 : अप्रैल, 2021
चौ-मासिक, बेंगलूरु

Azim Premji University

अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी

लर्निंग कर्व

अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का प्रकाशन

हर बच्चा सीख सकता है भाग - 2

सम्पादन समिति

प्रेमा रघुनाथ, मुख्य सम्पादक
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org

शेफाली त्रिपाठी मेहता, सह-सम्पादक
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
shefali.mehta@azimpremjifoundation.org

चन्द्रिका मुरलीधर
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
chandrika@azimpremjifoundation.org

निमरत खण्डपुर
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
nimrat.kaur@azimpremjifoundation.org

सम्पादकीय कार्यालय
सम्पादक, अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
Phone : 080-6614 4900
Fax : 080-6614 4900
Email: publications@apu.edu.in
Website: www.azimpremjiuniversity.edu.in

शोभा लोकनाथन कवूरी
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय,
सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड,
सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125
shobh.kavoori@azimpremjifoundation.org

सलाहकार
हृदय कान्त दीवान
सचिन मुले
एस. गिरिधर
उमाशंकर पेरिओडी
विनोद अब्राहम

इस अंक के विशेष सलाहकार
अनन्त गंगोला

प्रकाशन समन्वयक
शहनाज़ बेगम

हिन्दी अनुवाद
नलिनी रावल
रमणीक मोहन

कॉपी एडिटर (हिन्दी)
स्वाति भदौरिया

हिन्दी अंक सम्पादन
राजेश उत्साही

आवरण चित्र सौजन्य
अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय अभिलेखागार

डिजायन
Banyan Tree
98458 64765

हिन्दी अंक लेआउट एवं मुद्रक
आदर्श प्रा.लि. भोपाल
+91-755-2555442

कृपया ध्यान दें :
इस अंक में प्रकाशित लेख मूलत: अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व (अँग्रेज़ी) अंक 7 अगस्त, 2020 के लेखों के हिन्दी अनुवाद हैं। लेखों में व्यक्त विचार और दृष्टिकोण लेखकों के अपने हैं, उनसे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन या अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

'' अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय का एक प्रकाशन है। इसका उद्देश्य शिक्षकों, शिक्षक-अध्यापकों, स्कूल प्रमुख, शिक्षा अधिकारियों, अभिभावकों और गैर-सरकारी संगठनों तक ऐसे प्रासंगिक और विषयगत मुद्दों में पहुँच बनाना है जो उनके रोजमर्रा के काम से सम्बन्धित हैं। लर्निंग कर्व शैक्षिक जगत के विभिन्न दृष्टिकोणों, अभिव्यक्तियों, परिप्रेक्ष्यों, नई जानकारियों और नवाचार की कहानियाँ प्रस्तुत करने के लिए एक मंच प्रदान करता है। इसका मूल विचार 'शैक्षणिक' और 'अभ्यासकर्ता' के मध्य सन्तुलन हेतु उन्मुख पत्रिका के रूप में स्थापित होना है।''

सम्पादक की क़लम से

इस अंक को प्रस्तुत करते हुए हमें बहुत ख़ुशी हो रही है। इसके कई कारण हैं। सबसे पहला तो यह कि हर बच्चा सीख सकता है - इस कथन पर इतनी ज़बर्दस्त प्रतिक्रिया मिली कि हमें अपेक्षा से अधिक लेख प्राप्त हुए, जिन्होंने इस बात की पुष्टि की (अगर पुष्टि को आवश्यक माना जाए) कि हाँ, वास्तव में, बच्चे सीख सकते हैं और सीखते भी हैं, बशर्ते कि उन्हें वह प्रोत्साहन, समर्थन, सम्मान और गरिमा मिले जो सीखने की प्रक्रिया के दौरान और बाद में उन्हें मिलना चाहिए। इसके परिणामस्वरूप इसी विषय पर केन्द्रित यह भाग 2 प्रस्तुत है।

दूसरा कारण यह था कि शिक्षकों ने जिन बातों का पता लगाया, उनमें से एक बात यह है कि जैसे बच्चे सीखते हैं, वैसे ही उन्हें सिखाने वाले वयस्क भी सीखते हैं। दोनों भाग के लेखों ने बार-बार इस तथ्य को प्रमाणित किया कि किसी अवधारणा या विचार को अधिक आसान और अधिक समावेशी बनाने के बारे में सोचने पर शिक्षक, चीज़ों को एक नई रोशनी में देख पाए। इसलिए दोनों ही तरफ सीखना हो सका।

तीसरा कारण यह था कि सीखने के विविध तरीक़ों में सामान्य से विशेष तक बहुत सारे व्यापक क्षेत्र शामिल होते हैं। फोकस लेखों से हमें सीखने को सम्भव बनाने के लिए आवश्यक पृष्ठभूमि की व्यापक जानकारी मिलती है। इनमें आदिवासी बच्चों के एक समूह से सम्बन्धित एक लेख है जिसमें यह बच्चे अपनी संस्कृति और भाषा को पुनः अपनाते हैं और एहसास करते हैं कि सीखने या अधिगम के लिए आत्मगौरव का होना भी महत्त्वपूर्ण है। इसके साथ ही वे सही पोषण का महत्व भी जान पाते हैं क्योंकि कक्षा और स्कूल की कठोर दिनचर्या का पालन करने के लिए शारीरिक रूप से सक्षम होना बहुत आवश्यक है। एक अन्य लेख में इस तथ्य पर प्रकाश डाला गया है कि बच्चे अपने साथ काफ़ी कुछ जानकारी लेकर स्कूल आते हैं और उसका उपयोग बाद के अधिगम को बढ़ाने के लिए कैसे किया जाता है। एक अन्य लेख में इस बात का वर्णन किया गया है कि परिवर्तन लाने, उसे बनाए रखने और उसे सर्वव्यापी बनाने में बहुत परिश्रम करना पड़ता है; इस लेख में वर्णित मामले में प्रयोग, चिन्तन, समर्थन और कार्यप्रणाली का निरन्तर नवीनीकरण करने के लिए एक चौथाई सदी का समय लगा।

चौथा कारण, अधिगम में बच्चों की सभी क्षमताओं का उपयोग होता है जैसे कि शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक। शिक्षकों ने इस बात का विवरण भी दिया है कि कैसे सिर्फ़ दृष्टिकोण में विचारपूर्ण बदलाव लाकर बच्चों को कक्षा की गतिविधियों में शामिल किया जा सकता है।

इस अंक में ऐसे लेख भी हैं जो लैंगिक असमानता की समस्या पर चर्चा करते हैं। यह इतनी व्यापक है कि इस पर तब तक किसी का ध्यान नहीं जाता जब तक कि इस पर खुली चर्चा न हो। साथ ही इनमें अल्पसंख्यक समूहों को शिक्षा उपलब्ध कराने के प्रयासों पर भी बात की गई है जिसके कारण स्कूल में इन बच्चों के लिए एक नई दुनिया के द्वार खुल रहे हैं। लेखकों ने अपने उन सफल प्रयासों का ज़िक्र भी किया है जिसमें उन्होंने पूर्ण समावेशन और व्यक्तिगत भागीदारी के माध्यम से अधिगम को सम्भव बनाया। अँग्रेज़ी भाषा को बहुत लम्बे समय तक विद्वानों की भाषा के रूप में सम्मान दिया जाता रहा है। यह स्पष्ट किया गया है कि यह भी एक कौशल है और यदि सही दृष्टिकोण और तरीक़ों का उपयोग किया जाए तो अँग्रेज़ी सीखना आसान है। एक अन्य लेख, पठन और विभिन्न परिवेशों को जानने-समझने से उत्पन्न होने वाले उत्साह

के माध्यम से भाषा-शिक्षण के बारे में बताता है।

भाग 1 की ही तरह इस अंक में भी यही बात सामने आती है कि सारा मामला बच्चों के सीखने और सीखने की प्रक्रिया में आनन्द लेने पर केन्द्रित है न कि औपचारिक शिक्षा प्राप्त करने पर। ख़ुद पर विश्वास करना सीखना, सम्मान पाना, इस बात के लिए आवश्यक समर्थन और आश्वासन प्राप्त करना कि दूसरे के विचारों को सीखने के लिए ख़ुद को बदलने की ज़रूरत नहीं है – यह सभी अनुभव, अधिगम को बढ़ावा देते हैं। अपनी वैयक्तिकता को बनाए रखना पूरी तरह से स्वीकार्य है फिर चाहे वह अधिगम की शैली ही क्यों न हो।

इस अंक के बारे में हमारी ख़ुशी की एक और वजह यह है कि इसमें हमारे नए फीचर - पत्र, सम्पादक के नाम, की शुरुआत हुई है और इसमें हमने अपने पाठकों से प्राप्त पत्रों में से कुछ चयनित पत्र प्रस्तुत किए हैं। हमें उम्मीद है कि इससे और अधिक पाठक हमें पत्र लिखने के लिए प्रोत्साहित होंगे।

प्रेमा रघुनाथ
मुख्य सम्पादक
prema.raghunath@azimpremjifoundation.org
अनुवाद : नलिनी रावल

इस अंक में

आदिवासी स्कूली शिक्षा में स्वत्व और पहचान का पुनर्निर्माण 03
अमन मदान

नवाचारी प्रक्रियाएँ ताकि हर बच्चा सीख सके 07
अनिल सिंह

विभेदित शिक्षण : एक ही माप सबके लिए उचित नहीं 12
अंकुर मदान

बच्चों की ऊर्जा को जीवन्त करना और मस्तिष्क को कार्यरत रखना 16
आशा सिंह

यह समझना कि बच्चे कब और कैसे सीखते हैं 21
रितिका गुप्ता

स्कूली बच्चों की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ पूरी करना 26
श्रीलता राव शेषाद्रि

बच्चे टीएलएम से आकर्षित होते हैं, जैसे तितलियाँ बगीचे से 31
आदित्य गुप्ता

अधिगम के लिए मज़ेदार तरीक़ों का उपयोग 34
अंकित शुक्ला

बहुभाषी सन्दर्भ में सीखना 36
बिनय पटनायक

अँग्रेज़ी सभी के लिए : पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए कार्यक्रम 40
चन्द्रा विश्वनाथन

बच्चे 'भाग' से क्यों डरते हैं 46
गोमती राममूर्ति

बँधे इक डोरी से : बच्चे, समुदाय और शिक्षक 49
जगमोहन सिंह कठैत

सम्बद्धता के शिक्षणशास्त्र का विचार : एक रणनीति 53
जोयिता बनर्जी

भाषा और कला हस्तक्षेप : निज़ामुद्दीन मॉडल 56
ज्योत्सना लाल और हैदर मेहदी रिज़वी

नशे पर चर्चा : स्कूल से बाज़ार तक 60
खिलेन्द्र कुमार साहू

भारतीय शिक्षा प्रणाली में ख़ुशी की किरण? 62
कृति गुप्ता

इस अंक में

अँग्रेज़ी सीखना आसान बनाएँ 66
पौलमी सामन्त

शून्य अंक प्राप्त करने वाले समूह पर ध्यान देना 68
रश्मि पालीवाल

पूर्व-प्राथमिक कक्षा में भाषा -शिक्षण : पढ़ना और लिखना 73
रोशनी देवांगन

प्रारम्भिक भाषा का शिक्षण और साक्षरता : प्रासंगिकता का प्रश्न 76
शैलजा मेनन

होमवर्क बनाम हाउसवर्क : कुछ बच्चे दोनों को कैसे सम्भालते हैं 81
शान्ता के.

प्रत्येक बच्चे को स्कूल में लाना 83
शिवानी तनेजा

पाठ्यचर्या सम्बन्धी हस्तक्षेप के माध्यम से सामाजिक दूरी को पाटना 88
शुभ्रा चटर्जी

लड़कियों की शिक्षा में मिशनों की भूमिका 92
श्रीजिता चक्रवर्ती

हमें अनुक्रियाशील स्कूलों की आवश्यकता क्यों है ! 95
सुबीर शुक्ला

शिक्षामित्र : एक प्रायोगिक स्कूल और संसाधन केन्द्र 99
सुदेशना सिन्हा

द सेंकेड सेक्स यानी आधी आबादी : एक ग्रामीण कक्षा में लिंगभेद पर चर्चा 103
सुनील कुमार

प्रयोग करके सीखना : चीज़ें डूबती या तैरती क्यों हैं! 105
उमाशंकर

नली-कली : सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की ओर एक क़दम 107
उमाशंकर पेरिओडी

क्या कौशल-समावेशी शिक्षा सभी के लिए स्कूली शिक्षा सम्भव करेगी? 111
वी. शान्ताकुमार

बच्चों का साहित्य और बाल-केन्द्रित अभ्यास 114
वर्तुल ढौंडियाल

पत्र, सम्पादक के नाम 117

आदिवासी स्कूली शिक्षा में स्वत्व और पहचान का पुनर्निर्माण

अमन मदान

कक्षा के दैनिक जीवन-अनुभवों के समाजशास्त्रीय अध्ययन ने हमारी इस समझ को समृद्ध किया है कि विद्यार्थी कैसे सीखते हैं, या नहीं सीखते। बच्चे यांत्रिक जीव नहीं हैं। वे शिक्षकों और स्कूली विषयों से सम्बद्ध अपनी भावनाओं और विचारों को सामाजिक अन्त:क्रियाओं के सिलसिलों के माध्यम से निर्मित करते हैं। यह तो समाज में होने वाले अनुभव ही हैं जो एक बच्चे को यह महसूस करने की ओर ले जा सकते हैं कि भूगोल बोरियत पैदा करने वाला, जबकि इतिहास एक रोचक विषय है। जिस बच्ची के घर में वही भाषा बोली जाती है जो स्कूल में प्रयोग होती है और घर में इतिहास से सम्बद्ध वैचारिक चर्चा और बहस भी होती है, स्कूल में भी इतिहास उस बच्ची का ध्यान आकर्षित करेगा। वह शिक्षक और कक्षा के सामने अपनी बात रख सकेगी और शायद ऐसी बातें भी करेगी जिनके बारे में अन्य लोगों को जानकारी न हो, और इस प्रकार वह बाक़ी कक्षा का आदर भी जीत पाएगी। उसका आत्म-सम्मान बढ़ेगा। लेकिन जिस बच्चे के परिवार में कक्षा में इस्तेमाल होने वाली भाषा का प्रयोग नहीं होता, उसकी हालत ठोकर खाते, अन्धेरे में हाथ-पैर मारने वाले व्यक्ति जैसी होगी। मिसाल के तौर पर, उसने अगर *आर्यभट्ट* के बारे में पहले नहीं सुना होगा तो शायद उसे चुप्पी साधनी पड़ेगी और मुमकिन है कि वह बाक़ी कक्षा की उत्साह भरी बातों के बीच बेइज़्ज़त भी महसूस करे।

इस तरह की अन्तःक्रियाओं में निर्मित होने वाले अर्थ और भावनाएँ धीरे-धीरे एकत्र होते रहते हैं और इन्हीं से स्कूल तथा उसमें प्राप्त होने वाले अलग-अलग तरह के ज्ञान के बारे में विद्यार्थी का रवैया आकार लेता है। शिक्षकों और शिक्षाकर्मियों के लिए चुनौती यह है कि कक्षा में होने वाली अन्त:क्रियाओं तथा अर्थों को इस तरह रूप-आकार दिया जाए कि एक बच्चे के ज्ञानार्जन को प्रोत्साहित और समृद्ध किया जा सके। इसी के साथ उन्हें इस बारे में भी सावधान रहना होगा कि ऐसे अर्थों और अन्त:क्रियाओं का निर्माण न हो जिनसे बच्चा अन्तर्मुखी हो कर अपने ही खोल में चला जाए और उसका सीखना बन्द हो जाए।

विद्यार्थियों के दिन-प्रतिदिन के जीवन और कक्षा को समझने के लिए समाजशास्त्र तथा मानव-विज्ञान *(एंथ्रोपॉलजी)* में कई सैद्धान्तिक दृष्टिकोण विकसित किए गए हैं। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण दुनिया को देखने का एक तरीक़ा होता है जिसमें विशिष्ट, अवधारणाएँ और क्या हो रहा है या क्या नहीं हो रहा है इसकी कल्पना के अनेक तरीक़े शामिल रहते हैं। सैद्धान्तिक नज़रियों की मदद से हम भी वह सब देखना शुरू कर सकते हैं जिसकी तरफ़ पहले हमारा ध्यान नहीं गया था। इस लेख में एक प्रमुख सैद्धान्तिक नज़रिए की रूपरेखा दी गई है। साथ ही नीलगिरि पहाड़ियों के आदिवासी बच्चों के साथ 'आदिवासी मुनेत्र संगम' के काम की चर्चा यह दर्शाने के लिए की गई है कि यह काम, शिक्षा की चुनौतियों को समझने में हमारे लिए किस तरह मददगार है।

आदिवासी मुनेत्र संगम

पृष्ठभूमि और इतिहास

'आदिवासी मुनेत्र संगम' नीलगिरि के जंगलों और उसके आस-पास के आदिवासियों के साथ कई दशकों से काम कर रहा है। यहाँ पर पाँच जनजातियाँ हैं पनिया, बिट्टकुरुम्बा, मुल्लुकुरुम्बा, कट्टुनायका, इरुड़ा। पहले उनका जीवनयापन शिकार करके, जंगली फलों को एकत्र करके तथा खेत और बागानों में काम के आधार पर होता था। जंगल उनके जीवन का अभिन्न अंग थे; उन्हें इनसे भौतिक तथा आध्यात्मिक, दोनों तरह का सहारा मिलता था। फिर तमिलनाडु, केरल और श्रीलंका से बाहरी लोगों के बड़ी तादाद में आने से वे जंगलों में और गहरे धकेल दिए गए। जंगलों के सिकुड़ने से हालात और अधिक निराशाजनक हो गए और फिर सरकार ने जंगलों में जाने की इजाज़त पूरी तरह बन्द कर दी। इस इलाके के आदिवासियों में कुपोषण और निराशा तथा विषाद ने अपने पाँव जमा लिए। 1980 के दशक में *एक्शन फ़ॉर कम्युनिटी ऑर्गनाइज़ेशन, रिहैबिलिटेशन एण्ड डेवलपमेंट(अकॉर्ड)* ने यहाँ काम करना शुरू किया और 'आदिवासी मुनेत्र संगम' ने ज़मीन की माँग तथा जंगलों के इस्तेमाल के अधिकार को लेकर आदिवासियों को लामबन्द करना शुरू किया। इन्होंने पिछले कई सालों के दौरान आदिवासी संस्कृति को मज़बूती देने और समृद्ध करने के लिए काम किया है और साथ ही जंगलवासियों को शहरी लोगों और सरकार का सामना करने में मदद की।

'आदिवासी मुनेत्र संगम'(एएमएस) का मानना है कि आजीविका तथा गरिमा के लिए किए जा रहे आदिवासियों के संघर्ष में संस्कृति का केन्द्रीय महत्त्व है। इसलिए शिक्षा एक महत्त्वपूर्ण सरोकार है। वयस्क होने की प्रक्रिया की बात हो या फिर अपनी दुनिया में पूर्ण तौर पर हिस्सेदार होने की

बात, इस सम्बन्ध में आदिवासियों के अपने तौर-तरीक़े रहे हैं। मगर उनके इन पुराने तौर-तरीक़ों का सामना अब एक बहुत ही अलग तरह की दुनिया से हो रहा है। तमिलनाडु की सरकार द्वारा स्थापित स्कूलों में उनके बच्चे ख़ुद को अलग-थलग और खोया हुआ महसूस करते रहे हैं। हैरत की बात नहीं है कि उनमें से कुछ ही थे जो स्नातक स्तर तक पहुँच कर अपनी शिक्षा पूरी कर पाते थे।

एएमएस के दो शिक्षाविदों (रामा शास्त्री तथा बी.रामदास) ने शुरुआत में अपने बच्चों के लिए, और फिर कार्यकर्ताओं के बच्चों के लिए, एक वैकल्पिक स्कूल स्थापित किया। इस स्कूल को 'आदिवासी मुनेत्र संगम' ने अपने हाथ में ले लिया ताकि स्कूली शिक्षा के एक ऐसे मॉडल को बढ़ावा दिया जा सके जो आदिवासियों को सम्मान और ताक़त प्रदान करे। अब यह शिक्षकों के प्रशिक्षण तथा मौजूदा सरकारी और निजी स्कूलों में हस्तक्षेप के लिए 'आदिवासी मुनेत्र संगम' के प्रयासों का केन्द्र बन गया है।

प्रतीकात्मक अन्तःक्रियावाद

प्रतीकात्मक **अन्तःक्रियावाद (symbolic interactionism)** के सिद्धान्त के मुताबिक़ सब इन्सान इस संसार में अन्तर्व्यवहारों/संवाद-प्रक्रियाओं के माध्यम से बढ़ते और विकसित होते हैं। हम अपने माता-पिता, दोस्तों आदि के साथ अन्तःक्रिया करते हुए अपना एक *स्वत्व ('सेल्फ़')* विकसित करते हैं। हम ख़ुद के भीतर झाँकना शुरू करते हैं और अपने इस स्वत्व से परिचित होते हैं। यह परिचय जन्म के समय सम्पूर्ण तौर पर अस्तित्व में नहीं होता, और न ही यह अपने आप विकसित होता है। बल्कि यह बदलता रहता है और सामाजिक अन्तर्व्यवहार के ज़रिए आकार पाता है। अपने माता-पिता, पड़ोसियों, दोस्तों, शिक्षकों आदि के सन्दर्भ में दुनिया में हमारा स्थान क्या है, यह हम उनके साथ अपनी अन्तःक्रियाओं के माध्यम से जान पाते हैं। यह एहसास धीरे-धीरे विकसित होता है। एक परिवार में बड़ा होने वाला शिशु धीरे-धीरे ख़ुद को एक 'लड़की' के रूप में देखना शुरू करता है। ख़ुद के बारे में यह एहसास यहाँ से पैदा होता है कि माता-पिता उस *स्वत्व* को किस तरह से देखते हैं और उसे क्या नाम देते हैं,कैसे इस *स्वत्व* का खेलना गुड़ियों के साथ होता है न कि बन्दूकों के साथ। हौले-हौले शिशु के स्वत्व में एक *लड़की* होने का एहसास पैदा होने लगता है। स्वत्व की इस तरह की व्याख्या आगे चल कर अन्य अन्तःक्रियाओं तथा किस तरह का व्यवहार करना है या नहीं करना है सम्बन्धी चयन को भी आकार देती है। हमारी पहचान और स्वत्व तयशुदा नहीं हैं; वे सामाजिक अन्तःक्रिया में से निकल कर आते हैं।

ख़ासतौर पर, यह स्वत्व, स्थितियों को हमारे द्वारा दिए गए अर्थों में से उभरता है। मिसाल के तौर पर, शिक्षक के साथ विद्यार्थी के रिश्ते को ही लीजिए। विद्यार्थी के तौर पर हम कभी भी पूरी तरह से नहीं समझ पाते कि शिक्षक हमें किस तरह से देखता है, और उसे हम केवल प्रतीकों या संकेतों के माध्यम से देखते हैं। एक आदिवासी बच्चा किन्हीं विशेष प्रतीकों या संकेतों से परिचित होता है और उनके माध्यम से वह समझ पाता है कि उसके बड़े उसकी ओर 'स्नेहपूर्वक' देख रहे हैं। स्नेह के प्रतीकों या संकेतों में कुछ विशेष शब्द, इशारे, स्पर्श आदि शामिल रहते हैं। जातीय समाज द्वारा नियंत्रित -न कि जनजातियों द्वारा नियंत्रित - किसी स्कूल में, सम्भावना है कि ऐसे विद्यार्थी को इन प्रतीकों या संकेतों का अभाव महसूस हो। इससे बच्ची यह निष्कर्ष निकालने लगती है कि उसे स्कूल में 'स्नेहिल सराहना' नहीं मिलती। मुमकिन है कि उसे ऐसे स्कूल में जाना अच्छा न लगे और जब वह वहाँ हो तब भी ख़ुद में ही सिमटी रहे। सी.एच.कूलि (C.H.Cooley)इस प्रक्रिया को स्वत्वनिर्माण का आत्म-दर्पण (lookingglass) वाला रास्ता कहते हैं : हम इस बात की कल्पना करते हैं कि अन्य लोग हमें कैसे देख रहे हैं। इसी समझ के आधार पर हम अपनी प्रतिक्रियाएँ निर्मित करते हैं। और यह समझ प्रतीकों पर निर्भर करती है और उन प्रतीकों पर चिन्तन के माध्यम से हम अपनी भावनाएँ विकसित करते हैं और चुनाव करते हैं कि भविष्य में हमें कैसा व्यवहार करना है। अपनी पहचान और स्वत्व को निर्मित करने के लिए संकेतों या प्रतीकों के साथ हमारी अन्तःक्रिया पर ज़ोर देने वाले इस नज़रिए को *प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया* कहा जाता है।

प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया के सिद्धान्तकारों के मुताबिक़ एक अच्छा शिक्षक बनना सीखना है तो इसका एक महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि प्रतीकों या संकेतों को उस तरीक़े से इस्तेमाल करना सीखा जाए जिससे विद्यार्थी परिचित हों और जिसे वे समझ सकें। उदाहरण के लिए, अगर मैं विद्यार्थियों को बताना चाहता हूँ कि उस दिन की कक्षा और विषय, बाक़ी सब कुछ समझने की कुंजी है, तो मुझे सही प्रतीक तलाशने होंगे – इशारे, बोलने का लहजा, शब्द, ब्लैकबोर्ड का काम आदि – और इन्हें इस तरह इस्तेमाल करना होगा कि वे समझ पाएँ। इसके लिए एक शिक्षक के तौर पर मुझे भी उनके संकेतों या प्रतीकों को जानना होगा। हो सकता है कि मैं अपनी बात इस तरह से कहूँ कि विद्यार्थियों तक उसकी प्रतिध्वनि न पहुँचे और फिर वे मेरी ओर ध्यान ही न दें। मैं विद्यार्थियों पर निष्क्रिय और मन्दबुद्धि होने का दोष भले ही लगा दूँ मगर असल में तो यह मेरे द्वारा इस्तेमाल किए गए संकेतों या प्रतीकों की असफलता थी।

अच्छा पढ़ाना सीखने का एक बड़ा हिस्सा है यह पहचानना शुरू करना कि कौन-से प्रतीकों या संकेतों को विद्यार्थी समझते हैं और फिर उनमें से सबसे प्रभावशाली प्रतीकों

का चुनाव कर,उनका इस्तेमाल करना। जब विद्यार्थी मेरी कक्षा में दिलचस्पी लेते हुए प्रतिक्रिया देने लगते हैं (या मैं ऐसे प्रतीक या संकेत देखने लगता हूँ जो मेरे ख़याल में दिलचस्पी का प्रतिनिधित्व करते हैं) तो वह मेरे स्वत्व को आकार देने लगता है। मैं स्वयं को एक क़ाबिल और गर्वित शिक्षक के रूप में देखने लगता हूँ। हम हमेशा संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से अन्तःक्रिया करते रहते हैं और इस प्रक्रिया का अध्ययन सीखने-सिखाने के लिए महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टियाँ प्रदान करता है।

प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया में स्वायत्तता

स्वत्व का निर्माण सामाजिक अन्तःक्रियाओं के माध्यम से होता है मगर ऐसा यांत्रिक तरीक़े से नहीं होता। अन्य लोग हमें जिस तरह देखते हैं, हम उसे हमेशा स्वीकार नहीं करते। जब किसी प्रभावशाली जाति का एक शिक्षक एक आदिवासी बच्चे को तिरस्कार से देखता है, ऐसे भाव से देखता है मानो वह एक बिल्कुल फ़िज़ूल विद्यार्थी हो जिसे स्कूल आना ही नहीं चाहिए था, तब मुमकिन है कि बच्चा उस भाव के अर्थ को समझ ले। फिर बच्चा अपने मन में उन अर्थों को सुलझाने की कोशिश करता है और इस पर भी विचार करता है कि उसे कैसा महसूस होना चाहिए। वह ख़ुद के बारे में वैसा ही सोचना शुरू कर सकता है: मैं फ़िज़ूल हूँ, मैं ग़लत जगह पर आ गया हूँ आदि, आदि। या वह एक और व्याख्या निर्मित कर सकता है : मुझे यहाँ पर मौजूद अन्य बच्चों की तरह होना होगा, मुझे शिक्षक की स्वीकृति, उस का अनुमोदन हासिल करना चाहिए। या एक और ही व्याख्या : मेरे साथ यहाँ ग़लत हो रहा है; शिक्षक मुझे मेरे स्थान से वंचित कर रहा है।

प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया के विचारकों का कहना है कि दूसरे हमें किस नज़र से देखते हैं, यह होने के बाद हमारे भीतर कई संवाद चलते हैं। यह आन्तरिक वार्तालाप ही वह स्थल होते हैं जहाँ हम अलग-अलग प्रतिक्रियाओं को चिह्नित करते और उन्हें रचते हैं तथा उन्हीं के बीच से किसी का चुनाव करते हैं। प्रतीकात्मक अन्तःक्रिया का विचार हमें आन्तरिक संवादों की तरफ़ ध्यान देने की ओर निर्देशित करता है और इस ओर भी, कि वे किस तरह से खुलते और सामने आते हैं। शुरुआत में यह केवल हमारे आन्तरिक जीवन को देखने की ओर प्रवृत्त था मगर आज इस परिप्रेक्ष्य को यह दर्शाने के लिए अनुकूलित कर लिया गया है कि हमारे आन्तरिक जीवन का जुड़ाव सामाजिक जीवन के व्यापक मुद्दों और संघर्षों के साथ है। हमारे आन्तरिक वार्तालाप ही हैं जो हमें बेवकूफ़ औरत या आदिवासी की घिसी-पिटी छवि को चुनौती देने की ओर ले जाते हैं।

विश्वास से भरे स्वत्व का निर्माण करना

विद्योदय स्कूल

स्कूली शिक्षा पर काम करने का'आदिवासी मुनेत्र संगम' का अनुभव दिखाता है कि किस तरह वृहद् समाज के संघर्षों की गूँज कक्षा में और हमारे आन्तरिक संवादों में सुनाई देती है। 'आदिवासी मुनेत्र संगम' की दलील थी कि आदिवासी शालीन और अच्छे लोग हैं। उनके साथ शक्तिशाली समूहों ने अन्यायपूर्ण बर्ताव किया था जिसके चलते उनका शोषण हुआ और वे कंगाल हुए। कई स्थानों पर आदिवासी समूह बनाए गए ताकि वे एक साथ मिलकर अपनी समस्याओं के बारे में चर्चा करें और इन्साफ़ हासिल करने की कोशिश कर सकें। उन्होंने पूरी कोशिश की कि आदिवासियों में आत्म-सम्मान फिर से जागृत हो और वे सक्रिय होकर अपनी स्थितियों को बेहतर बनाने की दिशा में बढ़ें।

इसी प्रक्रिया के चलते *विद्योदय* स्कूल बना ('आदिवासी मुनेत्र संगम' के स्कूल का यही नाम था) और स्थानीय स्कूलों तथा शिक्षा के प्रशासन में हस्तक्षेप किए गए। इससे नीलगिरि के आदिवासी विद्यार्थियों के आन्तरिक संवादों में एक शक्तिशाली वृत्तान्त या आख्यान ने जन्म लिया। इससे,शक्तिशाली समुदायों के शिक्षक उन्हें जिस तरह से देखते थे, उसका सामना करने का रास्ता मिला।

पहचान का पुनर्निर्माण

आदिवासियों की पहचान के पुनर्निर्माण के लिए विद्योदय स्कूल को सजग रूप से आदिवासी शिक्षकों के इर्द-गिर्द निर्मित किया गया,हालाँकि शिक्षकों में ग़ैर-आदिवासी भी शामिल थे। शुरुआत में तो किसी भी आदिवासी के स्नातक न होने के कारण आदिवासी शिक्षक उपलब्ध नहीं थे, इसलिए स्कूल ने शिक्षकों को प्रशिक्षित करने की अपनी स्वयं की प्रक्रिया अपनाई। उन्होंने स्कूल की पाठ्यपुस्तकों का अध्ययन किया और उन्हें अच्छी तरह समझते हुए उन पर अधिकार हासिल किया तथा शिक्षणशास्त्र के बारे में भी सीखा। आदिवासी नेता और वरिष्ठजन उनसे अपने संघर्ष के बारे में तथा उसमें शिक्षा के स्थान के बारे में बात करते थे। उन्होंने इस ख़तरे को रेखांकित किया कि स्कूलों की वजह से आदिवासी समुदाय अपने बच्चों को किसी अन्य संस्कृति के हाथों खो सकता है - मुमकिन है कि पारम्परिक स्कूलों में अच्छा प्रदर्शन करने वाले आदिवासी विद्यार्थी स्वयं को और अपने रिश्तेदारों तथा दोस्तों को भी तुच्छ समझना शुरू कर दें। यह बात बार-बार दोहराई गई कि ऐसी शिक्षा वे अपने बच्चों के लिए नहीं चाहते हैं।

विद्योदय स्कूल ने अपने परिसर में आदिवासी भाषाओं के प्रयोग की खुली इजाज़त दी। इलाक़े के अन्य निजी और सरकारी स्कूलों में आदिवासी बच्चों की भाषा को दबाया जाता था और बच्चों से तमिल में बोलने को कहा जाता था। विद्योदय स्कूल की एक शिक्षक ने मुझे बताया कि जब वह शिक्षक के तौर पर वहाँ आईं तो पहली बार किसी स्कूल में उनकी अपनी भाषा की ध्वनि उनके कानों तक पहुँची। अपनी भाषा का किसी स्कूल में सुनाई पड़ना उनके लिए एक अजीब

और नया अनुभव था। स्कूल की चारदीवारी में अपनी भाषा उन्हें अटपटी-सी लगी,लेकिन इसके बावजूद यह बहुत उचित और सही भी लग रही थी। इस स्कूल में प्रवेश करने पर अब बच्चे को यह संकेत नहीं मिलता था कि अपने घर की भाषा को ले कर उसे शर्मिंदगी महसूस होनी चाहिए। शिक्षण की औपचारिक भाषा तो तमिल ही रही और वह पढ़ाई भी जाती थी मगर बच्चों को उससे धीरे-धीरे ही परिचित करवाया जाता था। मिसाल के तौर पर, शिक्षक विद्यार्थियों से बात करते हुए बताते थे कि किस तरह अलग-अलग आदिवासी भाषाओं में 'लाल' के लिए अलग-अलग शब्द हैं और इसके लिए तमिल शब्द क्या है।

अपने स्वत्व के साथ जुड़ना

प्रतीकात्मक अन्त:क्रिया के विचारक कहेंगे कि इस स्कूल में बच्चे अपने स्वत्व की एक ऐसी समझ बना रहे थे जिसके पीछे कोई ऐसा गहरा राज़ नहीं था जिसे छुपाए जाने और चुप्पी में दबाए जाने की ज़रूरत हो। इसकी बजाय वे अपने स्वत्व के विभिन्न हिस्सों के बीच संवाद निर्मित कर रहे थे। यहाँ अलग-अलग भाषाओं के बीच के सत्ता समीकरणों को नज़रअन्दाज़ नहीं किया गया था। बच्चे और शिक्षक इन अन्तरों के बारे में और तमिल की ताक़त के बारे में भी जानते थे। अँग्रेज़ी भी पढ़ाई जाती थी – और बख़ूबी पढ़ाई जाती थी। यह बच्चे अँग्रेज़ी बोलने की अपनी क्षमता के मामले में स्पष्ट रूप से श्रेष्ठ दिखाई देते थे। उनकी ख़ुद की पहचान, तमिल होने और अँग्रेज़ी वक्ता होने –इन तीनों के बीच सम्बन्ध बनाया जा रहा था। यह नई तरह की पहचान उस शर्मिंदगी महसूस करने वालेतमिल वक्ता की पहचान से अलग थी जो दोस्तों और परिवार के साथ गुप-चुप एक अन्य भाषा में बात करता था। अब बच्चे अपने स्वत्व की एक आत्म-विश्वासी, सक्रिय समझ बनाने की ओर बढ़ रहे थे।

'आदिवासी मुनेत्र संगम' का शिक्षा से सम्बद्ध कार्य एक विशेष स्थिति के साथ जूझता है। इस स्थिति में पारम्परिक स्कूली शिक्षा का नतीजा एक ऐसी पहचान बनने के रूप में सामने आया, जो निम्न और नाकारा होने का एहसास पैदा करती थी। प्रतीकात्मक अन्त:क्रिया का सिद्धान्त हमें एक रास्ता प्रदान करता है जिससे हम समझ पाते हैं कि विद्योदय स्कूल और 'आदिवासी मुनेत्र संगम' की गतिविधियाँ स्वत्व के बारे में बच्चों के ख़्यालों को बदलने में किस तरह योगदान देती हैं। इस सबके चलते एक अलग ही तरह के आन्तरिक संवाद सम्भव हो पाए, जिनसे धीरे-धीरे विद्यार्थियों के कार्यों का सशक्तीकरण हो रहा है,और उन्हें अपनी पहचान की एक नई समझ और संसार में एक नया गरिमापूर्ण स्थान बनाने में भी मदद मिल रही है।

आभार

रामा शास्त्री, बी.रामदास तथा विद्योदय स्कूल के सभी शिक्षकों एवं 'आदिवासी मुनेत्र संगम' के सदस्यों का आभार जिन्होंने यह लेख लिखने में सहयोग दिया।

References and further reading

Blackledge, David A., and Barry Dennis Hunt. "Micro-Interpretive Approaches: An Introduction." In Sociological Interpretations of Education, 233–48. Taylor & Francis, 1985.

Madan, Amman, Rama Sastry, and B. Ramdas. "Social Movements and Educational Change: A Case Study of the Adivasi Munnetra Sangam." Economic & Political Weekly 54, no. 5 (February 2, 2019): 45–52.

Reay, Diane. "Finding or Losing Yourself? Working-Class Relationships to Education." In The Routledge Falmer Reader in Sociology of Education, edited by Stephen Ball. London and New York: Routledge Falmer, 2004.

अमन मदान पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़ में एंथ्रोपॉलजी (मानव-विज्ञान) तथा जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली में समाजशास्त्र के अध्येता रहे हैं। वे अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में पढ़ाते हैं। इन दिनों वे शिक्षा एवं सामाजिक असमानता विषय की पुस्तक पर काम कर रहे हैं। हाल ही में उनकी पुस्तक 'एजुकेशन एण्ड मॉडर्निटी' का प्रकाशन एकलव्य द्वारा किया गया है। उनसे amman.madan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : रमणीक मोहन

नवाचारी प्रक्रियाएँ ताकि हर बच्चा सीख सके

अनिल सिंह

राष्ट्रीय पाठचर्या रूपरेखा 2005 के निर्देशक सिद्धान्त साफ़तौर पर कहते हैं ज्ञान को स्कूल के बाहर के जीवन से जोड़ा जाए, सीखने-सिखाने की प्रक्रिया रटन्त आधारित और यांत्रिक न रहे। पाठ्यवस्तु ऐसी होनी चाहिए जो पाठ्यपुस्तक तक सीमित न रहकर बच्चों के समग्र विकास और उनकी समझ बनाने में सहायक हो। परीक्षाएँ लचीली हों और कोई अलग चीज़ न होकर कक्षा-कक्ष की प्रक्रियाओं में निहित हों। स्कूल का वातावरण व शिक्षण-प्रक्रिया लोकतांत्रिक हो।

शिक्षा के सार्वजनीकरण के बाद स्कूलों में नामांकन अभूतपूर्व ढंग से बढ़ा है। तमाम कारणों से बुनियादी शिक्षा से वंचित रह जाने वाले विविध पृष्ठभूमियों के भिन्न दक्षताओं और क्षमताओं वाले बच्चे स्कूल आ रहे हैं। यह उनका मौलिक अधिकार है कि उन्हें बुनियादी शिक्षा मिले। बदली हुई परिस्थितियों में समावेशीकरण के माध्यम से सभी बच्चों को उनकी पूरी गरिमा के साथ स्कूलों में जगह देने की ज़रूरत है। उन्हें यह विश्वास दिलाने की ज़रूरत है कि वे सब कुछ सीख सकते हैं। यह संवैधानिक मूल्यों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता के लिए भी ज़रूरी है।

आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, समावेशी और लोकतांत्रिक नज़रिए के साथ चलने वाला एक स्कूल है। विगत आठ सालों के अपने सफ़र में, इसमें आने वाले बच्चे विविध सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के साथ ही विभिन्न शारीरिक, मनोवैज्ञानिक और बौद्धिक दक्षता वाले रहे हैं। स्कूल के लोकतांत्रिक, बाल-केन्द्रित और समतामूलक वातावरण में यह सभी बच्चे अपनी-अपनी गति और लय के साथ सीखने की उपलब्धियों तक पहुँचे हैं।

यह अनुभव बताते हैं कि हर बच्चा सीख सकता है। ज़रूरत इस बात की है कि सिखाने से जुड़ी हमारी बेचैनी और चिन्ता कम हो, सिखाने वाले के रूप में हम अपने अधिकार प्राप्त बिन्दु को समय-समय पर स्थगित रख पाएँ, बच्चे की अन्तर्निहित क्षमता और रुझान को भाँप पाएँ, उसके लिए सीखने को अर्थपूर्ण और जीवन्त बना पाएँ, उसके ज्ञान और समझ को तरजीह दे पाएँ और उसकी वैयक्तिकता व गरिमा की रक्षा कर पाएँ। फ़िर सीखने के साधन अपने आप बन जाते हैं।

इस आलेख में मैंने पाँच बच्चों की केस स्टडी के माध्यम से अपनी बात रखी है। उदाहरण तो और भी बहुतेरे हैं जिनमें एक स्कूल के रूप में हमने ख़ुद बहुत कुछ सीखा है। हमने बच्चों की ज़रूरतों के अनुसार अपने सीखने-सिखाने की प्रक्रियाओं में नवाचार किया और बच्चों ने सीखने की उपलब्धियों में ज़बरदस्त प्रगति की।

इनमें से पहला बच्चा रोहित (7 साल) है जो स्कूल के पास ही बनी एक झुग्गी में रहता है। उसके पिता निरक्षर हैं और कॉलोनी में पानी सप्लाई और प्लम्बिंग का काम करते हैं। बड़ा भाई एक होटल में काम करता है। बहन छोटी है पर रोहित उसे स्कूल लेकर आता है। दूसरी बच्ची बिन्दु (8 साल) है जो गाँव से आई है और मराठी भाषी है। उसे हिन्दी समझने और बोलने में बहुत कठिनाई होती है। वह बहुत डरी हुई थी कि यह सब सीख पाना उसके लिए असम्भव-सा है। तीसरा बच्चा कृष्णा (8 साल) है जो अपने दादाजी के साथ भैंसों के तबेले में रहता है। पास के एक स्कूल में जाता था पर अनियमित होने और अपेक्षित रूप से नहीं सीख पाने के कारण उसे स्कूल से निकाल दिया गया है। वह स्कूल तो आता है पर उसका आत्मविश्वास बुरी तरह से टूटा हुआ है। चौथी बच्ची पूजा (9 साल) है जो हियरिंग इंपेयर्ड है। कॉक्लियर इंप्लांट किया गया है, पर सुनने और बोलने दोनों में ही उसे दिक्क़त है। वह एक नामी प्राइवेट स्कूल में पढ़ती थी, लेकिन स्कूल वालों ने कहा कि उसे स्पेशल स्कूल की ज़रूरत है। उसके अभिभावक समझदार थे, एक क्लीनिकल साइकॉलजिस्ट की सलाह पर उसे आनन्द निकेतन में दाख़िल करा दिया। पाँचवीं बच्ची स्वाति (10 साल) है जिसे बोलने में समस्या थी। वह बोलते समय अटकती भी थी और उसके बोल भी साफ़ नहीं थे। उसमें हीनभावना काफ़ी हद तक घर कर चुकी थी और वह ज़रा-ज़रा सी बातों में रो पड़ती थी।

यह पाँचों बच्चे तीन से आठ साल तक आनन्द निकेतन स्कूल में रहे। इन्होंने अकादमिक क्षेत्र में सीखने के साथ ही अपनी इन कमियों से पार पाने में भी ज़बरदस्त उपलब्धि हासिल की। इससे हमारा यह विश्वास दृढ़ होता गया है कि स्कूल और उसकी प्रक्रियाओं में वांछित बदलाव और सुधार करके, अपने नज़रिए को व्यापक बनाकर हम ऐसा वातावरण बना सकते हैं

जिसमें हर बच्चा अपनी गति, लय, रुझान और सीमाओं के साथ अपेक्षित अकादमिक दक्षताएँ हासिल कर सकता है।

सात साल का रोहित अपने साँवले चेहरे और खड़े बालों के कारण बहुत निराश था। वह स्कूल में बहुत सकुचाया और चुप-चुप सा रहता। अनियमित भी रहता। वह स्कूल के पास एक झुग्गी में रहता था। इस बात को लेकर भी उसमें बड़ी हीनता थी क्योंकि सबका आना-जाना उसी रास्ते से था। माँ शहर छोड़कर गाँव में अपने घर चली गई थी। भाई-बहन मिलकर खाना बनाते थे। पिता दिन भर कॉलोनी में पानी सप्लाई और प्लम्बिंग के काम से बाहर ही रहते। बड़ा भाई राज काम पर चला जाता। ऐसे में छोटी बहन को घर में अकेला छोड़कर स्कूल आने की दिक्क़त थी। हमने उससे कहा गया कि वह अपनी छोटी बहन को स्कूल ला सकता है। स्कूल में और भी छोटे बच्चे आते थे। वह उनके साथ खेलती रहती। इससे रोहित स्कूल में थोड़ा नियमित हुआ और अब निश्चिन्तता के साथ रहने लगा।

मैदानी खेलों और पेड़ पर चढ़ने में रोहित की कोई बराबरी नहीं कर सकता था। पढ़ने-लिखने में उसका मन उतना नहीं लगता था। हमने आपस में बात करके रोहित की समस्या को समझने की कोशिश की। हमने कबड्डी की एक टीम बनाई। अब हम स्कूल के बाद आधे घण्टे रोज़ कबड्डी खेला करते। रोहित में गजब की नेतृत्व क्षमता उभर कर आई। इससे बच्चों के बीच न सिर्फ़ उसकी दोस्ती अच्छी बन गई बल्कि उसकी धाक भी जम गई। रोहित अब सबका चहेता था। बच्चे उसकी टीम में होना चाहते थे।

रोहित कई तरह के पशु-पक्षियों की आवाज़ें निकाल लेता था। एक बार स्कूल में बच्चों ने मिलकर एक शॉर्ट फिल्म शूट की। रोहित ने उसके लिए बैकग्राउंड साउंड तैयार किया। जंगल की, पानी गिरने की, अलग-अलग चिड़ियों की, कुत्ते और गाय की, मोटर साइकल, रेलगाड़ी और बर्तनों सहित कई तरह की आवाज़ें तैयार कीं, जिनमें से कुछ तो उसने मुँह से और कुछ विभिन्न तरह के जुगाड़ करके बनाईं।

रोहित का व्यावहारिक गणित अच्छा था। गणित के शिक्षक ने उसके लिए जीवन परिस्थितियों से जुड़ी गणित की समस्याएँ बनाईं जिसे रोहित चुटकियों में हल कर लेता था। नियमित आने, दूसरे बच्चों के साथ अच्छी दोस्ती और तालमेल बनने, शिक्षकों के बीच अपनापन बनने से उसे कक्षाओं में भी मज़ा आने लगा। वह सीखने पर ध्यान भी देने लगा। गणित के साथ ही उसने हिन्दी और अँग्रेज़ी दोनों सीख लीं। सामाजिक विज्ञान की क्लास उसे सबसे अच्छी लगती, क्योंकि उसमें समाज, व्यक्ति, सरकार और उनके आपसी सम्बन्ध रोहित के जीवन से उदाहरण लेकर समझाए जाते। सामाजिक विज्ञान के एक प्रोजेक्ट में उसने स्कूल के पास से गुज़रने वाली नहर की पूरी यात्रा की पड़ताल की। वह कहाँ से निकलती है और कहाँ-कहाँ से होकर गुज़रती है, उसकी कितनी शाखाएँ कहाँ-कहाँ जाती हैं। उसने इस बात का भी अध्ययन किया कि नहर किन महीनों में चलती है और किन दिनों बन्द रहती है, आसपास के कितने किसान उससे सिंचाई का लाभ ले पाते हैं। साथ ही इसका विश्लेषण किया कि उसके ख़ुद के और उस जैसे दूसरे लोगों के जीवन में इस नहर का क्या महत्त्व है, वगैरह। इस प्रोजेक्ट कार्य में रोहित ने सबसे अच्छा प्रदर्शन किया और कक्षा में इसका बेहतर प्रस्तुतीकरण किया।

रोहित स्कूल में छह साल रहा। उसने सभी गतिविधियों में बराबर हिस्सा लिया। झुग्गी हटने के कारण रोहित के परिवार को स्कूल से दूर जाना पड़ा। वहाँ उसने पास के एक सरकारी स्कूल में कक्षा 7 में एडमिशन लिया है। बाद में एक बार वह स्कूल में सभी से मिलने भी आया।

आठ साल की बिन्दु महाराष्ट्र के एक गाँव से आई थी। हिन्दी उसे थोड़ी-थोड़ी तो समझ में आती, पर बोलना उसके लिए बड़ा कठिन था। पढ़ना और लिखना तो न के बराबर ही था। स्कूल में हिन्दी माध्यम की कक्षाओं में शुरू में तो उसे बहुत मुश्किल हुई। वह लगभग एक महीने तक गुमसुम-सी रही, न कुछ बोलती और न ही पूछने पर कोई जवाब देती। बिन्दु की माँ ने बताया कि वह घर जाकर रोती है और कहती है कि उससे यह नहीं हो पाएगा। वह बहुत निराश थी कि वह शायद अब कभी आगे नहीं पढ़ पाएगी।

हम शिक्षकों ने आपस में बात करके उसके लिए कुछ योजनाएँ बनाईं। हमारे एक शिक्षक साथी को मराठी आती थी। उनको ज़िम्मा दिया गया कि वह धीरे-धीरे उससे बातचीत शुरू करें। इस बीच हमने मॉर्निंग गैदरिंग के लिए एक-दो मराठी गीत भी ढूँढ़ लिए और उनको गाना शुरू किया। मॉर्निंग गैदरिंग एक ऐसी प्रक्रिया रही जिसमें काफ़ी संभावनाएँ थीं। एक तो यह बहुत ही अनौपचारिक मंच था, उन्मुक्त था। स्वैच्छिक भी और सामूहिक भी। इसमें सभी के लिए गुंजाइश थी। मराठी गीत की बारी आने पर बिन्दु बहुत ही उत्साह से हिस्सा लेती। इस गीत को लीड करने की ज़िम्मेदारी उसे ही दे दी गई। उसने एक-दो नए गीतों से भी बच्चों का परिचय कराया। पोडियम एक्टिविटी के दौरान सभी बच्चे अपने पिछले दिन के स्कूल-अनुभव को रखते थे। बिन्दु के लिए यह सुविधा रखी गई कि वह अपनी अभिव्यक्ति मराठी में कर सकती है। बाद में हमारे मराठी भाषी शिक्षक साथी हिन्दी अनुवाद करके बाक़ी बच्चों को बता देते।

इसके अलावा कुछ मराठी लोक-कथाएँ खोजी गईं। कक्षा में उन्हें सुनाया गया। बिन्दु ने उनमें से कुछ पहले सुन रखी थीं। उसे बहुत मज़ा आया। उसने अपनी टूटी-फूटी हिन्दी में मराठी मिलाकर कक्षा को उन लोककथाओं के बारे में बहुत सारी नई जानकारियाँ बताईं। इससे बिन्दु का आत्म-विश्वास बढ़ा। अपनी मराठी भाषा को लेकर उसकी हीनता खत्म हुई और बच्चों के साथ उसकी दोस्ती बढ़ी। उसने हिन्दी, गणित, विज्ञान सीखने को एक चुनौती की तरह लिया। स्कूल ने उसकी मदद की और बिन्दु ने उसमें अपनी पहल दिखाई। जल्दी ही बिन्दु न सिर्फ़ हिन्दी बोलने लगी बल्कि हिन्दी पढ़ना और फ़िर लिखना भी सीख गई। स्कूल ने उसे अपनाया और उसने स्कूल को। आगे के सालों में बिन्दु सबसे नियमित और सबसे तेज़ गति से सीखने वाली बच्ची साबित हुई। वह अब अँग्रेज़ी में भी बात कर लेती है। हिन्दी में कहानी और कविताएँ भी उसने लिखी हैं। बिन्दु ने संगीत की नियमित कक्षाएँ की हैं। इससे गाने में उसकी रुचि बनी और बाद में उसने संगीत की विधिवत शिक्षा भी ली। स्कूल में नाटकों में हिस्सा लिया। रिनचिन की लिखी कहानी *'मैं मोर जमीन ला बचावत हों'* के नाट्य मंचन में बिन्दु ने *मति* नाम की लड़की की केन्द्रीय भूमिका बहुत ही ज़बरदस्त ढंग से निभाई। इस वर्ष बिन्दु ने आठवीं कक्षा पास कर ली है। नवीं से आगे की पढ़ाई के लिए वह दूसरे स्कूल में जाने की तैयारी कर रही है।

आठ साल का कृष्णा अपने दादा-दादी के साथ भैंसों के तबेले में रहता है। वह कक्षा तीन तक पास के एक प्राइवेट स्कूल में जाता रहा है। पर अनियमित रहने और अपेक्षित रूप से सीख नहीं पाने के कारण उसे स्कूल से निकाल दिया गया।

सुबह चार बजे उठकर मवेशियों को चारा-पानी देना, साफ़-सफ़ाई करना, और फ़िर दूध दुहने में दादा-दादी की मदद करना, कृष्णा का रोज़ का काम है। सुबह 7 बजे तक कई लोग तबेले पर आकर दूध ले जाते हैं। कइयों के घर तक दूध पहुँचाने कृष्णा साइकल से जाता है। वह 8 बजे तक यह सब काम निपटा लेता है। इसके बाद रसोई में दादी की मदद करता है और जो कुछ भी बन पाता है, उसे खाकर 9.30 तक स्कूल आता है।

जब उसने स्कूल आना शुरू किया, उसे कुछ भी समझ में नहीं आता था। हाँ, उसका व्यवहारिक गणित ठीक था, सो गणित की कक्षा में वह जल्दी काम कर लेता था। विज्ञान के प्रयोगों में उसकी रुचि थी। पर विज्ञान की बातें उसे अटपटी लगतीं। कृष्णा के बारे में हमने स्कूल में अपने साथी शिक्षकों से बात की और उसके लिए अलग से कुछ प्रयास किया जाना तय किया।

पर्यावरण की एक क्लास के लिए बच्चों के एक समूह को पास की डेयरी में जाकर उस व्यवसाय से जुड़े सभी पहलुओं को समझने का काम दिया गया। कृष्णा को इस समूह की मदद करने के लिए कहा गया। कृष्णा ने इस प्रोजेक्ट में सबके साथ बहुत उत्साह से हिस्सा लिया और अपने दादा-दादी से बच्चों की बात करवाई। डेयरी के बारे में ख़ुद भी बहुत-सी जानकारियाँ दीं। गाय-भैंसों को खिलाने वाले चारे-भूसे की मात्रा और लागत, कुल दूध की मात्रा, दूध के भाव से कुल आमदनी, मवेशियों की दवाइयों आदि का खर्च, मेहनत आदि का हिसाब बनवाया। बच्चे भी ख़ुश थे और कृष्णा भी ख़ुश। इससे उसका आत्म-विश्वास बढ़ा और बच्चों से भी दोस्ती बढ़ी। इस तरह स्कूल के नियमित सीखने-सिखाने में भी उसकी भागीदारी बढ़ गई।

कृष्णा घूमते-फ़िरते हुए सड़क से पुरानी मोटर, सेल, वायर और बिजली या इलेक्ट्रोनिक उपकरणों के दूसरे पुर्जे उठा लेता था। एक रोज़ ऐसे ही एक ट्रान्जिस्टर का मदर बोर्ड उसे मिला। वह उसे स्कूल ले आया। टीचर के साथ मिलकर उसने उसके बारे में समझा। स्कूल से नए सेल लेकर कुछ वायरिंग जोड़कर एक पुराने स्पीकर से उसे कनेक्ट किया और उसमें भोपाल का एफएम रेडियो चैनल चलने लगा। उसकी ख़ुशी का ठिकाना न रहा। सब बच्चों ने उसकी वाह-वाह की। स्कूल के आँगन में एक टेबल पर उस ट्रान्जिस्टर को रखा गया। सब बच्चों ने उसके चारों तरफ़ गोल घेरा बनाया और उस दौरान प्रसारित हो रहे गाने सुने। कृष्णा उस दिन का हीरो था।

अगले दिन कक्षा में टीचर ने सबको ट्रान्जिस्टर की कार्य-प्रणाली समझाई। इसके बाद कृष्णा स्कूल में नियमित हो गया। उसे हर चीज़ सीखने की ऐसी ललक लगी कि स्कूल के बाद भी रुककर वह शिक्षकों से बातों को समझता रहता। स्कूल के उमंग विज्ञान मेले में कृष्णा ने तीन तरह की बोट के मॉडल बनाकर प्रस्तुत किए। एक में उसने गुब्बारे से निकलने वाली हवा की विपरीत ताकत की युक्ति लगाई। दूसरी में रबर को लपेट कर उसकी संचित यांत्रिक ऊर्जा से एक चप्पू घुमाया। और तीसरी में एक पुरानी मोटर की मदद से बोट में दोनों ओर दो प्रोपेलर घुमाए। उसने मेले में आए विज़िटर्स के प्रश्नों के जवाब भी बहुत अच्छी तरह से दिए।

इससे शिक्षकों के साथ उसकी दोस्ती और भरोसा भी बढ़ा। स्कूल में सीखने की प्रक्रियाओं में उसकी भागीदारी भी बढ़ी। कृष्णा पिछले चार साल से स्कूल में है। उसने हिन्दी, अँग्रेज़ी सहित गणित, सामाजिक विज्ञान और विज्ञान सभी विषयों में अच्छी प्रगति की है।

नौ साल की पूजा एक हियरिंग इंपेयर्ड बच्ची है। उसके कान

में कॉक्लियर इंप्लांट किया गया है पर सुनने और बोलने दोनों में ही उसे दिक्क़त रही है। जब वह स्कूल आई तो बिल्कुल चुप-चुप रहती थी। मॉर्निंग गैदरिंग में जब सब बच्चे गीत गाते, पूजा सिर्फ़ उन सबकी ओर देखती और कभी बीच-बीच में कुछ शब्द दुहराती। उसे सुबह की यह सभा बहुत भाती। बाक़ी कक्षाओं में उसका बिल्कुल भी मन न लगता था। वह सिर्फ़ आर्ट और क्राफ्ट की क्लास का इन्तज़ार करती। वह एक नामी प्राइवेट स्कूल से आई थी। वह वहाँ की कक्षा-प्रक्रियाओं, कृत्रिम अनुशासन के दबाव और शिक्षकों के बर्ताव से शायद डरी और उकताई हुई थी।

कक्षा में जाने की अनिवार्यता को लेकर हमने उसके ऊपर कोई दबाव नहीं बनाया। वह ज़्यादातर छोटे बच्चों की क्लास में जाकर बैठ जाती। कई बार वह कहानी की किताब लेकर उन्हें कहानी सुनाती। एक-दो महीने के बाद पूजा ने गणित की क्लास में हिस्सा लिया। दरअसल उस रोज़ क्लास में भिन्न (फ्रैक्शन) पढ़ाया जा रहा था। टीचर को पता था कि पूजा को आर्ट एंड क्राफ्ट में रुचि है, तो टीचर ने गत्ते के एक वृत्त में ½, 1/3 और ¼ काटने के लिए पूजा को कहा। पूजा ने फौरन पेंसिल और स्केल की मदद से गत्ते में ½, 1/3 और ¼ की आकृतियाँ खींच दीं। अब टीचर ने कहा कि उन्हें अलग-अलग रंगों से रंग दे ताकि वे समझ में आएँ। पूजा ने बिना देर लगाए यह काम किया। यह उसकी रुचि का काम था। इस काम के मार्फ़त आज उसने गणित की क्लास में रुचि ली और इस गतिविधि के दौरान भिन्न की शुरुआती अवधारणा भी सीख ली। फ़िर तो टीचर ने पूजा को ऐसे और कई सारे काम दिए। समूह में भी काम करने को कहा। इससे उसकी दोस्तियाँ भी बनीं। पूजा ने कुछ काम घर से भी करके लाना शुरू किया।

मॉर्निंग गैदरिंग में सुनने की दिक्क़त के कारण पूजा रुचि होने पर भी उसका पूरा आनन्द नहीं ले पाती थी। शेयरिंग मीटिंग में टीचर्स ने आपस में बात करते हुए इस समस्या को चिन्हित किया। उन्होंने सुबह की सभा में गाए जाने वाले गीतों की ऑडिओ सीडी बनाकर पूजा को दी ताकि वह घर पर इन गीतों को सुन सके। इसके बाद पूजा न सिर्फ़ मॉर्निंग गैदरिंग का मज़ा लेने लगी बल्कि दूसरी कक्षाओं में भी धीरे-धीरे जाने लगी। वह काफ़ी मुखर हुई। उसकी लिखने की आदत में भी ज़बरदस्त सुधार हुआ।

विज्ञान के प्रयोग करने और मॉडल बनाने में वह काफ़ी समय तक क्लास में ही बैठी रहती। वह टीचर से बात करके घर से सेल, मोटर, वायर, चुम्बक लाती थी। उन्हें जोड़कर बिजली के स्विच और चुम्बक के कई सारे प्रयोग करती थी।

बच्चों के साथ ही शिक्षकों के साथ वह अच्छी तरह घुल-मिल गई। सुनने की दिक़्क़त स्कूल में उसके लिए कोई रुकावट नहीं बनी। किसी ने उसकी इस कमी को लेकर न कोई बात की और न ही उसे बाधा माना। वह संगीत की कक्षा में भी पूरी तन्मयता से भाग लेती और गाने याद करती। स्कूल के वार्षिक समारोह में उसने एक नाटक में भी हिस्सा लिया। सामूहिक गीतों की प्रस्तुति में वह बढ़-चढ़कर भाग लेती और बिना हिचक के गाती।

दस साल की स्वाति दिल्ली के नोयडा से ट्रान्सफर होकर भोपाल आई थी। उसे बोलने सम्बन्धी समस्या थी। वह बोलने में काफ़ी अटकती थी और इसीलिए बात करने में हिचकती थी। स्कूल के मित्रतापूर्ण और खुले वातावरण में सबके लिए जगह थी। स्कूल में वह जल्दी ही सबसे घुल-मिल गई क्योंकि उसके जीवन में इसकी बहुत कमी थी। स्कूल में किसी ने भी बोलते समय उसके अटकने पर ध्यान ही नहीं दिया। टीचर भी जान-बूझकर स्वाति से सवाल पूछते ताकि वह जवाब दे और बोलने की पहल करते हुए उसका आत्म-विश्वास बढ़े। इसका असर यह हुआ कि स्वाति खूब बोलने लगी। वह कविताएँ बोलती, मॉर्निंग गैदरिंग के गीत गाती। उसकी स्पीच में भी काफ़ी सुधार आया। दरअसल स्वाति कि समस्या यह थी कि इसके पहले उसे बोलने ही नहीं दिया गया था या बोलने पर हतोत्साहित किया गया था।

उसकी माँ ने बताया कि नोयडा के जिस स्कूल में स्वाति पहले पढ़ती थी, वहाँ वार्षिक समारोह के 15 दिन पहले से ही उसे स्कूल आने से मना कर दिया गया था। न तो उसे किसी गतिविधि में हिस्सा लेने दिया गया और न किसी रिहर्सल में आने की इजाज़त थी। इससे स्वाति का आत्म-विश्वास काफ़ी टूट गया। उसमें एक हीनभावना घर कर गई थी, जिसके कारण उसकी बोलने की समस्या और बढ़ गई थी।

यहाँ स्कूल में भाषा-शिक्षण की कक्षा में हर रोज़ पाठ के बाद उसका नाट्य मंचन किया जाता। स्वाति उस हर गतिविधि में हिस्सा लेती। वह स्कूल में नियमित थी। उसने वार्षिक समारोह में भूपेन हजारिका का गीत- *विस्तार है अपार... प्रजा दोनों पार...* गाया। सुनने वाले हैरान थे। उसकी आवाज़ और लय कहीं भी नही अटकी!

यह बच्चे अनन्त सम्भावनाओं से भरे हुए बच्चे हैं। हर बच्चे में एक से बढ़कर एक प्रतिभा और क्षमता है। कभी सामाजिक-आर्थिक तो कभी शारीरिक-मानसिक कारणों से यह सीखने की प्रक्रिया में अटकते हैं। स्कूल की ज़िम्मेदारी है कि इन सम्भावनाशील बच्चों की ज़रूरतों और सीमाओं को पहचानकर उनके लिए जगह और अवसर बनाएँ, ताकि वे अपनी क्षमताओं को उभार पाएँ, बाक़ी सबके साथ बराबरी से चल पाएँ, अपनी समझ और दक्षता पर भरोसा कर पाएँ और

वह सब सीख पाएँ जो उनके आस-पास उपलब्ध है और जो सीखने की उनसे अपेक्षा की जा रही है।

स्कूल की परिपाटी में उदारता, लचीलापन, धैर्य तथा समतावादी एवं मानवीय नज़रिया लाने की ज़रूरत है। तब फ़िर हर बच्चा सब कुछ सीख सकता है।

सुरक्षा कारणों से बच्चों के नाम बदल दिए गए हैं।

अनिल सिंह पिछले 15 वर्षों से शिक्षा, ख़ासकर स्कूली शिक्षा, के क्षेत्र में सक्रिय हैं। भाषा-शिक्षण के साथ-साथ वे बच्चों की दैनिक गतिविधियों में थिएटर का भी समावेश करते हैं। वे कहानियाँ सुनाने में विशेष रूचि रखते हैं। उनके कक्षा अनुभव एवं अन्य शैक्षिक मुद्दों पर लिखे लेख नियमित रूप से प्रकाशित होते हैं। वर्तमान में वे आनन्द निकेतन डेमोक्रेटिक स्कूल, भोपाल के साथ शिक्षा के वैकल्पिक मॉडल पर काम कर रहे हैं। उनसे bihuanandanil@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।

'शिक्षा की भूमिका को साक्षरता और किताबी ज्ञान से आगे व्यक्ति-निर्माण तक देखना अधिक महत्त्वपूर्ण है। देखने की ऐसी नज़र तो लोगों के बीच अन्तःक्रिया करके ही आ पाती है, न केवल नज़र आ पाती है बल्कि बच्चों के साथ काम क्या करना है और कैसे करना है, इनके बीजों का अंकुरण भी हो पाता है जब अभिभावकों के साथ हमारे जीवन्त सम्बन्ध होते हैं।'

- जगमोहन सिंह कठैत 'बँधे इक डोरी से : बच्चे, समुदाय और शिक्षक' पेज 49

विभेदित शिक्षण | एक ही माप सबके लिए उचित नहीं

अंकुर मदान

ब्रह्मकमल, गुलाब, सूर्यमुखी...यह सभी आमतौर पर उत्तराखण्ड में पाए जाने वाले फूलों के नाम हैं। नहीं, यहाँ हम माध्यमिक विद्यालय की वनस्पति विज्ञान की कक्षा की बात नहीं कर रहे हैं। यह सारे नाम तो कक्षा पाँच के बच्चों के समूहों को दिए गए हैं। यह सरकारी स्कूल उत्तराखण्ड के एक दूरस्थ गाँव में स्थित है और यहाँ की एक शिक्षिका ने समूहों को यह नाम दिए हैं। समूह के सदस्यों के रूप में बच्चों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी शिक्षिका द्वारा दिए गए कार्यों को साप्ताहिक या द्विसाप्ताहिक आधार पर पूरा करें। इसमें विभिन्न प्रकार के कार्य दिए जाते हैं जैसे कहानी की पुस्तक को एक साथ पढ़ने में एक-दूसरे की मदद करना, कहानी को दर्शाने वाला चार्ट बनाना, उसे रोल-प्ले के रूप में अभिनीत करना, मौलिक कहानी लिखना या प्रश्नों के उत्तर देना और पाठ्यपुस्तक के पाठ से कठिन शब्दों के अर्थ ढूँढ़ना।

कार्य पद्धति

इन कार्यों को रेण्डम रूप से नहीं दिया जाता है और न ही बच्चों को मनमाने ढंग से समूहों में रखा जाता है। बच्चों के लिए समूह और कार्य निर्धारित करने से पहले शिक्षिका प्रत्येक बच्चे के सीखने के स्तर, निर्धारित समय में उसकी प्रगति, रुचि का स्तर और साथियों के साथ उनके सम्बन्ध आदि पर ध्यान देती हैं। जो लेबल मिलता है उस पर बच्चों को गर्व होता है और उन्हें अपने समूह के साथियों के प्रति अपनेपन और ज़िम्मेदारी का अहसास होता है।

शिक्षिका निर्धारित कार्यों में बच्चों की प्रगति का दैनिक/साप्ताहिक रिकॉर्ड रखती हैं और उसके आधार पर समूहों और कार्यों में बच्चों के पुनर्वितरण पर विचार करती हैं। शिक्षण के इस रूप के लिए सहपाठी-अधिगम (peer learning) महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसमें जिन बच्चों के सीखने का स्तर थोड़ा कम होता है, उन्हें अपने समूह के उन बच्चों से सीखने का अवसर मिलता है जिनके सीखने का स्तर उच्च है। किसी दूरदराज गाँव में स्थित एक सरकारी स्कूल की ऐसी कक्षा जिसमें बच्चों की संख्या बहुत अधिक हो, मिश्रित-क्षमताओं वाले बच्चे हों और अच्छे संसाधन न हों, ऐसी जगह से दूसरों को प्रेरित करने वाले 'अच्छे शिक्षण अभ्यास' के उदाहरण मिलने कि उम्मीद शायद ही कोई करे, लेकिन यह कक्षा ठीक वैसी ही है।

व्यक्तिगत आवश्यकताओं का ध्यान रखना

ऊपर उल्लिखित शिक्षिका ने जिन विधियों का पालन किया है, वे वास्तव में विभेदित शिक्षण के बहुत अच्छे उदाहरण हैं। यह शिक्षण का एक ऐसा रूप है जो नियमित कक्षाओं में बच्चों के सीखने की व्यक्तिगत ज़रूरतों को पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार की रणनीतियों का उपयोग करता है।

उत्तराखण्ड के स्कूल की शिक्षिका निश्चित रूप से उस समय विभेदित शिक्षण के बारे में नहीं जानती थीं। जब उन्होंने अपनी कक्षा में बच्चों को बुनियादी साक्षरता कौशल हासिल करने में मदद करने के लिए उपाय खोजने शुरू किए तो उन्होंने देखा कि हालाँकि बच्चे समान उम्र के थे, लेकिन वे सभी अधिगम के विभिन्न स्तरों पर थे। उन्होंने महसूस किया कि वे चाहे कितनी भी 'अच्छी' तरह से क्यों न पढ़ाएँ, लेकिन केवल कुछ बच्चों को ही उससे फ़ायदा होता था। इसलिए वे समझ गईं कि उन्हें ऐसी शिक्षण पद्धतियाँ अपनानी चाहिए जो उनकी कक्षा के सभी बच्चों के सीखने की व्यक्तिगत ज़रूरतों के अनुकूल हों। यही वह मूल आधार भी है जिस पर विभेदित शिक्षण आधारित होता है।

इस लेख में विभेदित शिक्षण (Differentiating Instruction) के प्रमुख सिद्धान्तों का परिचय दिया गया है और भारत में कक्षाओं के लिए इसकी प्रासंगिकता और व्यवहार्यता को दर्शाने के लिए कुछ उदाहरण भी दिए गए हैं।

विभेदित शिक्षण के प्रमुख तत्व

विभेदित शिक्षण इस धारणा को चुनौती देता है कि समान आयु के सभी बच्चे एक ही तरीक़े से सीख सकते हैं और उन्हें एक ही तरीक़े से पढ़ाया जा सकता है। शुरू में कैरल टॉमलिंसन(Carol Tomlinson) द्वारा प्रस्तावित विभेदित शिक्षण ने कक्षाओं की समरूपता के विचार की कटु आलोचना की और शिक्षकों व शिक्षाविदों का ध्यान उस विविधता की ओर खींचा जो दुनिया के हर स्कूल में और हर कक्षा में व्याप्त है।

सभी शिक्षक इस बात से भली-भाँति परिचित हैं कि उनकी कक्षा में बच्चों के सीखने की क्षमता, रुचियाँ, सीखने के प्रति तत्परता और व्यवहारिक व भावनात्मक ज़रूरतें भिन्न-भिन्न होती हैं। बच्चे विभिन्न सामाजिक-

आर्थिक पृष्ठभूमि से भी आते हैं, भाषा को लेकर उनकी प्राथमिकताएँ अलग होती हैं और वे विभिन्न सामाजिक और सांस्कृतिक प्रथाओं का पालन करते हैं। इनमें से प्रत्येक कारक बच्चे की कक्षा में तालमेल बिठाने की क्षमता को प्रभावित करता है, फिर चाहे वह सिखाए जाने वाले पाठ्यक्रम के साथ हो, उनके सामाजिक और भावनात्मक हित से सम्बन्धित हो और या फिर स्कूल में समायोजन करने की बात हो। शिक्षकों के रूप में हम इन अन्तरों को जानते हैं, लेकिन फिर भी हम यह मानते हैं कि बच्चों को पढ़ाने का केवल एक ही तरीक़ा है : हमारा तरीक़ा!

इन मान्यताओं को चुनौती देते हुए, विभेदित शिक्षण, शिक्षकों को सक्रिय रूप से योजना बनाने और शिक्षण, अधिगम व आकलन के लिए ऐसे विभिन्न दृष्टिकोण अपनाने को प्रोत्साहित करता है जो कक्षा में हर बच्चे की सीखने की ज़रूरतों को पूरा करते हों। टॉमलिंसन के शब्दों में, 'विभेदन एक ऐसा कक्षा अभ्यास है जो इस सच्चाई को स्वीकार करता है कि बच्चे अलग होते हैं और प्रभावी शिक्षक वह सब कुछ करते हैं जिससे बच्चे सीख सकें।' (सी.ए. टॉमलिंसन, 2001)

टॉमलिंसन इस बात पर ज़ोर देती हैं कि विभेदित शिक्षण अपने आप में शिक्षण को सिखाने का नुस्ख़ा नहीं है, वरन यह तो एक दर्शन या शिक्षण व अधिगम के बारे में सोचने का एक तरीक़ा है। वे यह भी स्पष्ट करती हैं कि शिक्षण के लिए विभेदित शिक्षण द्वारा निर्धारित कोई सूत्र नहीं हैं; यह तो केवल वे विचार हैं जो शिक्षकों को इस बात के लिए सक्षम करते हैं कि वे अपनी कक्षा के सभी बच्चों की क्षमता का अधिकाधिक संवर्धन कर सकें। विभेदित शिक्षण का सार यह है कि पाठ्यक्रम को जानने-समझने के लिए विद्यार्थियों के लिए विभिन्न अवसरों का सृजन किया जाए और वे किसी एक ही इकाई या पाठ में शिक्षक द्वारा दिए गए कार्य के विभिन्न स्तरों को पूरा करने के माध्यम से अपने अधिगम का प्रदर्शन करें। शिक्षक अपनी कक्षा में सभी बच्चों की व्यक्तिगत क्षमताओं और सीखने की ज़रूरतों का आकलन करके और फिर विषयवस्तु, प्रक्रिया, उत्पाद या परिणाम और *अधिगम के माहौल* को संशोधित करने की दिशा में कार्य करते हैं, जहाँ :

विषयवस्तु से तात्पर्य है वे चीज़ें जिन्हें शिक्षक चाहते हैं कि विद्यार्थी सीखें और इस कार्य को पूरा करने के लिए आवश्यक सामग्री और तरीक़े।

प्रक्रिया अनुदेशात्मक रणनीतियों का एक सेट है जिसका प्रयोग शिक्षक विषयवस्तु को प्रभावी ढंग से विद्यार्थियों तक पहुँचाने के लिए अपनाते हैं।

उत्पाद या परिणाम वे विविध तरीक़े हैं जिनके माध्यम से बच्चे अपने अधिगम का प्रदर्शन करते हैं।

अधिगम के माहौल का अर्थ है शिक्षक द्वारा अपनी कक्षा में एक सम्मानजनक और सुरक्षित वातावरण तैयार करना जिसमें सभी बच्चे अपनी व्यक्तिगत गति और अधिगम के स्तर के अनुसार, कक्षा के साथ सार्थक रूप से जुड़ सकें।

यह सब करने के लिए शिक्षक अपनी कक्षा के सभी विद्यार्थियों के सहयोगी समर्थन पर बहुत अधिक निर्भर करते हैं, विद्यार्थियों की पसन्द के अनुसार सामग्री, कार्यों और काम करने की गति में लचीलापन सुनिश्चित करते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वे यह बात भी सुनिश्चित करते हैं कि जिन कार्यों में बच्चे लगे हुए हैं, उन्हें समान रूप से महत्त्वपूर्ण माना जाए और उन्हें अपने साथियों और शिक्षक द्वारा समान रूप से सम्मान मिले।

कक्षा में विभेदित शिक्षण का अभ्यास करना

जैसा कि पहले कहा गया है, विभेदित शिक्षण शिक्षण रणनीतियों का कोई ऐसा नुस्ख़ा नहीं है जिसे कक्षा में सीधे-सीधे अपनाया जा सके। इसके विपरीत विभेदित शिक्षण का सार तो उसके लचीलेपन में है और इसमें शिक्षक की अपनी कक्षा के विद्यार्थियों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पहचानने की क्षमता और उन तरीक़ों को अपनाने की बात भी आ जाती है जिनमें विभेदित शिक्षण के प्रमुख सिद्धान्त सम्मिलित हों। इस भाग में विभेदित शिक्षण तकनीकों के कुछ उदाहरणों का वर्णन किया गया है। इन्हें बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं, शिक्षक के लिए उपलब्ध संसाधनों, कक्षा के आकार और शिक्षक की तैयारी में लगने वाली समयावधि और मात्रा के आधार पर किसी भी कक्षा में लागू किया जा सकता है।

ऐसी ही एक तकनीक है एक ही समय में विद्यार्थियों को विभिन्न कार्यों में संलग्न करना। बच्चों को मिश्रित क्षमता वाले समूहों में बाँटकर शिक्षक ऐसे कार्यों की योजना बना सकते हैं जो विभिन्न रुचि स्तर वाले बच्चों को आकर्षित करें और साथ ही जिन्हें पूरा करने के लिए विभिन्न प्रकार के कौशलों की आवश्यकता हो। बच्चों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है कि वे या तो इन सभी या कुछ कार्यों को अपनी गति से, साथियों के समर्थन के साथ और जब भी वे उन्हें करना चाहें तब करें। उदाहरण के लिए छठी कक्षा में इतिहास के पाठ के लिए शिक्षक बहुस्तरीय कार्यों का एक सेट बना सकते हैं। एक कार्य यह हो सकता है कि बच्चे पाठ्यपुस्तक के पाठ से सम्बन्धित तथ्यों का पता लगाएँ और फिर वे पाठ में बताई गई घटनाओं के कालक्रम का एक अवधारणात्मक मानचित्र तैयार कर सकते हैं। कोई अन्य कार्य ऐसा हो सकता है जिसमें उन्हें किसी विशेष विषय पर पाठ्यपुस्तक के बाहर से अतिरिक्त तथ्यों की खोज करके पूरी कक्षा के सामने उसे

प्रस्तुत करना हो। या फिर वे पाठ से सम्बन्धित नोट बनाकर उसे संक्षेप में प्रस्तुत कर सकते हैं या विद्यार्थियों को रोल-प्ले या कार्टून स्ट्रिप के रूप में पाठ प्रस्तुत करने के लिए प्रोत्साहित किया सकता है।

इन अलग-अलग कार्यों की योजना बनाकर शिक्षक यह सुनिश्चित करते हैं कि अलग-अलग स्तर की रुचि और क्षमता वाले बच्चों को न केवल उन कार्यों में भाग लेने के अवसर मिलें जिनमें वे सबसे अधिक रुचि रखते हैं, बल्कि वे विभिन्न तरीक़ों से अपने कौशल और क्षमताओं को प्रदर्शित भी कर सकें। कार्यों के साथ बारीकी से जुड़ा हुआ आकलन यह सुनिश्चित करता है कि बच्चों के अधिगम का मूल्यांकन भी अलग-अलग तरीक़ों से किया जाए।

यहाँ इस बात का ध्यान रखना महत्त्वपूर्ण है कि हालाँकि शिक्षक को इस तरह की योजना बनाना और उसे पूरा करना कठिन लग सकता है, लेकिन वास्तव में यह उतना कठिन नहीं है। शुरू में कुछ नियोजन और तैयारी की आवश्यकता पड़ सकती है, लेकिन बाद में शिक्षक को ज़्यादा हस्तक्षेप नहीं करना पड़ता क्योंकि इसमें मुख्य बात सहपाठी अधिगम और सहयोग है। जब शुरू में इस तरह के कार्य किए जाते हैं तो कक्षा में थोड़ी अव्यवस्था या अनुशासनहीनता हो सकती है और शिक्षक को इस प्रकार की स्थिति सम्भालने के लिए तैयार रहना चाहिए। पर जब एक बार विद्यार्थी इस प्रकार के कक्षा शिक्षण के अभ्यस्त हो जाते हैं जो उपदेशात्मक (didactic) और शिक्षक-केन्द्रित नहीं है तो वे अपने सीखने की ज़िम्मेदारी लेना सीखते हैं और स्व-अनुशासित हो जाते हैं। एक और ध्यान देने वाली बात यह है कि ऐसे तरीक़े उन कक्षाओं में भी अपनाए जा सकते हैं जो संसाधन की दृष्टि से अधिक समृद्ध नहीं हैं। सीखने के माहौल का निर्माण करने के लिए फर्नीचर की पुनर्व्यवस्था की जा सकती है और विद्यालय में और उसके आस-पास की खाली जगहों का उपयोग किया जा सकता है ताकि ऐसे कार्यों को सफलतापूर्वक किया जा सके।

कक्षा में विभेदित शिक्षण को अपनाना

नीचे कुछ विभेदित शिक्षण सिद्धान्त/रणनीतियाँ दी गई हैं। शिक्षकगण किसी भी विषय में, किसी भी स्तर पर अपने पाठों की योजना बनाते समय इनका ध्यान रख सकते हैं :

प्रमुख अवधारणाओं को पहचानें

यदि किसी विषय से सीखी जाने वाली प्रमुख अवधारणाओं को पहचानकर उसे स्पष्ट कर दिया जाए तो शिक्षक पढ़ाए जाने वाली सामग्री को काफ़ी हद तक कम कर सकते हैं। इससे उन विद्यार्थियों को लाभ होता है जिन्हें बड़े-बड़े पाठों को पढ़ने में कठिनाई होती है जैसे कि अधिगम अशक्तता वाले बच्चे। मुख्य अंशों को चिन्हांकित करना, रेखांकित करना, मुख्य शब्दों को सूचीबद्ध करना और मुख्य विचार वाले फ्लैशकार्ड दिखाना आदि कुछ ऐसे तरीक़े हैं जिनसे हर पाठ आसानी से पढ़ाया जा सकता है।

सामग्री को विभिन्न तरीक़ों से प्रस्तुत करें और अनुभवात्मक अधिगम को प्रोत्साहित करें

शिक्षक-केन्द्रित, व्याख्यान-आधारित शिक्षण में जो समय लगता है, उसे कम करके शिक्षक विषय-सामग्री को अनुकूलित कर सकते हैं और उसे दृश्य, गतिसंवेदी और श्रवण रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं। इसमें मॉडल, वीडियो, चार्ट और पोस्टर या ऑडियो क्लिप आदि शामिल किए जा सकते हैं। बच्चों की रुचि का स्तर और उनके अधिगम की प्रोफ़ाइल अलग-अलग होती है; अतः इन अलग-अलग तरीक़ों का प्रयोग करने से उन्हें अच्छा लगेगा। इससे विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष रूप से सीखने और अपने दम पर चीज़ों का अर्थ समझने का अवसर मिलता है। ऐसा करने का एक तरीक़ा यह हो सकता है कि कक्षा में विभिन्न कोनों पर स्टाल स्थापित किए जाएँ। विद्यार्थियों को एक के बाद एक स्टालों को देखने और प्रदर्शित सामग्री के साथ सक्रिय रूप से जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।

आकलन के लिए विद्यार्थी के अधिगम की गति के अनुसार अलग-अलग रुब्रिक्स बनाएँ

प्रत्येक बच्चे की ताक़त और कमज़ोरियों को समझकर, कमज़ोरी के उस क्षेत्र को विकसित करने पर ध्यान केन्द्रित करके शिक्षक किसी भी प्रकरण के लिए आकलन का एक बहुस्तरीय सेट बना सकते हैं। यह सेट विद्यार्थियों को उनकी तैयारी के स्तर और उनकी अधिगम गति के आधार पर दिए जा सकते हैं जिस पर वे काम करने के लिए सहज हैं। जब बच्चा अधिगम के एक उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है तब उसे अगले स्तर वाला आकलन दिया जा सकता है। सभी विद्यार्थियों द्वारा आकलन के सभी स्तरों को प्राप्त करना आवश्यक नहीं होना चाहिए।

अलग-अलग मात्रा में अधिगम-समर्थन

सीखने की तत्परता और अधिगम के विभिन्न स्तर वाले हरेक बच्चे को शिक्षण और समर्थन की अलग-अलग मात्रा की आवश्यकता होती है। शिक्षक केवल उन विद्यार्थियों को गहन शिक्षण प्रदान करने में अपनी शक्ति का उपयोग कर सकते हैं जिन्हें इसकी आवश्यकता होती है, इस तरह उनके समय और प्रयास की बचत होगी। दूसरे विद्यार्थी, जो स्वयं और सहपाठियों के समर्थन से सीख सकते हों, उन्हें उसी दिशा में प्रोत्साहित करना चाहिए। इस तरह के तरीक़ों से शिक्षकों को

कक्षा में अपने समय का बेहतर प्रबन्धन करने में मदद मिलती है और विद्यार्थियों को स्वतंत्र शिक्षार्थी बनने के लिए प्रोत्साहन मिलता है। इससे बच्चों को समानुभूति विकसित करने और अच्छे सहपाठी- सम्बन्ध बनाने में भी मदद मिलती है।

इस बात को समझना महत्त्वपूर्ण है कि इस तरह के प्रत्येक अभ्यास या अनुशंसा के केन्द्र में समावेशन के लिए एक मजबूत प्रतिबद्धता और यह धारणा निहित है कि हर सन्दर्भ में, बच्चों की क्षमता और रुचियों में व्यक्तिगत अन्तर होता ही है और यही हर कक्षा की अनिवार्य वास्तविकता है।

निष्कर्ष

देश में बहुसंख्यक स्कूलों की ख़राब स्थिति को देखते हुए भारतीय सन्दर्भ में विभेदित शिक्षण के तरीक़ों को अपनाने की व्यवहार्यता के बारे में तर्क दिए जा सकते हैं। किन्तु यह समझना ज़रूरी है कि विभेदित शिक्षण एक बहुआयामी दृष्टिकोण है और कक्षा के शिक्षणशास्त्र को पुन: निर्धारित करने का एक तरीक़ा है; यह कोई निर्विवाद नुस्ख़ा नहीं है। जब बच्चों के सीखने की बात होती है तब हम कहते हैं कि एक ही तरीक़ा सबके लिए ठीक नहीं होता, तो यहाँ पर भी हम अपनी स्थिति यानी कि बहुत सारे बच्चों से भरी हुई और कम संसाधन वाली कक्षाओं के अनुसार विभेदित शिक्षण के सिद्धान्तों का अनुकूलन कर सकते हैं। उत्तराखण्ड के इस स्कूल की कक्षा में उपलब्ध दीवार के हर इंच का, काग़ज़ के हर टुकड़े का और चॉक का उपयोग बच्चों के कार्यों और आकलन के लिए बेहतरीन रूप से किया गया है, यही कारण है कि यह कक्षा अनुकरणीय है और भारत की कक्षाओं को विभेदित शिक्षण के आदर्शों और तरीक़ों को अपनाने के लिए इससे प्रेरणा लेनी चाहिए।

References

Tomlinson, C. A. (2001). How to Differentiate Instruction in Mixed Ability Classrooms, ASCD.

अंकुर मदान अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में पढ़ाती हैं। उनके शिक्षण और अनुसन्धान का क्षेत्र बाल-विकास और समावेशी शिक्षा है। उनसे ankur.madan@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

बच्चों की ऊर्जा को जीवन्त करना और मस्तिष्क को कार्यरत रखना

आशा सिंह

एक शिक्षक-प्रशिक्षक के नाते मैं अपनी कक्षा को, कक्षा के ही किसी अनुभव के साथ शुरू करती हूँ, हालाँकि मेरे पूर्व-स्नातक विद्यार्थी, शिक्षक बनना सीख रहे हैं, लेकिन शुरू में उन्हें एकाग्रता सम्बन्धी अभ्यास में भाग लेना हास्यास्पद लगता है। मैं उन्हें बताती हूँ कि :

जब शिक्षक कक्षा में प्रवेश करते हैं तो आमतौर पर बच्चे बड़े जोशो-ख़रोश के साथ गपशप में लगे रहते हैं और गुड मॉर्निंग का राग अलापने के लिए तैयार रहते हैं। शिक्षक मज़ाकिया भाव-भंगिमाओं के साथ इस प्रक्रिया को बदल सकते हैं जैसे कि अपनी बाहें ऊपर उठाना, अपनी उँगलियाँ हिलाना और तारे तारे, तार्रे-तार्रे-तार्रे और इसके बाद हँसते तारे, रोते तारे, गुस्सेवाले तारे तथा अन्त में तार्रे-तार्रे-तार्रे गा सकते हैं।[1] और फिर अचानक बच्चों का ध्यान केन्द्रित करने के लिए वे अपने स्वर को धीमा और कोमल बनाकर कहते हैं, शान्त तारे ।

मेरा सुझाव था : नए विचारों को आत्मसात करने के लिए तैयार, इस जोश से भरे समूह के साथ अपना पाठ शुरू करें। विद्यार्थियों को शायद यह गतिविधि कक्षा-प्रक्रिया के रूप में कुछ कम गरिमापूर्ण लगी, लेकिन उन्होंने अनिच्छा से ही सही, यह बात मान ली। मैंने अपने इस विश्वास का अनुसरण किया कि बच्चों के साथ जुड़ने के सक्रिय तरीक़ों का अनुभव करना चाहिए, केवल कल्पना करने से बात नहीं बनती।

जल्द ही विद्यार्थी इंटर्नशिप के लिए गए जहाँ उन्हें पाठ-योजनाओं का संचालन करना था। वहाँ उन्हें सैद्धान्तिक शैक्षणिक अभ्यासों का उपयोग वास्तविक कक्षाओं में करना था। स्कूल में तीन सप्ताह की इंटर्नशिप के बाद मैं उनसे मिली और तारे तारे, तार्रे-तार्रे-तार्रे की उपयोगिता के बारे में ढेर सारी तारीफ़ सुनी। विभिन्न भावनात्मक तालों के साथ इस गायन ने बच्चों की ऊर्जा को सही दिशा दिखाई एवं उन्होंने ध्यान केन्द्रित करने का महत्त्व समझा और इसके फलस्वरूप विद्यार्थी-शिक्षक, बच्चों का स्नेह प्राप्त कर सके।

विद्यार्थी-शिक्षकों के उपर्युक्त अनुभव को इसलिए साझा किया गया है ताकि हमें शिक्षक द्वारा नियंत्रित उस विधि का विकल्प मिल सके जिसमें शिक्षक ज़ोरदार शब्दों में कहते हैं, 'क्या हम सभी शान्त हो सकते हैं'- और उसके स्थान पर किसी ऐसे हल्के-फुल्के तरीक़े को अपनाया जाए जिससे कक्षा को अनुशासित किया जा सके। सिल्विया एश्टन वर्नर ने अपनी प्रभावशाली पुस्तक, द टीचर में, अपने विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित करने के लिए पियानो का उपयोग करने का वर्णन किया है। कक्षा के उपकरण स्थानीय सन्दर्भों और संसाधनों से सम्बन्धित होने चाहिए। बच्चों में खेलने की प्रवृत्ति होती है, इसलिए जो कक्षा-प्रक्रियाएँ धमाचौकड़ी के माध्यम से अनुशासन सिखाती हैं, वे बच्चों के स्वभाव के अनुकूल होती हैं। जब बच्चों को थोड़ा हँसने, थोड़ा मज़ाक करने और खिलखिलाने का समय मिलता है तो उन्हें भावनात्मक रूप से संतुष्टि मिलती है। उन्हें महसूस होता है कि इस बात को स्वीकारा जा रहा है कि वे बच्चे हैं; उन्हें केवल विद्यार्थी नहीं माना जा रहा जिनमें ज्ञान भर देना है।

अदृश्य जादुई औषधि

कक्षाएँ उत्सुक युवा दिमाग़ों से भरी होती हैं, विशेष रूप से शुरुआती प्राथमिक कक्षाएँ। अब यह शिक्षक पर निर्भर है कि वे प्रयोग की चिंगारी को हवा दें या प्रश्न पूछने की भावना को आगे बढ़ाएँ। अगर शिक्षक भागीदारी के तरीक़े अपनाते हैं और समृद्ध सामग्री प्रस्तुत करते हैं तो इसका बच्चों की समझ पर जादुई प्रभाव पड़ सकता है। सीखने के लिए यह ज़रूरी है कि विषय-सामग्री आकर्षक हो और बच्चे बिना किसी डर के उससे जुड़ सकें। जिस कक्षा में बच्चे ग़लती करने से डरते नहीं हैं, या जहाँ रचनात्मकता उतनी ही महत्त्वपूर्ण मानी जाती है जितनी कि साक्षरता तो वहाँ विश्वास पैदा होता है। एक समर्थनकारी शिक्षक, एक ऐसा वयस्क जो सम्मान और प्रेम-भाव रखता है, वही भावनात्मक रूप से पोषण प्रदान करने वाले शैक्षिक अवसर निर्मित कर सकता है। जॉन होल्ट के शब्दों में, 'अधिगम शिक्षण का उत्पाद नहीं है। अधिगम शिक्षार्थियों की गतिविधि का उत्पाद है।' ज़रूरत इस बात की है कि बच्चों को जिन चीज़ों से लाभ पहुँचता हो उन अवसरों से लाभ उठाने के तरीक़ों का पता लगाना और वह तरीक़ा है

[1] मैंने तारे की वर्तनी दो तरह से लिखी है। तारे में दीर्घ 'आ' लगाना यह बताता है कि गाते समय आ स्वर को खींचना है,जबकि 'तार्रे-तार्रे तार्रे' की वर्तनी में र ध्वनि दो बार आती है क्योंकि छन्द का, तेज़ी के साथ 'तारे तारे' की ताल के साथ मिलान करना पड़ता है।

अन्य बच्चों के साथ रहना। वास्तव में 3-10 वर्षीय बच्चों को पढ़ाने वाले शिक्षण समुदाय के लिए यह मंत्र होना चाहिए :

1. प्रत्येक बच्चे को विशेष महसूस करवाएँ।
2. बच्चे खेल के सन्दर्भों में बहुत अच्छी तरह से सीखते हैं।
3. चिन्तन करें कि क्या आपकी कक्षा-प्रक्रियाएँ व्यक्तिगत रूप से बच्चे को संलग्न करती हैं।

शिक्षकों के लिए यह आवश्यक है कि वे बाल-उन्मुख शिक्षणशास्त्र से परिचित हों। अपनी पहचान के लिए बच्चों की खोज आमतौर पर तब सक्रिय हो जाती है जब वे एक बड़े समूह में अपने लिए जगह बना पाते हैं। रंगमंच सम्बन्धी खेलों में प्रत्येक सदस्य के व्यक्तित्व को उजागर करने की क्षमता होती है; जिसमें सामूहिक गतिविधि और व्यक्तिगत गतिविधि को बारी-बारी से किया जा सकता है। निम्नलिखित अनुच्छेदों में, अवलोकन और विवेचन के आदान-प्रदान को प्रोत्साहित करके बच्चों की भागीदारी को विकसित करने के तरीक़ों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। छोटे समूह बनाना, साझा करने के लिए बच्चों को आपस में घुलाना-मिलाना आदि कुछ ऐसे तरीक़े हैं जिनसे बच्चों को सोचने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। छोटे समूहों में साझा करने वाले ऐसे क्षण, शर्मीले या शान्त बच्चे को इस बात का अवसर देते हैं कि वे साहस और आत्म-विश्वास जुटाकर ख़ुद को व्यक्त कर सकें।

समीक्षात्मक चिन्तन के एक मार्ग के रूप में मिलकर सीखना

उदाहरण के लिए पाँच या छह बच्चे भाषा के किसी पाठ के विभिन्न अंश ले सकते हैं और अपने-अपने छोटे समूह में आपस में चर्चा कर सकते हैं कि वे इसे कैसे प्रस्तुत करेंगे। वे चित्र बना सकते हैं, अभिनय कर सकते हैं या वाद-विवाद भी कर सकते हैं। वे ख़ुद तरीक़ों के बारे में सोचते हैं और शिक्षक से सुझाव लेते हैं।

ऐसी प्रक्रिया में वे सक्रिय रहते हैं, विषय-सामग्री को ज़िम्मेदारी के साथ लेते हैं और अपने साथी विद्यार्थियों के काम की समीक्षा करते हैं। वे एक-दूसरे के मज़बूत पक्षों से भी परिचित होते हैं। उनमें चिन्तन एवं प्रेरणा की भावना विकसित होती है जिससे वे आगे चलकर अधिक कुशलता के साथ अपनी बात रखने का प्रयास करते हैं। बच्चे महसूस करते हैं कि वे ख़ास हैं और खेल-विधि तथा समूह के साथ जुड़ते हुए अपना विकास करते हैं।

भाषाई जागरूकता के स्रोत के रूप में व्यक्तिगत नाम

मैं एक पूरी कक्षा की अन्तःक्रिया साझा करती हूँ जिसमें शायद कक्षा में कई बच्चों के होने के बावजूद अपनापन है। खेल में आपको अपने नाम के बारे में सोचना होता है, जैसे कि इसका क्या मतलब है, इस पूरे शब्द में कौन-सी ध्वनियाँ आती हैं और फिर अपने नाम को अन्य वस्तुओं तथा स्थानों से जोड़ना होता है, यह सब एक ढाँचे के भीतर करना होता है ठीक वैसे ही जैसे कि किसी अन्य खेल के नियम होते हैं। इस खेल में बच्चों को पता भी नहीं चलता और वे व्याकरणिक कोटियाँ सीख लेते हैं।

नाम का खेल

बच्चों से अनुरोध किया जाता है कि वे अपने नाम को एक क्रिया और एक भावना के साथ बोलें। कक्षा उस क्रिया और नाम को दो बार दोहराएगी। 'मैं शुरू कर सकती हूँ लेकिन गजराज या रोहिणी, क्या आप कोशिश करना चाहते हैं?' खेल शुरू करने वाला या तो अभिव्यंजनापूर्ण रूप से अपनी बात कह सकता है या फिर बस आगे आकर कह सकता है कि *मेरा नाम* _____ *है।*

आप बस गतिविधि का आनन्द लें और अगर लगे कि इसमें उत्साह की कमी हो रही है तो हस्तक्षेप करें। संयमित व नियंत्रित क्रियाओं को तोड़ने का प्रयास करें : कूदें, एक चक्कर लगाएँ, अपनी बाहें ऊपर उठाएँ, अपना नाम पुकारें। शिक्षक को यह सब करते हुए देखकर बच्चों की ख़ुशी कई गुना बढ़ जाती है और वे इन क्रियाओं को जोश के साथ दोहराते हैं। फिर तो गतिविधि संक्रामक हो जाएगी और बच्चों को खुलकर व्यक्त करने के लिए प्रेरित करेगी। विभिन्न क्रियाएँ करने से और आश्चर्य, साहस, क्रोध, उदासी आदि भावों के अनुकरण से कक्षा की ऊर्जा जीवन्त हो जाएगी।

ध्वनियों की पहचान

अपने हाथों को रगड़ें, इस ऊर्जा को हथेलियों के बीच रखें। पहला क़दम यह है कि खेल के नियमों को स्पष्ट रूप से बताएँ। यहाँ एक उदाहरण है :

1. सबसे पहले बारी-बारी से नाम पुकारें।
2. बच्चों से कहें : अब हम अपने नाम की पहली ध्वनि सुनेंगे।
3. ऐसा शब्द कहें जो पहली ध्वनि के साथ मेल खाता हो।
4. बच्चों को यह समझने दें कि अभी-अभी क्या कहा गया है।
5. यदि निर्देश नहीं समझ में आया हो तो हस्तक्षेप करें और उदाहरण दें।
6. जैसे-जैसे बच्चे भाग लेते हैं, उन्हें एक-दूसरे की प्रतिक्रिया और मिलान किए हुए शब्द में आई ध्वनियों की सटीकता के बारे में निर्णय करने दें।

बहुत सारी प्रतिक्रियाएँ सामने आएँगी और शिक्षक की टिप्पणी

बच्चों के भाषा सीखने और समझने के स्तर पर निर्भर करेगी। छोटे बच्चों के लिए आप खेल को सिर्फ़ ध्वनियों तक सीमित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि स्नेहा, सफ़ेद कहती है, तो यदि आवश्यक हो तो ही ध्वनि के अन्तर की बात करें क्योंकि यह एक सूक्ष्म अन्तर है।

बड़े बच्चों के साथ आप निश्चित रूप से कोमल और दीर्घ ध्वनि की ओर ध्यान दिला सकते हैं। जैसे कि शरद के लिए शहद कहना ठीक है, लेकिन अगर बच्चा शरद के लिए शंख कहता है तो यह ध्वनि का अन्तर और अनुस्वार की मदद से उसे दर्शाने के बारे में बात करने का सही समय है।

संज्ञा की पहचान करने के लिए नामों का उपयोग करना

बड़े बच्चे इससे अधिक जटिल रूप का उपयोग कर सकते हैं। अपने नाम की पहली ध्वनि वाले सिद्धान्त का उपयोग करते हुए बच्चों को उसी ध्वनि से किसी जगह, व्यक्ति या वस्तु का नाम बताना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि बच्चे का नाम पावना है तो वह पटना, पलक और पलंग या पुष्कर, पंखुरी और पिटारा आदि का नाम ले सकती है।

यहीं पर बताया जा सकता है कि ध्वनियों का विस्तार कैसे होता है और ध्वनियों में जुड़ने वाले प्रतीक को हिन्दी में मात्रा कहते हैं। जैसे-जैसे खेल आगे बढ़ता है, आप सोच-विचार करके अधिक अवधारणाओं को जोड़ सकते हैं। आइए, अब हम अँग्रेज़ी भाषा से एक उदाहरण लेते हैं : यदि बच्चे का नाम मधुर है, तो बच्चा मंकी, मदर और मिर्जापुर या मैंगो कहता है। अब मंकी और मदर शब्द व्यक्तियों के नाम नहीं हैं बल्कि वे एक समूह की श्रेणियों के नाम हैं, जैसे जानवर और फल तथा उन्हें जातिवाचक संज्ञा कहते हैं।

विभिन्न क्रियाओं को करने और शामिल किए जाने की बच्चों की इच्छा और उनके उत्साह को जीवन्त रखने की बात को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह खेल भाषाई जागरूकता को बढ़ाने में सफल रहा है। पहले बताई गई मात्रा वाली अवधारणा की परीक्षा करने की दृष्टि से अगर हम इस गतिविधि को देखें – जिसमें हर बच्चे को विशेष होने का अनुभव कराया जाता है, खेल का उपयोग सीखने के अवसर के रूप में किया जाता है और हर बच्चे को व्यक्तिगत रूप से संलग्न किया जाता है – तो हम सही कार्य कर रहे हैं। उसमें यह बातें भी जोड़ें कि कक्षा को ऊर्जावान बनाए रखा जाता है और शिक्षक प्रक्रिया पर चिन्तन करते हैं। क्या इसे कक्षा की एक सार्थक अन्तःक्रिया माना जाएगा? क्या हँसी-खेल ही जादुई औषधि थी?

इस तरह बच्चों की पहल पर आधारित अन्तःक्रियात्मक अनुक्रिया, अनुपालन और एकरूपता की धारणा को उलट कर रख देती है क्योंकि हर कोई अपने विचारों को साझा करते हुए एक भावनात्मक रोमांच का अनुभव करता है। जब बच्चे ध्वनियों के साथ खेलते हैं तो वे केवल एक तयशुदा पटकथा को अभिनीत नहीं कर रहे होते बल्कि ख़ुद को अभिव्यक्त करते हैं और यह उनकी जिज्ञासा को जाग्रत करता है। और इस तरह एक बड़ा कक्षा-समूह, एक ऐसा सुरक्षित व व्यक्तिगत स्थान बन जाता है जो अर्थ निर्माण के अन्तरों को सुनने के अनुकूल होता है।

खोजबीन अधिगम के रूप में

जब माता-पिता अपनी सन्तान को तनाव-मुक्त वातावरण में ख़ुशी-ख़ुशी नई चीज़ों की खोज करते हुए और स्वतंत्र हो कर प्रयोग करते हुए देखते हैं तो उन्हें बड़ी राहत और ख़ुशी मिलती है। फ़िनलैण्ड में ऐसे ही स्कूल हैं जहाँ शुरुआती वर्षों में कम अकादमिक दबाव के साथ देखने, करने और तलाशने के लिए बहुत कुछ होता है। ताज़ी हवा, प्रकृति और नियमित शारीरिक गतिविधि के लिए समय देने को अधिगम का इंजन या साधन माना जाता है। इस लेख में भी इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि बच्चे शारीरिक गतिविधि से लाभान्वित होते हैं। अक्सर ऐसा लगता है कि कक्षाएँ केवल बच्चों के मस्तिष्क को महत्त्व देती हैं, जबकि अन्य अंग जैसे हृदय और शरीर केवल मानसिक प्रक्रियाओं का समर्थन करने के लिए हैं! यदि बच्चे कक्षा में शान्त न हों तो उन्हें अशान्त या अतिसक्रिय माना जाता है। शारीरिक रूप से खोज करने और संवाद एवं अधिक अनुभवी लोगों के माध्यम से बच्चों का विकास सबसे बेहतर होता है। हृदय, मस्तिष्क और हाथ मिलकर एक शक्तिशाली टीम बनाते हैं।

ऐसा लगता है कि शिक्षा के क्षेत्र में यह धारणा बनी हुई है कि शहरी ग़रीब और ग्रामीण बच्चों की कक्षाओं के पास संसाधनों की कमी है तथा जो कुछ उनके आवासीय वातावरण उपलब्ध करवा सकते हैं, उसे ज़्यादा सम्मान नहीं दिया जाता। शैक्षिक सामग्री शहरी मध्यम वर्ग के दृष्टिकोण से संचालित होती है जो परीक्षण या पाठ्यक्रम डिज़ाइन को नियंत्रित करते हैं। ग्रामीण या शहरी कम आय वाले ठौर-ठिकानों में जिन चीज़ों की बहुतायत है, उनके बारे में बच्चों की परीक्षा लेने के बारे में कभी सोचा ही नहीं जाता, जैसे कि पर्यावरण के दस पक्षियों के नाम बताना या दस सामान्य पेड़ों या बाज़ार की दस अलग-अलग विशेषताओं को सूचीबद्ध करना आदि। हमारे प्रश्न परिवहन के साधनों, ज्यामितीय आकृतियों का मिलान करने और अन्य औपचारिक स्कूली चीज़ों के बारे में होते हैं। यह भावना अभी भी मौजूद है कि अति-ग़रीब समूहों या दूर-दराज़ के स्थानों में पले हुए बच्चों को लाभ मिलना चाहिए, और इस बात पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता है कि वे अपने शहरी साथियों से किस तरह से भिन्न हैं। वास्तविकता तो यह है कि प्रत्येक समूह के पास कोई न कोई क्षमता और कौशल है। उदाहरण के लिए बच्चों के एक राष्ट्रीय कला मेले में शहर

के विद्यार्थियों ने महसूस किया कि उनमें से बहुत कम लोगों में समूह नृत्य, वाद्य-वादन सामूहिक रूप से गाने या टोकरियाँ बुनने की क्षमता थी। दूसरी ओर समुदायों में रहने वाले बच्चों ने इस तरह की कई कलात्मक परम्पराओं को आत्मसात किया था; कुछ बच्चे पारम्परिक कलाकारों के परिवारों से थे।

अक्सर देखा गया है कि बच्चे भले ही अशिक्षित हों, लेकिन वे कहानी कहने की कला में सक्षम होते हैं जैसे कि राजस्थान की पारम्परिक फड़ कथा की कला। शहरी पत्रकार इस कौशल से प्रभावित होते हैं और दिखावटी बातें करते हैं, किन्तु वे इस घिसे-पिटे सवाल से ख़ुद को दूर नहीं रख पाते कि आपने स्कूल में क्या सीखा? क्या आपको वहाँ अच्छा लगता है? गोया कि समुदाय को वे यह सन्देश दे रहे होते हैं कि : लोक-कला और कौशल ठीक हैं और आकर्षक हैं, लेकिन आप उन्हें आधुनिक जीवन और जीवन जीने के आधुनिक तरीक़ों के अनुसार कैसे अनुकूलित करते हैं? हालाँकि इस बात से कोई इनकार नहीं है कि साक्षरता वास्तव में एक महत्त्वपूर्ण उपकरण है, पर यह निरक्षर लोगों से जुड़े हुए कौशलों में संज्ञानात्मक क्षमता की उपेक्षा नहीं करता है।

एक संसाधन के रूप में प्रकृति

बच्चे जिज्ञासु होते हैं और होना भी चाहिए क्योंकि यह दुनिया ऐसे अनुभवी लोगों द्वारा नियंत्रित है जो यह भूल जाते हैं कि वे भी कभी बच्चे थे, और इस तरह की दुनिया में जीवित रहने के लिए 'प्राकृतिक जिज्ञासा' एक कौशल है। बचपन के अनुभवों तक आसानी से पहुँच पाना शिक्षकों के लिए उपयोगी होता है। प्रकृति, जानकारियों को आपस में जोड़ना एवं दोस्तों के साथ बाहरी दुनिया की खोज करना - यह सभी बातें बच्चों को हमेशा पसन्द होती हैं। जैसा कि पहले कहा गया है, बच्चे सक्रिय अर्थ-निर्माता होते हैं और अपने आवासीय वातावरण से प्रभावित होते हैं। 15 साल की उम्र तक एक ग्रामीण बच्चा इतने सारे बछड़ों को जन्म लेते हुए देख चुका होता है कि वह प्रसव की स्थिति में महिलाओं को पहचानने में काफ़ी अनुभवी हो जाता है।

शारीरिक कौशल हमारे रोजमर्रा के संसाधनों से प्रभावित होते हैं। परिवहन की सुविधा के अभाव के कारण यह बच्चे तेज़ गति से चलने/दौड़ने का कौशल विकसित कर लेते हैं क्योंकि एक स्थान से दूसरे स्थान तक जाने के लिए उनके पास यही एक तरीक़ा होता है। बच्चे एक ही गतिविधि को बार-बार करने में समय बिता सकते हैं जैसे तरंगों का अवलोकन करने या अपनी शक्ति का परीक्षण करने के लिए नदी में कंकड़ फेंकना। तेलंगाना में आदिवासियों के साथ काम करने वाले एक शिक्षक ने बताया कि एक बच्चा हवा में कंकड़ फेंकने के बारे में खोज कर रहा था। वह जानना चाहता था कि हवा में कंकड़ को निलम्बित रखने के लिए किस तरह के बल की ज़रूरत पड़ेगी। इस नए युग के न्यूटन को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है कि वह प्राकृतिक घटनाओं को बारीकी से देखे, पूछताछ करे तथा इस तरह के कई अन्वेषण करे। कुछ उदाहरण :

- *जैसा कि सर जी कक्षा में दिखाते हैं, पक्षी त्रिकोण बनाते हुए क्यों उड़ते हैं?*
- *सभी पेड़ों में पत्तियाँ होती हैं फिर भी सभी पत्तियाँ अलग-अलग होती हैं ... लेकिन ज़्यादातर वे त्रिकोणीय होती हैं।*
- *बड़े लड़कों का एक समूह, जो स्कूल में नहीं था, वृत्त बनाने के लिए परकार (कम्पास) का उपयोग नहीं करना चाहता था। शहर के लड़के भौंचक्के रह गए! पर शिक्षक बेहतर जानते थे और उन्होंने उनसे कुआँ खोदने के लिए एक ख़ाका तैयार करने को कहा। ज्यामिति बॉक्स का उपयोग न जानने वाले बच्चे एक बड़ी-सी कील लाए और एक सही वृत्त बनाने के लिए उसमें एक धागा बाँध दिया।*

बच्चों द्वारा किए गए अवलोकन और खेलते समय बच्चों का अवलोकन करके कक्षा के लिए रोचक गतिविधियाँ बनाई जा सकती हैं। शहर के स्कूलों के बच्चे यदि खुले स्थानों में जाकर पत्तों, टहनियों या कंकड़ को इकट्ठा करके उनसे तरह-तरह की आकृतियाँ या स्थानीय रंगोली के डिज़ाइन बनाएँ तो उन्हें काफ़ी लाभ होगा। पैटर्न, दोहरावदार रेखाएँ आदि स्थानिक गणित, डिज़ाइन और आकार की समझ के लिए एक अच्छी कड़ी साबित हो सकती हैं।

शिक्षकों द्वारा चिन्तन

जब भी मैं शिक्षकों से मिली, उन्होंने मुझे बड़े गर्व के साथ अपनी सफलताओं के बारे में बताया। एक शिक्षिका बच्चों को बाहर ले जाकर पेड़ों का अध्ययन करना, खेल खेलना, विभिन्न वस्तुओं को लाना, उनके नाम अँग्रेज़ी में सीखना जैसी गतिविधियाँ करवाना चाहती थीं। वे समूह अधिगम को बढ़ावा देने की कोशिश कर रही थीं और चाहती थीं कि छोटे समूहों में खेल खिलाएँ, वर्तनी प्रदर्शित करें या मिल-जुलकर आकृतियाँ बनवाएँ।

वे बच्चों को अच्छी तरह से जानती थीं, अतः उन्हें लगा कि कक्षा से निकलकर बाहर खुले में जाने से कितना शोर-शराबा होगा। लेकिन पल भर में वे यह भी जान गईं कि उन्हें क्या करना है। 'बच्चो,' उन्होंने कहा, 'अगर आपने चींटियों को चलते देखा है तो मैं चाहती हूँ कि आप सभी वैसी ही चींटियाँ बन जाएँ जो मैदान में जा रही हैं।' तो बड़े रहस्यपूर्ण ढंग से, वे

इस बात से सहमत हो गए कि चींटियाँ एक लाइन में चलती हैं, फुसफुसाती हैं और आगे बढ़ती हैं। मैदान में पेड़ों को छूने, पक्षियों को देखने और पत्तियों को इकट्ठा करने के बाद उन्होंने संक्षेप में वर्णित निम्नलिखित खेलों में भाग लिया :

1. पन्द्रह गिनने तक, सात के समूहों में, एक वर्ग/ अष्टभुज/ त्रिकोण बनाइए। मैदान में कुछ आकृतियाँ ढूँढ़िए और 30 की गिनती खत्म करने से पहले वापस लौट आइए।
2. एक अन्य दिन जो खेल खेला गया, वह इस प्रकार था : उन वस्तुओं को इकट्ठा करना जिनके अँग्रेज़ी नाम बच्चे जानना चाहते थे। यह वस्तुएँ कुछ भी हो सकती थीं जैसे पत्थर, पंखुड़ियाँ, टहनियाँ, तितलियाँ या सिर्फ़ आकाश के रंग - इनके अँग्रेज़ी नाम साझा किए गए। कुछ बच्चों को नाम पता थे और अन्य बच्चों को शिक्षक बता देते थे।
3. इसे वर्तनी के खेल में बदला जा सकता है - पाँच शब्दों को चुनना, उनकी ध्वनियाँ पहचानना, बच्चों को ध्वनियाँ सीखने देना और एक टीम के रूप में अक्षरों को जोड़ना। एक पंक्ति में खड़े चार विद्यार्थी अक्षर 'I' बन सकते हैं, अन्य 'C' अक्षर बनाने के लिए अर्ध गोलाकार में खड़े होते हैं। बच्चे बेहद नए-नए और आश्चर्यजनक तरीक़े खोज लेते हैं। कोशिश यह है कि टीमों की सामूहिक भावना और विवेचन से अधिगम को उभरने दिया जाए।

शिक्षकों की कहानियाँ अक्सर चुनौतियों पर सफलता पाने के लिए, उनके द्वारा किए गए नवाचारों को बताती हैं। शिक्षकों की मुश्किलों और सफलताओं पर ध्यान देते हुए उनके लिए आयोजित की जाने वाली कार्यशालाओं के बारे में फिर से सोचे जाने की आवश्यकता है। जो शिक्षक कुछ हासिल करने का प्रयास करते हैं, उनके द्वारा अपनाए गए उदाहरण और रणनीतियाँ यथार्थवादी अपेक्षाओं और परिणामों पर आधारित होती हैं।

कक्षा के साथ जुड़ाव बनाने में, बच्चों की कुछ भावनात्मक रुकावटें हो सकती हैं। गाँव के स्कूल से शहर के स्कूल में जाने के संक्रमण-काल के दौरान, प्यार से बच्चे का हाथ पकड़ने या कला सम्बन्धी गतिविधियाँ करवाने से किसी अशान्त बच्चे को ध्यान केन्द्रित करने या कठिनाई में पड़े बच्चे को मदद मिल सकती है।

अन्तिम अवलोकन

अन्त में शिक्षकों की प्रशंसा के रूप में, मैं यह प्रस्ताव रखना चाहती हूँ कि उनके कक्षा के अनुभवों को सर्वोत्तम अभ्यासों के संग्रह के रूप में संकलित करके उसे साझा किया जाए। कई शिक्षक ऐसे हैं जो कभी आत्म-सन्तुष्ट नहीं होते, वे हमेशा मौलिक तरीक़े खोजते रहते हैं, वे बच्चों की पहचान का सम्मान करते हुए शिक्षा को परिभाषित व पुनर्परिभाषित करते हैं और इस तरह उसकी सीमाओं का विस्तार करते हैं। साथ ही वे, बच्चे कैसे सीख सकते हैं और कैसे सीखते हैं, इसके बारे में कई तरीक़ों का पता लगाते हैं। उन नवाचारी विजेताओं को सलाम जो बचपन की भावना के माध्यम से बच्चों की रचनात्मकता का मार्गदर्शन करते हैं।

References

Wernar, S. A (1986). *The Teacher*, Australia: Simon and Schuster

Holt, John. (1967)/. *How Children Learn US*: Pitman Publishing (Perseus Publishing (1995)

https://www.washingtonpost.com/education/2019/08/30/what-finland-is-really-doing-improve-its-acclaimed-schools/ Accessed on 29.04. 2020

आशा सिंह बाल-विकास में एसोसिएट प्रोफ़ेसर के रूप में लेडी इरविन कॉलेज में 34 वर्षों तक कार्यरत रहीं। फिर वे उन कार्यों को करने की ओर गईं जो उनके दिल के क़रीब थे। मानव जीवन-चक्र के 'शुरुआती वर्षों में गहरी रुचि रखने वाली' आशा, अम्बेडकर विश्वविद्यालय में युवाओं के साथ और स्कूलों में सेवाकालीन शिक्षकों के साथ कला-आधारित शिक्षा के महत्त्व को साझा कर रही हैं। उन्होंने बड़े पैमाने पर, उन्होंने बड़े पैमाने पर बच्चों को कहानी सुनाने का काम किया है, विशेषकर ऐसी कहानियाँ जो डिजिटल एडल्ट-चाइल्ड इंटरैक्शन को दर्शाती हैं। उनसे asha.singh903@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

यह समझना कि बच्चे कब और कैसे सीखते हैं

रितिका गुप्ता

एक शिशु अपने हाथ को उत्सुकता से देख रहा है,उसे हिलाता है,उसे अपने मुँह के पास लाता है और अपनी उँगलियों को चूसता है। फिर वह अपनी उँगलियों को मुँह से बाहर लाता है; अपने हाथ को पुनः देखता है और किलकारी मारता है। दो साल का एक बच्चा अपनी बड़ी बहन की कही हुई हर बात को दोहरा रहा है और खिलखिला रहा है। चार साल का एक बच्चा रेत में बैठा हुआ है, वह एक कटोरी में रेत भरता है और फिर उसे खाली करता है। पाँच साल का एक बच्चा अपने हाथ में एक खेलने वाला हथौड़ा लिए हुए घर में चारों ओर घूमते हुए अलग-अलग चीज़ों को ठोक-पीट रहा है और अपनी माँ को देख रहा है। छह साल की एक बच्ची घर में अपनी माँ के पीछे-पीछे इस तरह से घूम रही है मानो वह माँ की पूँछ हो। तेरह साल के दो बच्चे एक-दूसरे के पास बैठे हैं और ब्लॉक्स के साथ खेल रहे हैं। सोलह वर्षीय एक लड़का गेंद को अपने पैरों से बार-बार दीवार पर मार रहा है।

अक्सर बच्चे ऐसी गतिविधियाँ करते हैं जो बड़ों को निरर्थक लगती हैं। आमतौर बड़े इस तरह की टिप्पणी करते हैं कि,'ओह, वह तो ख़्याली पुलाव पका रहा है', 'खेल रहा है' या 'बस, समय बर्बाद कर रहा है।' हमें लग सकता है बच्चा उपर्युक्त स्थितियों में भला क्या सीख रहा होगा? जब हम सीखने के बारे में बात करते हैं तो हमारे मन में ख़ुद-ब-ख़ुद ऐसे बच्चे का चित्र बन जाता है जो किताबों के साथ गम्भीरता से बैठा हुआ हो, गृहकार्य कर रहा हो, किसी वयस्क की बात सुन रहा हो या याद किए हुए किसी अंश को दोहरा रहा हो। लेकिन कभी-कभी ख़ुद को यह याद दिलाना ज़रूरी है कि सीखना एक सतत प्रक्रिया है,न कि केवल एक परिणाम।

मनुष्य का स्वभाव जन्म से ही जिज्ञासु और खोजी होता है। छोटे वैज्ञानिकों की तरह बच्चे, यहाँ तक कि शिशु भी, ज्ञान की खोज और उसका निर्माण करने के लिए प्रयोग करते रहते हैं। उदाहरण के लिए एक साल का बच्चा जो अपनी पहुँच के भीतर की सभी चीज़ें फेंकता रहता है, वह सीख रहा होता है कि कौन-सी वस्तु गिरते समय आवाज़ करती है और कौन-सी नहीं; जब वह उन्हें विभिन्न ऊँचाइयों से फेंकता है, तब क्या होता है। बच्चे अपने परिवेश के साथ लगातार कार्य करते रहते हैं,यह जानने के लिए कि दुनिया कैसे काम करती है।

बच्चे कैसे सीखते हैं?

- *अवलोकन* - घर में अपनी माँ का अनुसरण करने वाली छह वर्षीय बच्ची गौर से यह देख रही होती है कि 'माँ कैसे बने'। शायद वह घर-घर खेलते हुए इस आचरण को दोहराती नजर आएगी।
- *अनुकरण* - अपनी बहन की नकल करने वाला दो साल का बच्चा भाषा के नियमों और हँसी-खेल की सीमाओं के बारे में सीख रहा होता है।
- *प्रत्यक्ष स्वयं खोजबीन करके सीखना* – पाँच साल का बच्चा लगातार अपनी माँ की ओर उसकी इस प्रतिक्रिया को जानने के लिए देखता रहता है कि वह कहाँ-कहाँ हथौड़ा मार सकता है और कौन-सी चीज़ इस ठोकने-पीटने की सीमा से बाहर है। साथ ही वह यह भी सीख रहा होता है कि विभिन्न सतहों पर हथौड़ा मारने से किस प्रकार की विभिन्न ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।
- *प्रयोग; प्रयत्न-त्रुटि विधि*- चार साल का बच्चा जो कटोरी में रेत भर रहा है और फिर उसे खाली कर रहा है, वह खाली और पूर्ण की अवधारणाओं के बारे में सीख रहा है और अपनी गतियों का समन्वय करना सीख रहा है।
- *सीखने में पर्यावरण की भूमिका* - बच्चे अपने जीवन में अन्य लोगों से सीखते हैं; सम्भव है कि तेरह साल के दो बच्चे अवलोकन करते हुए एक-दूसरे से कोई कौशल सीख रहे हों।
- *चिन्तनशील विचार* – इन सभी उदाहरणों में,चिन्तन करने की प्रक्रिया सतत चलती रहती है। भले ही ऐसा न लगे,लेकिन बच्चे अपने सीखने के बारे में,कारण और प्रभाव के बारे में और उन चीज़ों के बारे में लगातार सोच रहे होते हैं जिन्हें वे अपने परिवेश में देखते हैं।

स्कूलों में सीखना

ऐसा लगता है कि हम सभी सीखने की इच्छा के साथ पैदा हुए हैं। तो फिर सीखना कब और कैसे एक कार्य बन जाता है? हम यह क्यों मान लेते हैं कि कुछ बच्चे सीखने में असमर्थ हैं?

उस समय के बारे में सोचिए जब आपने तैरना या साइकिल चलाना सीखा था। क्या किसी ने आपको वह तकनीक सिखाई? क्या आपने किसी और को देखा और नकल करने की कोशिश की? क्या आपने समय के साथ-साथ प्रयोग किए और पानी में तैरने या साइकिल को सन्तुलित करने के लिए अपने ख़ुद के तरीक़े निकाले?

हम सभी में सीखने की क्षमता है,लेकिन हम अलग-अलग तरीक़ों से सीखते हैं। सीखने के कुछ तरीक़ों को लेकर हमारे मन में स्वाभाविक प्राथमिकताएँ होती हैं और हममें से प्रत्येक के सीखने की एक अलग गति है। कभी-कभी हम अपने काम करने के तरीक़े में वे तरीक़े भी जोड़ लेते हैं जिन्हें हमने दूसरे को करते हुए देखा हो। अब एक कक्षा का उदाहरण लेते हैं। गणित में भिन्न के बारे में पढ़ने के दौरान कुछ बच्चे तो इसे तुरन्त सीख लेते हैं जबकि कई अन्य बच्चों को यह समझ में नहीं आता है। कुछ बच्चों को सवाल हल करने के लिए भौतिक रूप से ब्लॉक्स देने से लाभ होता है जबकि कई अन्य ख़ुद ही सवाल पढ़कर उसे हल करना पसन्द करते हैं।

समस्या तब उत्पन्न होती है जब हम केवल परिणाम के आधार पर सीखने को मापते हैं और प्रक्रिया को स्वीकार नहीं करते हैं। जब हम सफलता या असफलता को केवल इस आधार पर मापते हैं कि बच्चा सवाल को हल कर सकता है या नहीं तो हम अन्य महत्त्वपूर्ण प्रक्रियाओं पर ध्यान देने से चूक जाते हैं:

- हम यह मानने लगते हैं कि कुछ बच्चे सीख सकते हैं और कुछ नहीं। इसके लिए हम कभी-कभी कुछ कारण भी मानकर चलते हैं, जैसे कि बच्चा बहुत शरारती है,उसके घर का माहौल अच्छा नहीं है, वह बुद्धिमान नहीं है या उसमें सीखने के लिए आवश्यक एकाग्रता की कमी है।
- हो सकता है कि हम समय के साथ-साथ होने वाले अधिगम को मापना भूल जाएँ क्योंकि विभिन्न बच्चे विभिन्न गति से सीखते हैं।
- जब हमारा दिमाग़ परिणाम पर केन्द्रित होता है तो हो सकता है कि हम प्रकरण विशेष के उन अंशों पर ध्यान देने से चूक जाएँ जिसे बच्चा समझ गया है। उदाहरण के लिए बच्चा दैनिक जीवन की बातचीत में भिन्न की अवधारणा को समझता है – 'मुझे आधी चॉकलेट दीजिए, इस चॉकलेट को आप तीनों में समान रूप से बाँट लीजिए'- लेकिन वह इसे संख्याओं में समझने में असमर्थ है। यह अवलोकन कक्षा में वाकई सहायक हो सकता है क्योंकि अगर हम यह समझ सकें कि बच्चा क्या समझता है और कहाँ अटक रहा है तो इससे हमें अपनी शिक्षण-शैली और विषय-सामग्री के अनुकूलन के बारे में जानकारी मिलेगी।

अधिगम को कक्षा में ले जाना

एक कक्षा में बहुत सारे बच्चे होते हैं तो ऐसे में शिक्षक सभी की सीखने की गति का ध्यान कैसे रख सकता है? साथ ही स्कूल में शिक्षकों को आकलन करना पड़ता है जिसके लिए परिणामों को मापना आवश्यक होता है। इस जानकारी का उपयोग कक्षा में कैसे किया जा सकता है? इस सीख को कक्षाओं में कैसे ले जाया जा सकता है, इसके कुछ उदाहरण यहाँ दिए जा रहे हैं:

अपनी मान्यताओं को बदलना

बच्चे बहुत बारीक़ी से अवलोकन करते हैं और ग़ैर-मौखिक संकेतों को समझने में वयस्कों की तुलना में कहीं अधिक कुशल होते हैं। वे समझ सकते हैं कि शिक्षक को लगता है कि 'मैं बेवकूफ हूँ',भले ही इसे शब्दों में व्यक्त न किया गया हो। यह बात उसके आत्मसम्मान को कम करके उसके अधिगम में रुकावट डाल सकती है; बच्चा यह मानने लगता है कि 'मैं यह कार्य नहीं कर सकता; मैं स्मार्ट नहीं हूँ।' हो सकता है कि ऐसा मानने के कारण बच्चे शरारतें करना शुरू कर देते हों; या कक्षा में अच्छा प्रदर्शन न कर पाने के कारण हताशा से वे ऐसा व्यवहार करते हों या यह भी हो सकता है कि वे मानते हों कि 'मैं अच्छा प्रदर्शन नहीं कर सकता और लोकप्रिय नहीं हो सकता, इसलिए मैं हर किसी को परेशान करके ही लोकप्रिय बनूँ।'

बच्चे की क्षमताओं में शिक्षक के विश्वास का बच्चे पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। बच्चा यह समझ लेता है कि,'शिक्षक को लगता है कि मैं यह कार्य कर सकता हूँ।' इसके अलावा जब शिक्षक यह मानते हैं कि कक्षा का प्रत्येक बच्चा सीख सकता है, तो उनके अपने व्यवहार में स्वत: परिवर्तन होता है। यह बदलाव, अपने आप में, बच्चों के लिए बहुत सुकून देने वाला और उत्साहवर्धक होता है।

आइए, इसका एक उदाहरण देखें। यह रायपुर के एक सरकारी प्राथमिक विद्यालय की शिक्षिका का अनुभव है। सुश्री गायत्री प्राथमिक स्कूल के बच्चों को पढ़ाती थीं और उन्हें अक्सर लगता था कि 'यह बच्चे पर्याप्त रूप से स्मार्ट नहीं हैं।' पहली और दूसरी कक्षा में भी विद्यार्थियों के पढ़ने और लिखने का स्तर काफी कम था। इससे वह हतोत्साहित महसूस करती थीं और कभी-कभी बच्चों पर गुस्सा भी हो जाती थीं। यहाँ उस

प्रशिक्षण सत्र के प्रभाव की एक रिपोर्ट दी गई है जिसमें उन्होंने भाग लिया था और जिसमें यह बताया गया कि छोटे बच्चों को कैसे पढ़ाना चाहिए :

'सुश्री गायत्री ने अपने शिक्षण में जो सबसे बड़ा बदलाव महसूस किया वह था, बच्चे कैसे सीखते हैं और वे क्या करने में सक्षम हैं, इस बारे में उनका दृष्टिकोण। यह जानने के बाद कि बच्चे अपने दम पर सीख सकते हैं, उनकी समझ में आने लगा किटी एल एम का उपयोग करने और बच्चों को विषय-सामग्री के बारे में खोज करने देने का क्या उद्देश्य है। अब वे इस ज्ञान का उपयोग बच्चों की प्राकृतिक जिज्ञासा को उजागर करने के लिए भी करने लगीं और बच्चों के ध्यान को बनाए रखने के लिए यह उपकरण बहुत उपयोगी साबित हुआ। अब वे विद्यार्थियों को डाँटने-फटकारने या सज़ा देने की बजाय उनके साथ बातचीत करने लगीं। यह बदलाव बहुत धीरे-धीरे हुआ और रैखिक नहीं था, लेकिन वे इस प्रक्रिया की आभारी हैं।

सुश्री गायत्री की अनुकूलित शिक्षण पद्धति के बाद बच्चों के सीखने और भागीदारी के स्तर में तत्काल फ़र्क देखने को मिला। धीरे-धीरे पहली कक्षा के बच्चों ने पढ़ना शुरू कर दिया, कक्षा में उनकी अन्तःक्रिया में वृद्धि हुई और ऐसा लगा कि वे पहले से कहीं अधिक समझने लग गए हैं। सुश्री गायत्री ने बताया कि उन्हें भी कक्षाएँ अधिक आनन्ददायक लगने लगी थीं। इतना ही नहीं, उनके स्कूल के अन्य शिक्षकों और अन्य स्कूलों के शिक्षकों ने भी वैसी ही विधियों को अपनाने की इच्छा व्यक्त की है।'[i]

बच्चे कैसे सीखते हैं – जब इस बारे में शिक्षक के विचार बदलते हैं तो उनके शिक्षण के तरीक़ों में भी स्वत: परिवर्तन हो सकता है। उदाहरण के लिए यदि राधा यह मानती हैं कि बच्चे तभी सीखते हैं जब वे सब कुछ लिखें, तो वे कक्षा में बहुत सारा लेखन कार्य करवाएँगी। लेकिन अगर उन्हें लगता है कि बच्चे खोज करने के माध्यम से अच्छी तरह से सीखते हैं तो वे कक्षा में पज़ल, प्रयोग और मज़ेदार-तथ्य कोनों का उपयोग करेंगी।

अपनी शिक्षण शैली को बदलना

कभी-कभी जब कोई बच्चा सीख नहीं पाता तो इसका कारण यह नहीं है कि वह सीख नहीं सकता है, बल्कि कारण यह है कि उस बच्चे के लिए सिखाने का जो तरीक़ा अपनाया गया है वह उसके लिए ठीक नहीं है। इसलिए केवल अपनी शिक्षण शैली को बदलने और बच्चे के स्तर पर आने से उसकी मदद की जा सकती है। आगे दिए उदाहरण से यह बात स्पष्ट होती है। यह रिपोर्ट स्वलीनता (ऑटिज़्म) से पीड़ित तीन साल के एक बच्चे की है। वह बोलता नहीं था और न ही किसी का ध्यान या स्नेह चाहता था। उसे विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के स्कूल में लाया गया। इस रिपोर्ट में उन तीन महीनों के अनुभव बताए गए हैं जो उसे एक शिक्षक के साथ तीन महीने के सत्र में हुए।

पार्थ ने कुछ भी सीखने या किसी के बारे में भी जानने के लिए कोई प्रेरणा या जिज्ञासा नहीं दिखाई। यहाँ तक कि जब उसे स्कूल लाया जाता था तो वह शिक्षक के सामने बैठने से मना कर देता था। वह जाकर एक कोने में फर्श पर बैठ जाता और अपने-आप में व्यस्त रहता। उसने केवल एक चीज़ में थोड़ी दिलचस्पी दिखाई, वह थी सुपर हीरो कॉमिक्स। हालाँकि वह पढ़ना नहीं जानता था, फिर भी वह घर पर कुछ कॉमिक्स के पन्ने पलटता रहता था।

हफ्तों तक पार्थ का ध्यान खींचने में असफल रहने के बाद शिक्षक ने कक्षा में पार्थ की रुचि यानी कॉमिक्स का उपयोग करने का फैसला किया। शिक्षक ने पार्थ को सामने आकर बैठने के लिए मजबूर नहीं किया; बल्कि वे भी बैठकर कॉमिक्स के चित्र बनाने लगे। एक कॉमिक स्ट्रिप खत्म करने के बाद वे उसे पार्थ के पास रख आए और अपनी सीट पर लौटकर ड्राइंग जारी रखी। शिक्षक के इस भयरहित बर्ताव से पार्थ को प्रोत्साहन मिला। धीरे-धीरे, दो महीने तक कक्षा में आते रहने के बाद, पार्थ आकर शिक्षक के सामने बैठने लगा। जब शिक्षक चित्र बनाते तो वह चुपचाप देखता रहता; धीरे-धीरे वह चित्र की तरफ इशारा करने लगा और कुछ आवाज़ें निकालने लगा। शिक्षक ने पार्थ की रुचि को सफलतापूर्वक जाग्रत कर दिया था; वह सुरक्षित महसूस कर रहा था और अपने आप ही बातचीत करने लगा था। यह प्रवेश बिन्दु था जिसमें सफलतापूर्वक सम्पर्क स्थापित हो गया था; इसके बाद धीरे-धीरे शिक्षक अन्तःक्रिया बढ़ाने और उसके साथ विभिन्न तरीक़ों से जुड़ने में सक्षम हो पाए।

एक ऐसा बच्चा,जिसके बारे में सबने सोचा था कि वह सीखने में असमर्थ है, जिसे बिल्कुल रुचि नहीं है, अब आठ वर्ष का एक औसत बच्चा है जो दोस्तों के साथ खेलना पसन्द करता है और अपने परिवेश के बारे में जिज्ञासु है। अतः यह याद रखना महत्त्वपूर्ण है कि अगर कोई बच्चा शिक्षक द्वारा अपनाए गए किसी एक तरीक़े से सीखने में विफल हो तो इसका मतलब यह नहीं है कि वह सीखने में असफल रहा है।

रुचि और जिज्ञासा जगाना और उसे बनाए रखना

किसी बच्चे के अन्तहीन सवालों ने कभी आपको थकाया होगा तो आप जानते होंगे कि बच्चे सीखना चाहते हैं। वे जिज्ञासु होते हैं और बारीक़ी से अवलोकन करते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि कक्षा के सीखने का माहौल बच्चों की सीखने की इस स्वाभाविक इच्छा को दबा देता है। जॉन होल्ट ने अपनी पुस्तक 'हाउ चिल्ड्रन फेल' में लिखा है कि, 'बच्चों के

कक्षा में असफल होने का एक कारण यह है कि वे ऊब जाते हैं; स्कूलों में बच्चों से अक्सर बार-बार एक ही कार्य करवाए जाते हैं जिसमें उनकी विस्तृत क्षमताओं का उपयोग नहीं किया जाता है। इसलिए बच्चे की रुचि समाप्त हो जाती है और वह कक्षा के कार्यों के साथ जुड़ाव महसूस नहीं करता है।' (होल्ट एंड फ्रॉम, 1964)। और अक्सर इसका मतलब यह लगा लिया जाता है कि, 'यह बच्चा सीखने में असमर्थ है।'

फिर हम बच्चों की स्वाभाविक रुचि और जिज्ञासा को कैसे बनाए रख सकते हैं?

एक तरीक़ा यह है कि 'बच्चों को पढ़ाने'के अलावा, उन्हें ख़ुद भी अवधारणाओं का पता लगाने, खोजने, समझने और लागू करने दें। अवधारणाओं को बच्चे के परिवेश से जोड़ना, उन्हें सोचने के लिए उकसाना और सिखाई गई चीज़ों पर विचार करने देना – यह सारी बातें उनकी स्वाभाविक जिज्ञासा और प्रेरणा का पोषण करती हैं। इन बातों को अपनाने वाली एक शिक्षिका की कक्षा का उदाहरण आगे दिया जा रहा है।

यह विवरण रायपुर के एक सरकारी माध्यमिक विद्यालय की सामाजिक विज्ञान की शिक्षिका के बारे में है। सुश्री जोशी ने कहा कि बच्चों को अपनी पूरी क्षमता से काम करने के लिए स्वतंत्रता की आवश्यकता होती है। यद्यपि उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि अधिगम के लिए बच्चों के साथ निरन्तर जुड़ाव आवश्यक है, लेकिन साथ ही वे स्वतंत्रता और खोजपूर्ण अधिगम की आवश्यकता को भी महत्त्व देती हैं। वे मानती हैं कि इसके लिए गतिविधि-आधारित शिक्षण विधियाँ सहायक होती हैं जिनसे बच्चों को कक्षा में प्राप्त ज्ञान को अपने स्वयं के जीवन में लागू करने का मौका मिलता है।

निजी अनुभवों से सीखना

'छोटे और बड़े उद्योग' शीर्षक अध्याय पढ़ाते समय वे बच्चों को पास के पारले-जी और जिंदल कारखानों में ले गईं। कारखानों को देखने के बाद बच्चों ने स्वयं बड़े और छोटे उद्योग की विशेषताओं और अन्तरों को सूचीबद्ध किया। प्रिंटिंग प्रेस/मीडिया के बारे में पढ़ाते समय एक अन्य कक्षा को पुस्तकों के कारखाने में ले जाया गया। नागरिकशास्त्र और सामान्य ज्ञान का अध्ययन करते हुए उन्होंने विद्यार्थियों से एक विषय चुनकर अपने गाँव में सर्वेक्षण करने के लिए कहा। सर्वेक्षण के विषय ऐसे थे जो ज़्यादातर उनके गाँव में मौजूद मुद्दों से या उनके बारे में लोगों के दृष्टिकोण या जनसांख्यिकीय संरचनाओं और पंचायत के कामकाज से सम्बन्धित थे। इन सर्वेक्षणों को कक्षा में रखा गया और यह देखा गया कि बच्चे अपने खाली समय में अपने सहपाठियों के साथ इन सर्वेक्षणों पर चर्चा करते थे।

स्वतंत्र और खोजपूर्ण अधिगम

सुश्री जोशी ने 45 मिनट की अवधि में दो कक्षाओं के बीच बारी-बारी से काम किया,दूसरी कक्षा के विद्यार्थियों ने दिए गए कार्य को जारी रखा। सुश्री जोशी ने लगभग 15 मिनट में एक अवधारणा (विभिन्न प्रकार के उद्योग) पढ़ाई और बाद में उन्होंने बच्चों को समूहों में विभाजित किया और उन्हें एक ऐसा कार्य दिया जो इस अवधारणा को उनके सन्दर्भ से जोड़ता हो (आपने अपने गाँव में जितने उद्योग देखे हों, उन सभी पर विचार करके उन्हें अपनी सीखी हुई श्रेणियों में वर्गीकृत करें)। सम्भव है कि जिस तरह के कार्य बच्चों को दिए गए थे, उससे उनकी रुचि जाग्रत हुई हो और वे शिक्षक के कक्षा में न होने पर भी कार्य करने के लिए प्रेरित महसूस करते हों। बच्चों को स्वतंत्र रूप से अवधारणा की खोज के लिए बहुत स्वतंत्रता और अवसर दिए गए और बच्चों ने उसका उपयोग ख़ुशी के साथ किया।[ii]

आकलन इस प्रकार करें जिसमें सीखने की गति और शैलियों में अन्तर का ध्यान रखा गया हो

यह निष्कर्ष निकालना कि 'यह बच्चा सीखने में ख़राब है या नहीं सीख सकता है' अक्सर, असामयिक आकलन या इस प्रकार के आकलन पर आधारित होता है जो बच्चे के अधिगम को पकड़ नहीं पाता है । माना कि प्रत्येक बच्चे के लिए अलग-अलग आकलन करना शायद व्यावहारिक नहीं है; स्कूलों को कुछ संरचना और मानकीकरण की आवश्यकता होती है। लेकिन यह सुनिश्चित करना भी महत्त्वपूर्ण है कि दिए गए सत्र में आकलन विभिन्न तरीक़ों से किया जाए ताकि बच्चे को कम-से-कम कुछ मात्रा में अपने अधिगम का प्रदर्शन करने का अवसर मिले। उदाहरण के लिए लिखित परीक्षा, मौखिक परीक्षा, प्रदर्शन करना और रचनात्मक अभिव्यक्ति जैसी गतिविधियों का संयोजन करना।

इसके अलावा, प्रत्येक बच्चा एक अलग गति से सीखता है; सतत और व्यापक मूल्यांकन के रूप में, केवल परिणाम पर ध्यान केन्द्रित करने की बजाय, हर कदम पर बच्चे के सीखने की प्रगति को मापने के लिए विभिन्न प्रक्रियाएँ रखी जा सकती हैं। आगे उसी का एक उदाहरण है।

यहाँ पिथौरागढ़ के एक शिक्षक की रिपोर्ट दी गई है, जिनकी शिक्षण-विधि बच्चे की क्षमता और गति पर केन्द्रित थी। प्रत्येक कक्षा के लिए एक एक्सेल शीट बनाई गई थी, जिसमें विद्यार्थियों के नाम और उस सेमेस्टर के दौरान उनके लिए निर्धारित अधिगम के कौशल लिखे हुए थे। चूँकि विद्यार्थी

विभिन्न पाठों के लिए अलग-अलग समय ले सकते हैं,इसलिए कक्षा में उन्हें इस बात की अनुमति दी गई कि वे प्रत्येक पाठ पर अपनी आवश्यकता के अनुसार समय लें। कौशल में महारत हासिल करने के हिसाब से विद्यार्थी की प्रगति को पहले सही के एक निशान, फिर दो निशान और फिर तीन निशान से दर्शाया गया। इसलिए किसी दिन विशेष को कक्षा में बच्चे ने जो कुछ किया, वह आंशिक रूप से उसके चार्ट पर निर्भर करता था।[iii]

संक्षेप में, यह याद रखना अत्यावश्यक है कि बच्चे के न सीख पाने के कई कारण हैं। बच्चे कैसे सीखते हैं इस सम्बन्ध में ख़ुद की धारणा,शिक्षण विधि कैसी है, विषय-वस्तु और आकलन आदि के बारे में चिन्तन करने से ऐसे वातावरण की रचना की जा सकती है जिसमें बच्चे फलें-फूलें।

विद्यार्थी का नाम	A-Z	फूलों के नाम	फलों के नाम	महीने	सम्बन्ध	लेखन	गिनती
राघव	✓	✓✓	✓✓	✓	✓✓	✓	✓
नेहा	✓	✓✓	✓	✓✓	✓	✓✓	✓✓

[i] *https://practiceconnect.azimpremjiuniversity.edu.in/a-teacher-transformed-through-training/*
[ii] *https://practiceconnect.azimpremjiuniversity.edu.in/teacher-as-the-epicentre-for-change/*
[iii] *https://practiceconnect.azimpremjiuniversity.edu.in/integrating-schools-into-social-fabric-of-community/*

References

Holt, J. C., & Fromme, A. (1964). How children fail (Vol. 5). New York: Pitman.

https://practiceconnect.azimpremjiuniversity.edu.in

रितिका गुप्ता अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में व्याख्याता हैं। वे एक मनोवैज्ञानिक और कला-आधारित थैरपिस्ट हैं। वे विशेष तौर से बच्चों के लिए मानसिक कल्याण के लिए निवारक और उसे प्रोत्साहित करने के काम में रुचि रखती हैं। उनकी रुचि के अन्य क्षेत्र इस प्रकार हैं - चिन्तनशील शिक्षणशास्त्र, स्कूलों में सामाजिक-भावनात्मक अधिगम का एकीकरण और व्यक्तित्व पर शिक्षा का प्रभाव। उनसे ritika.gupta@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है । **अनुवाद :** नलिनी रावल

स्कूली बच्चों की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ पूरी करना

श्रीलता राव शेषाद्रि

बच्चों के लिए अच्छे पोषण का महत्व

भारत के एक सामान्य सरकारी स्कूल में एक छोटी-सी बच्ची की कल्पना कीजिए। यह छोटी बच्ची छह साल की है और स्कूल जाने के लिए तैयार हो रही है। उसकी माँ भी तैयार हो रही है क्योंकि उसे सुबह 7 बजे तक खेतों में पहुँचना ज़रूरी है। उसके पास छोटी बच्ची या उसके भाई के लिए नाश्ता बनाने का समय नहीं है। बच्ची के पास मुश्किल से अपना चेहरा धोने और अपनी स्कूल यूनिफॉर्म पहनने का समय है। पिछली रात के थोड़े-से चावल बचे हुए हैं, जिसे माँ जल्दी-से अपने दोनों बच्चों में बाँट देती है। मुश्किल से एक-एक कौर चावल दोनों के हिस्से में आता है। फिर वे स्कूल की ओर भागते हैं और ठीक प्रार्थना सभा के समय पहुँचते हैं। जब वे अपनी कक्षा में दाख़िल होते हैं तो छोटी बच्ची को अपने पेट में एक परिचित गुड़गुड़ाहट महसूस होती है - वह भूखी है और दोपहर के भोजन का समय कई घण्टों बाद है। उसके सामने प्रतीक्षा भरी एक और लम्बी सुबह खड़ी है।

भारत में क़रीब 2.5 करोड़ बच्चों की यही वास्तविकता है। इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि स्कूली बच्चों के पोषण सम्बन्धी परिणाम काफ़ी चिन्ताजनक हैं और इस पर तत्काल ध्यान देने की आवश्यकता है। स्कूली आयु के दौरान पोषण कई कारणों से महत्त्वपूर्ण है।

यह न केवल बच्चे के शारीरिक स्वास्थ्य और कल्याण की भावना के लिहाज से महत्त्वपूर्ण है बल्कि बच्चे के अधिगम-परिणामों में सुधार लाने और बाद में उसे बेहतर रोज़गार दिलाने में भी सहायक होता है। ऐसा देखा गया है कि पूरे जीवनकाल में, शिक्षा का प्रत्येक अतिरिक्त वर्ष, आजीवन आय में 20% की वृद्धि करता है।

तालिका 1 : स्कूली उम्र के बच्चों में कुपोषण

	अति निर्धन	निर्धन	मध्यम	धनी	अति धनी	कुल
5-9 साल के बच्चे जो अविकसित हैं*	30.3	26.2	22.2	18.4	12	21.9
10-19 साल के बच्चे जिनका बीएमआई कम है**	27.2	26.6	26	22.2	18.2	24.1
5-9 साल के बच्चे जिन्हें एनीमिया है***	30.1	29.2	22.4	18.2	18.1	23.5
10-19 साल के किशोर जिन्हें एनीमिया है	33.4	29	28.4	28.6	23.1	28.4
साल के बच्चे जिनमें विटामिन 'डी' की कमी है	13.3	13.2	14.8	20.4	30.2	18.2
विटामिन 'डी' की कमी वाले किशोर	18.9	18.8	19.8	28.7	32.9	23.9

स्रोत: व्यापक राष्ट्रीय पोषण सर्वेक्षण (CNNS) 2016-18
* अविकसित यानी उम्र के हिसाब से ऊँचाई कम होना
** बीएमआई यानी बॉडी मास इंडेक्स जो उम्र के हिसाब से वज़न का माप है
*** एनीमिया आयरन की कमी को दर्शाता है

फिर भी भारत में कुपोषण एक गम्भीर समस्या बनी हुई है, विशेषकर स्कूली-आयु के बच्चों में (तालिका 1)। ग़रीब परिवारों से ताल्लुक रखने वाले बच्चों की संख्या सरकारी स्कूलों में सबसे अधिक होती है। उनमें से 30% के क़रीब बच्चों में, आयु के हिसाब से कम ऊँचाई और कम वज़न की समस्या पाई जाती है। इसके साथ-साथ उनमें अरक्तता (एनीमिया) की दर भी ऊँची होती है।

माँ के गर्भ में और अपने जीवन के प्रारम्भिक 24 महीनों में ही बच्चे के शारीरिक और संज्ञानात्मक विकास की नींव पड़ जाती है। इस अवधि में (पहले 1000 दिनों में), अल्प-पोषण और/या सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी बाल-विकास को अपरिवर्तनीय रूप से हानि पहुँचा सकती है। इसी तरह से स्कूली बच्चों और किशोरों में, सामान्य वृद्धि और विकास कई कारकों द्वारा निर्धारित होते हैं जैसे कि पर्याप्त पोषण जो

आयु के हिसाब से सामान्य वज़न या ऊँचाई से ज़ाहिर होता है, पोषण सम्बन्धी कमियों का अभाव (विशेष रूप से लोहा और आयोडीन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्व), एक मज़बूत प्रतिरक्षा प्रणाली जो बार-बार होने वाली बीमारी से बचाती है और सीखने की प्रक्रिया में संज्ञानात्मक और सामाजिक रूप से भाग लेने की क्षमता की रक्षा करती है।

स्कूल-आधारित पोषण और स्वास्थ्य हस्तक्षेप- जैसे कि मैक्रो व माइक्रो या सूक्ष्म पोषक तत्वों, स्वच्छ पेयजल व स्वच्छता सुविधाओं और स्वास्थ्य एवं पोषण शिक्षा मुहैया करवाना - बेहतर स्वास्थ्य और अधिगम परिणामों में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हैं। अगर इस तरह के हस्तक्षेप बड़े पैमाने पर और अच्छी तरह से लागू किए जाएँ तो इसके दूरगामी तथा सकारात्मक परिणाम होंगे।

कक्षा में पोषण सम्बन्धी समस्याओं को पहचानना

कक्षा-क्षुधा या भूख भली-भाँति पहचानी हुई बात है और यह बच्चे को और सीखने की प्रक्रिया, दोनों को नुकसान पहुँचाती है। भूखे बच्चे के संकेतों और लक्षणों को समझने के लिए इन बातों पर ध्यान दें :

- थकान और चिड़चिड़ापन, दुष्चिन्ता का बढ़ना
- ऊर्जा की कमी
- ध्यान केन्द्रित करने में असमर्थता
- हमेशा ठण्ड महसूस करना
- निराशा, उदासी, आँसू
- मिलने-जुलने में अरुचि, आक्रामकता, अशान्त व्यवहार
- अक्सर बीमार पड़ना या ठीक होने में ज़्यादा समय लगना
- विकास की कमी, शरीर का कम वज़न, माँसपेशियों या वसा की साफ़ नज़र आने वाली कमी
- अधिगम की कठिनाइयाँ

विभिन्न कारक बच्चों के कुपोषण में योगदान देते हैं, जैसे :

- अत्यधिक ग़रीबी और अन्य सामाजिक-आर्थिक कारक जैसे भूमि स्वामित्व और माँ की शिक्षा जो घर में भोजन की पर्याप्तता और विविधता का निर्धारण करती है।
- मुख्य रूप से स्वच्छ पानी और स्वच्छता की कमी के कारण बीमारियाँ व्यापक रूप से फैलती हैं, जिससे बार-बार तबियत ख़राब होती है और पोषकीय परिणामों पर असर पड़ता है।
- बच्चे की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं के बारे में सामुदायिक ज्ञान और जागरूकता की कमी।
- सरकारी कार्यक्रमों का ख़राब कार्यान्वयन, जिसके परिणामस्वरूप बच्चों को सन्तुलित आहार की कमी का सामना करना पड़ता है।

इन सभी मुद्दों को स्कूल द्वारा हल नहीं किया जा सकता है। लेकिन अगले भाग में हम कुछ ऐसी चीज़ों के बारे में जानने की कोशिश करेंगे जिन्हें स्कूल अपना सकते हैं और अपने विद्यार्थियों के पोषण सम्बन्धी कल्याण को बढ़ावा दे सकते हैं।

चित्र 1: बच्चे के पोषण के लिए 'समग्र विद्यालय दृष्टिकोण'

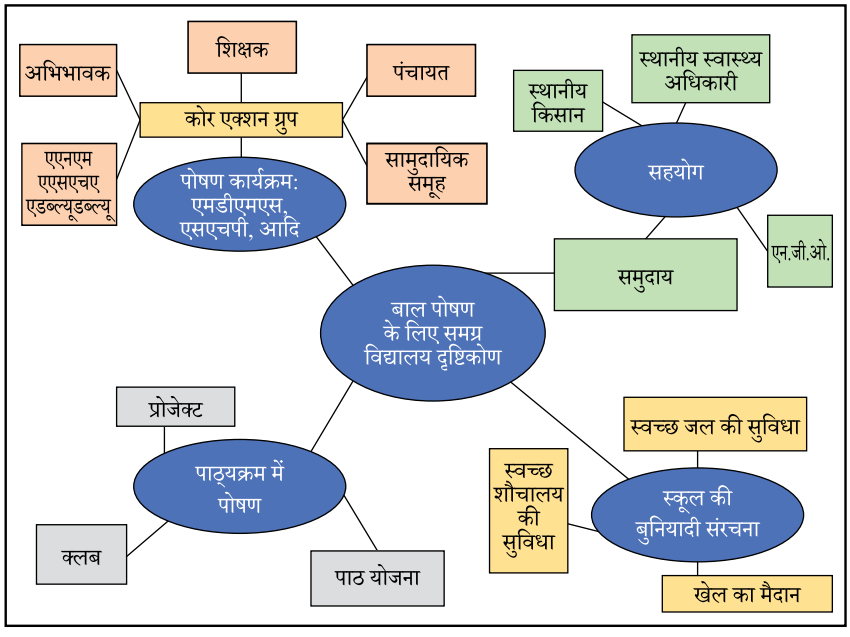

Sustain 2005 (ref. Food and Nutrition Policy for Schools, WHO 2006; p.10) से गृहीत

आप क्या कर सकते हैं?

'समग्र विद्यालय दृष्टिकोण'

यह बात बहुत ज़रूरी है कि स्कूल बच्चों की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं को एक व्यवस्थित, न्यायसंगत और संवेदनशील तरीक़े से सम्बोधित करे। विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO, 2006) इसके लिए 'समग्र विद्यालय दृष्टिकोण' का समर्थन करता है।

संक्षेप में कहें तो यह बच्चे के स्वास्थ्य और पोषण में शामिल सभी हितधारकों को एक साथ लाने और उन्हें सक्रिय रूप से इस काम में संलग्न करने का एक प्रयास है। इसमें न केवल स्कूल के शिक्षक और ऐसे अन्य लोग शामिल हैं जो भोजन मुहैया कराते हैं (रसोइया, सहायक), बल्कि बच्चे के परिवार, समुदाय, स्थानीय पंचायत और फ्रंटलाइन स्वास्थ्य कार्यकर्ता भी शामिल हैं। चित्र 1 'समग्र विद्यालय दृष्टिकोण' को दर्शाता है।

इस दृष्टिकोण का अनुसरण करने के लिए ऐसे कई क़दम हैं जिन्हें आप अपने विद्यालय में स्वास्थ्य और पोषण में सुधार लाने के लिए उठा सकते हैं।

1. एक कोर एक्शन ग्रुप बनाएँ

कई स्कूलों में पहले से ही एक *विद्यालय विकास और प्रबन्धन समिति* (एसडीएमसी) है। यह कोर एक्शन ग्रुप है क्योंकि इसमें विविध हितधारक, सदस्य के रूप में शामिल होते हैं। लेकिन देखा गया है कि अक्सर एसडीएमसी सक्रिय नहीं होती है और उसकी बैठकें कभी-कभार ही होती हैं। इसलिए यह सुनिश्चित करना ज़रूरी है कि एसडीएमसी नियमित रूप से मिले और इसके लिए हर महीने एक विशेष दिन नियत किया जाना चाहिए। इसमें बुनियादी ढाँचे और रखरखाव (शौचालय, पानी की आपूर्ति), विद्यार्थियों के कल्याण और सरकारी कार्यक्रमों के कार्यान्वयन पर बात की जा सकती है।

जिन दो कार्यक्रमों की बारीकी से निगरानी करने की आवश्यकता है, वे इस प्रकार हैं :

- मध्याह्न भोजन योजना (एमडीएमएस) : एमडीएमएस, सभी प्राथमिक स्कूलों के कक्षा I-VIII के बच्चों को गर्म, पका हुआ भोजन प्रदान करती है। इसका उद्देश्य बच्चों को कक्षा में भूख से निपटने के लिए सन्तुलित और पौष्टिक आहार देना है और इसमें चावल या चपाती के साथ दाल और सब्ज़ियाँ दी जाती हैं। चावल या गेहूँ की आपूर्ति सीधे सरकार द्वारा की जाती है। लेकिन दाल और सब्ज़ियाँ सरकार द्वारा प्रदान किए गए प्रति बच्चे के भत्ते के अनुसार स्कूल को खरीदनी पड़ती हैं – आमतौर पर यह राशि काफ़ी मामूली होती है। एसडीएमसी पंचायत से धन प्राप्त करके या समुदाय से जिन्स प्राप्त करके भोजन की गुणवत्ता को बेहतर कर सकती है। ऐसे उदाहरण मिलते हैं जहाँ समुदाय के सदस्यों या स्थानीय किसानों ने मौसमी सब्ज़ियाँ या तो मुफ़्त या कम लागत में उपलब्ध करवाए हैं या सुबह के नाश्ते में मूँगफली की चिक्की या फल (केले, अमरूद या पपीता स्थानीय फल हैं तथा पोषक तत्वों से भरपूर हैं) दिए हैं। या फिर एसडीएमसी, विद्यार्थियों को स्कूल में सब्ज़ियों का बगीचा विकसित करने में मदद करने के लिए समुदाय के जानकार लोगों की मदद ले सकता है। यह सब्ज़ी के बजट का पूरक होगा और जीव विज्ञान और/या पर्यावरण विज्ञान पाठ्यक्रम का हिस्सा भी हो सकता है।
- स्कूल स्वास्थ्य कार्यक्रम (एसएचपी) : एसएचपी सभी बच्चों की बुनियादी स्वास्थ्य जाँच करता है और साथ ही विटामिन 'ए' और आयरन का अनुपूरण तथा नियमित रूप से कृमिहरण का भी ध्यान रखता है। एसडीएमसी स्थानीय प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र/एएनएम के साथ मिलकर यह सुनिश्चित कर सकता है कि चेक-अप और अनुपूरण नियमित रूप से व सहमति-प्राप्त समय सीमा के अनुसार हो तथा विद्यार्थी स्वास्थ्य कार्ड का रख-रखाव भली-भाँति हो और उसे अद्यतन किया जाए। ऐसा करने से यह बात सुनिश्चित होगी कि छोटी बीमारियों का निदान और उपचार जल्द-से-जल्द किया जाए और बीमारी की वजह से बच्चा स्कूल से ज़्यादा दिनों तक अनुपस्थित न रहे। इसके अलावा नियमित रूप से बच्चों के विकास की मॉनिटरिंग करने की शुरूआत की जा सकती है ताकि बच्चों की लम्बाई और वज़न का ध्यान रखा जा सके तथा यह सुनिश्चित हो सके कि उन्हें पोषण सम्बन्धी कोई ख़तरा नहीं है।[i]

2. एक कार्यशील बुनियादी ढाँचा सुनिश्चित करें

स्कूलों में जल, स्वच्छता और स्वास्थ्य शिक्षा (डब्ल्यूएएसएच) एक ऐसी रणनीति है जो सभी बच्चों के लिए स्वच्छ पानी और स्वच्छता की सुविधा प्रदान करती है, साथ ही इस बात के लिए जागरूक भी करती है कि यह क्यों आवश्यक है। बच्चे, दिन का बड़ा हिस्सा स्कूल में बिताते हैं, और डब्ल्यूएएसएच(WASH) ने उनके अधिगम, स्वास्थ्य और गरिमा को प्रभावित किया है, ख़ासकर लड़कियों के लिए (यूनिसेफ 2018)।[ii]

केवल 60% बच्चों के घर में बुनियादी स्वच्छता सुविधाएँ (शौचालय) हैं। हो सकता है कि स्कूल ऐसा एकमात्र स्थान हो जहाँ वे एकान्त में एक स्वच्छ शौचालय का उपयोग कर सकते हैं।

तालिका 2 : कक्षा I-V की पाठ्यचर्या में हस्तक्षेप के सम्भावित विषयगत क्षेत्र

विषयगत क्षेत्र	उप-विषय
खाद्य और पोषण	• बच्चे कुछ खाद्य पदार्थों को पसन्द और कुछ को नापसन्द क्यों करते हैं? • खाने से पहले सब्ज़ियों, फलों को धोना • फलों का रस निकालना, अनाज अंकुरित करना और सलाद बनाना • आहार-चार्ट तैयार करना • मध्याह्न भोजन की गुणवत्ता में, स्कूल के बगीचे की सहायता से सुधार लाना
पानी और स्वच्छता	• स्कूल और गाँव में शौचालय का सर्वेक्षण : किसके पास है, कौन उपयोग करता है • पीने के पानी की शुद्धि और उसका भण्डारण • पानी का संरक्षण - पानी का उपयोग समझदारी से कैसे करें
व्यक्तिगत स्वच्छता	• हाथ धोना • दाँत माँजना, खाने के बाद कुल्ला करना • नाखून काटना • नियमित शारीरिक व्यायाम
कूड़े-करकट की सफ़ाई	• स्कूल और घर के आस-पास सफ़ाई रखना • कूड़ेदान का उपयोग करना • गीला और सूखा कचरा अलग करना
इलाज	• ओरल रिहाइड्रेशन साल्ट (ORS) बनाना • औषधीय पौधे लगाना और सामान्य बीमारियों के लिए पारम्परिक चिकित्सा का उपयोग करना • प्राथमिक चिकित्सा बॉक्स का रख-रखाव और उपयोग करना
स्वास्थ्य की निगरानी	• *थर्मामीटर का उपयोग करना • *श्वास दर, नाड़ी दर की गणना • त्रैमासिक आधार पर लम्बाई और वज़न को मापना, बीएमआई की गणना और विकास-चार्ट को बनाए रखना • हेल्थ-कार्ड तैयार करना और उसे बनाए रखना • * स्नेलन चार्ट का उपयोग करके आँखों की जाँच करना

इस तालिका को स्वास्थ्य, विकास एवं समाज टीम द्वारा कार्य एवं शिक्षा टीम के सहयोग से विकसित किया गया था, जो कर्नाटक सरकार की पाठ्यपुस्तकों की सावधानीपूर्वक समीक्षा और स्कूलों में सफल पहलों के वैश्विक सबूतों पर उपलब्ध साहित्य पर आधारित है।

*नोट : *यह उप-विषय पाठ्यपुस्तकों में नहीं हैं, लेकिन इसमें शामिल हैं क्योंकि वे कुपोषण से जुड़े हुए हैं।*

- अधिकांश बच्चों के घर में पानी की व्यवस्था होती है, लेकिन उसकी गुणवत्ता अलग-अलग होती है। स्कूल में स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने से पानी से होने वाली बीमारियों (टाइफाइड, पीलिया) की सम्भावना कम हो जाती है।
- हाथ धोने की आदत डालना और सही तरीक़े से उसका अभ्यास कराना, बच्चों को COVID-19 सहित कई संक्रामक रोगों से बचाएगा। लोगों तक सन्देश पहुँचाने के लिए पोस्टर एक अच्छा तरीक़ा है।[iii]

डब्ल्यूएएसएच के अलावा, बच्चों के कल्याण को बनाए रखने में खेल के मैदानों की बहुत बड़ी भूमिका है। सामाजिक, भावनात्मक और संज्ञानात्मक विकास के लिए खेल एक

सकारात्मक शक्ति है; यह मोटापे को भी रोकता है, जो एक ऐसी समस्या है जो आज के स्कूली बच्चों में बढ़ती जा रही है।

3. पोषण को पाठ्यचर्या में शामिल करें

स्कूली पाठ्यचर्या में पहले से ही भोजन और पोषण, स्वास्थ्य और स्वच्छता से सम्बन्धित विषयों पर पाठ और गतिविधियाँ शामिल हैं। कुछ विषयगत क्षेत्रों को सक्रिय रूप से कक्षा-शिक्षण में लाया जा सकता है जिन्हें तालिका-2 में दर्शाया गया है।

4. समुदाय के साथ सम्बन्ध स्थापित करना

समुदाय अपने बच्चों के स्वास्थ्य और कल्याण से सरोकार रखता है क्योंकि अधिकांश परिवारों के बच्चे स्कूल जाते हैं। समुदाय से समर्थन लेने से न केवल स्कूल के लिए उपलब्ध संसाधनों में वृद्धि होती है, बल्कि इससे लोगों के मन में स्कूल के प्रति अपनत्व का भाव बढ़ता है और समुदाय में उसकी सफलता भी बढ़ती है। नियमित रूप से या कभी-कभार अतिरिक्त भोजन प्रदान करना, दोपहर के भोजन के दौरान अपनी इच्छा से बच्चों का ध्यान रखना और यह सुनिश्चित करना कि सभी बच्चे अच्छी तरह से खा-पी रहे हैं, उन्हें मौज-मस्ती और व्यायाम के लिए बाहर ले जाना, सब्ज़ियों को उगाना, अंकुरित करना या पकाना सिखाना – यह सभी कुछ ऐसे तरीक़े हैं जिनसे समुदाय के सदस्य बच्चों के स्वास्थ्य और पोषण में योगदान दे सकते हैं।

निष्कर्ष

अन्ततः, स्कूल जाने वाले बच्चे का स्वास्थ्य एक संयुक्त ज़िम्मेदारी है : यह सरकार की ज़िम्मेदारी है कि वह बच्चे के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य का ध्यान रखने के लिए महत्त्वपूर्ण सेवाएँ प्रदान करे, गुणवत्ता और पारदर्शिता के लिए सरकार को जवाबदेह ठहराना समुदाय की ज़िम्मेदारी है और माता-पिता की ज़िम्मेदारी यह सुनिश्चित करना है कि उनके बच्चों का खान-पान और देखभाल अच्छी तरह से हो।

हालाँकि, स्कूल यह सुनिश्चित करने में प्रमुख भूमिका निभाता है कि बच्चों को जिन सेवाओं की आवश्यकता है, वे उन तक पहुँचें। यह कई कारणों से महत्त्वपूर्ण है :

- यह प्रारम्भिक बचपन के स्वास्थ्य और पोषण कार्यक्रमों जैसे एकीकृत बाल विकास योजना के लाभों का विस्तार करता है।
- पोषाहार सेवाओं को स्कूलों में कुशलतापूर्वक चलाया जा सकता है क्योंकि वहाँ पर कई बच्चे एक ही स्थान पर इकट्ठा होते हैं।
- प्रमाणों से पता चलता है कि अच्छा स्वास्थ्य और पोषण, शिक्षा को बढ़ावा देता है जो कि स्कूल का मुख्य उद्देश्य है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि स्कूल के स्वास्थ्य और पोषण कार्यक्रम यह सुनिश्चित करते हैं कि विद्यार्थी 'उपस्थित हैं, तैयार हैं और सीखने में सक्षम' हैं,[iv] जो सबके लिए शिक्षा के राष्ट्रीय लक्ष्य को प्राप्त करने की एक मूलभूत आवश्यकता है।

[i] *The Health, Development and Society team at Azim Premji University has developed a set of tools for child growth assessment to use in primary schools that can be accessed here: https://sites.google.com/a/apu.edu.in/the-nutrition-project/teaching-learning-materials*

[ii] *UNICEF (2018). WASH in Schools. https://data.unicef.org/topic/water-and-sanitation/wash-in-schools/ (accessed June 4, 2020).*

[iii] *https://www.nhp.gov.in/hand-washing_pg*

[iv] *Bundy et al. School-based Health and Nutrition Programs. Disease Control Priorities Project 2nd. Edition. https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK11783/*

श्रीलता राव शेषाद्रि वर्तमान में अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में सार्वजनिक स्वास्थ्य पहल विभाग में प्रोफ़ेसर और एंकर हैं। वे लगभग तीन दशक से सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में शोध, अभ्यास और शिक्षण कर रही हैं। वे बहुपक्षीय एजेंसियों, वैश्विक शोध पहलों और ज़मीनी स्तर के ग़ैर-सरकारी संगठनों के साथ कार्य कर चुकी हैं। उन्हें स्वास्थ्य नीति एवं प्रणाली विषय में शोध के साथ, कार्यक्रम कार्यान्वयन और मूल्यांकन में विशेष रुचि है। सार्वजनिक स्वास्थ्य के मुद्दों पर श्रीलता के लेख व्यापक रूप से प्रकाशित हुए हैं, जिनमें प्राथमिक स्कूल के बच्चों के सामने आने वाली पोषण सम्बन्धी चुनौतियाँ, पारम्परिक खाद्य प्रणालियाँ और उनका रूपान्तरण, और शहरी और ग्रामीण दोनों स्थानों में स्वास्थ्य और पोषण सेवाओं की पहुँच से जुड़े शासन के मुद्दे शामिल हैं। उनसे shreelata.seshadri@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद** : नलिनी रावल

बच्चे टीएलएम से आकर्षित होते हैं, जैसे तितलियाँ बगीचे से

आदित्य गुप्ता

बच्चों का मन उस तितली के समान होता है जो एक बगीचे में लगे भिन्न-भिन्न रंगों वाले फूलों और उसकी मन मोहने वाली सुगन्ध की ओर आकर्षित हो जाती है। बच्चे हमेशा अपने आस-पास होने वाली घटनाओं एवं गतिविधियों का बहुत सूक्ष्मता से अवलोकन करते हैं तथा उसमें होने वाले छोटे-से-छोटे परिवर्तन से भी आकर्षित होकर प्रतिक्रिया करते हैं। वे उस घटना एवं परिवर्तन को पूर्वज्ञान के आधार पर समझने का प्रयास करते हैं तथा अपनी समझ का विकास करते हैं। यहाँ से शिक्षक की भूमिका प्रारम्भ होती है।

शिक्षक का उसके विभिन्न रूपों और दायित्वों में से एक दायित्व यह भी हो सकता है कि वह एक तितली रूपी बच्चे के जीवन में स्वयं को उस माली के रूप में भी देखे जिसने एक बहुत ही सुन्दर, विभिन्न रंगों से सुसज्जित और सभी का ध्यान आकर्षित करने वाले एक बगीचे का निर्माण किया हो। यहाँ 'बगीचे' शब्द से मेरा आशय उस शिक्षण सहायक सामग्री से है जो अक्सर कक्षा के भीतर एवं कक्षा के बाहर विद्यार्थियों में कुछ नया जानने और सीखने की ललक को जन्म देती है। कक्षा में प्रवेश करते ही बच्चों की नज़र शिक्षक द्वारा लाए सामान पर जाती है। शिक्षक के हाथ में कोई भी नई सामग्री देख सभी बच्चे पूरी एकाग्रता से शिक्षक की ओर ध्यान देने लगते हैं।

शिक्षण सहायक सामग्री की महत्ता पर प्रकाश डालने के लिए मैं अपनी कक्षागत गतिविधियों का उदाहरण देना चाहूँगा। मैं अपने विद्यालय की कक्षा 6वीं के विद्यार्थियों के साथ हुए अपने अनुभवों को साझा करूँगा। कक्षा 6वीं में अक्सर शिक्षकों को विद्यार्थियों में एकाग्रता की कमी सम्बन्धी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। रोज़ाना कक्षा 6वीं में सामाजिक विज्ञान विषय का एक अन्तिम कालखण्ड होता है। अन्तिम कालखण्ड तक लगभग सभी विद्यार्थियों का मन भी अधिगम के प्रति उदासीन हो चुका होता है जिस कारण मुझे बहुत-सी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। यहाँ शिक्षण सहायक सामग्री ने मेरी कक्षा-कक्ष की प्रक्रिया को सुधारने तथा बच्चों में अधिगम के प्रति रुझान को बढ़ाने में बहुत सहायता प्रदान की। भूगोल की एनसीईआरटी की पुस्तक के पाठ क्रमांक 5 'पृथ्वी के प्रमुख परिमण्डल' में वर्णित पृथ्वी के 4 प्रमुख परिमण्डलों को समझाने के लिए मैंने स्वयं कुछ विषय सम्बन्धित शिक्षण सहायक सामग्री का निर्माण किया जो निम्नलिखित हैं-

1. जल-चक्र का मॉडल
2. महासागर एवं महाद्वीप की पहेली (puzzle)
3. जल का वैश्विक वितरण समझाने के लिए- बीकर, टेस्ट-ट्यूब, रंग युक्त जल और ड्रापर की सहायता लेना
4. महाद्वीप के आकार से सम्बन्धित शीट और
5. जल संरक्षण एवं जल संरक्षण के विभिन्न उपायों पर आधारित चलचित्र और वर्कशीट आदि की सहायता लेना।

उपरोक्त सभी सामग्रियों के उपयोग से कक्षा में सभी विद्यार्थियों ने अपनी सकारात्मक भागीदारी दी। इससे कक्षा-कक्ष की प्रक्रिया रोचक रही एवं मैं अधिगम आधारित सीखने के प्रतिफल को सरलतापूर्वक हासिल कर सका।

उपरोक्त लिखित विषय में अधिगम के लिए प्रयुक्त शिक्षण सहायक सामग्री को आगे विस्तारपूर्वक कक्षा प्रक्रिया एवं शिक्षण सहायक सामग्री के चित्रों की सहायता से समझाया गया है-

जलमण्डल :

क. पृथ्वी में कुल जल के वितरण को समझाने के लिए मैंने बीकर, टेस्ट-ट्यूब, रंगीन जल और ड्रापर के द्वारा प्रदर्शन (demonstration) किया, जिससे विद्यार्थियों को जल के वितरण एवं रूपों की जानकारी प्राप्त हुई। इसके साथ ही मैंने उनमें जल की महत्ता एवं उसके उपयोग को लेकर जागरूकता और संवेदनशीलता उत्पन्न करने के लिए चलचित्र –'When every drop counts' (https://youtu.be/WxdtmswwHAk) की सहायता ली। इसमें बाड़मेर, राजस्थान में जल की कमी एवं जल संरक्षण के उपायों को दर्शाया गया है। मैंने जल संरक्षण पर विद्याथियों के विचारों एवं जल संरक्षण के उपाय पर आधारित वर्कशीट सभी विद्यार्थियों को मुहैया करवाई। सभी विद्यार्थियों ने वर्कशीट में छपे विभिन्न चित्रों पर अपनी प्रतिक्रिया लिखी और उनके गाँव/ शहर में पानी बचाने के लिए किए गये उपायों को लिखा।

ख. जल-चक्र : विद्यार्थियों को जल के रूप परिवर्तन एवं वर्षा की क्रिया आदि को समझाने के लिए जल-चक्र का मॉडल(चित्र-1) तैयार किया गया। विद्यार्थियों ने इस मॉडल में विशेष रुचि दिखाई।

स्थलमण्डल : मैंने इसके अन्तर्गतमहाद्वीप, उनकी संख्या, स्थिति एवं आकार आदि को समझाने के लिए महाद्वीप की पहेली (चित्र-2) एवं महाद्वीप के आकार से सम्बन्धित शीट का निर्माण किया। मैंने सभी विद्यार्थियों को पाँच समूहों में

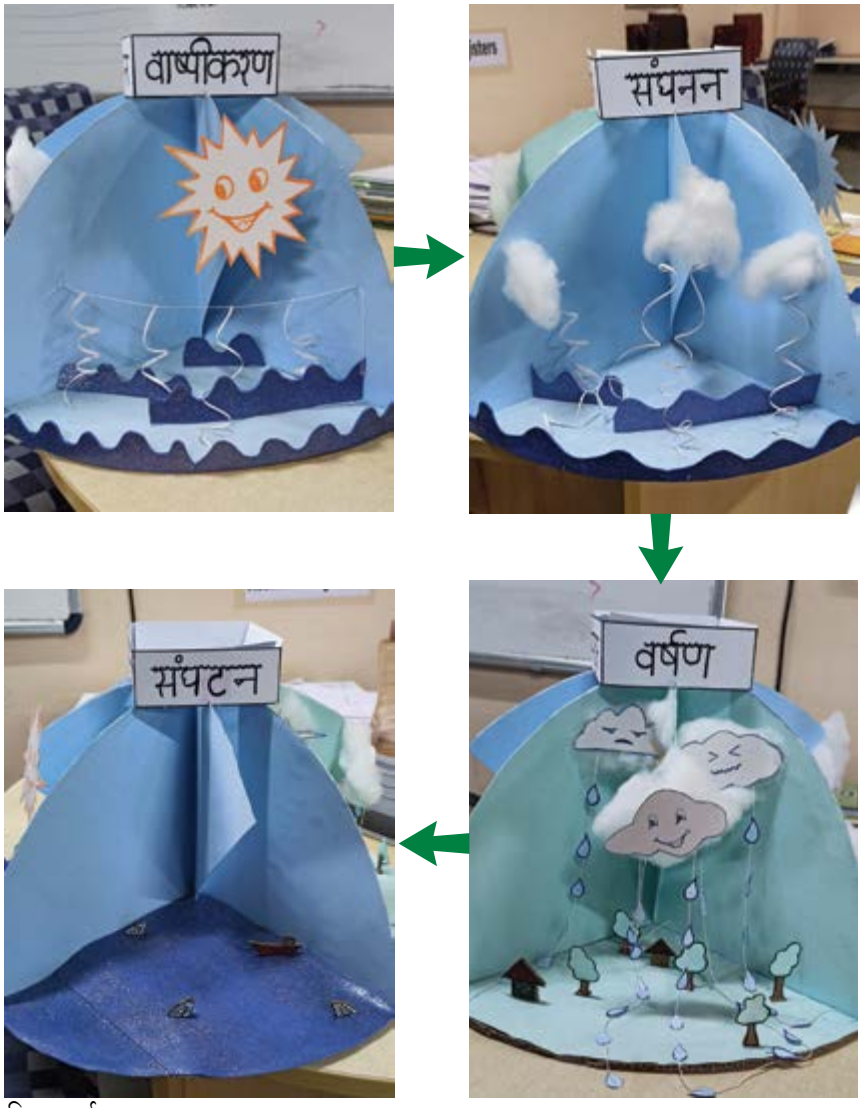

चित्र : वर्षा चक्र

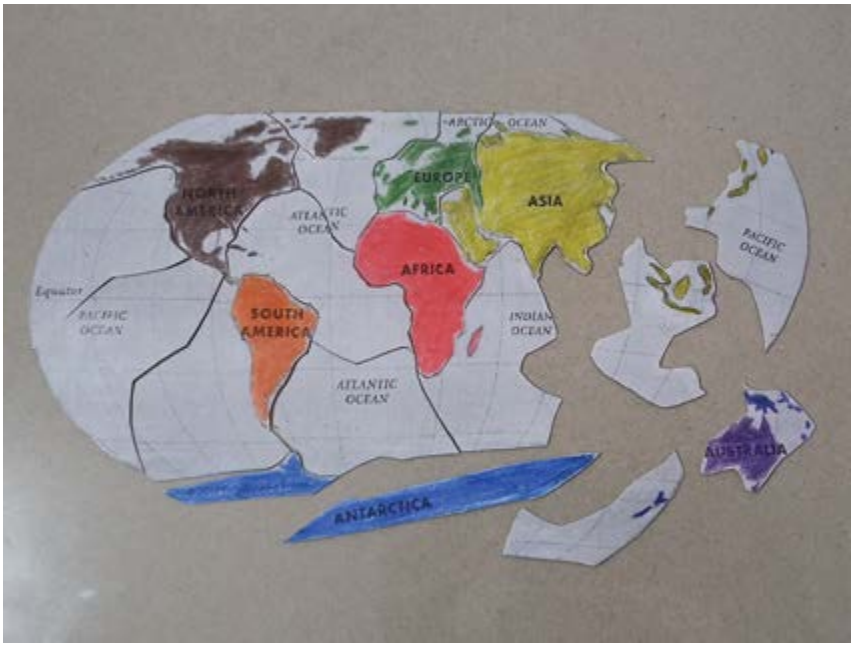

चित्र : महाद्वीप की पहेली

विभाजित किया। प्रत्येक समूह में महाद्वीप की पहेली एवं महाद्वीप के आकार से सम्बन्धित शीट प्रदान की। फिर उन्हें पहेली को जोड़ने के लिए कुछ समय दिया। सभी विद्यार्थियों ने इस गतिविधि में उत्साहपूर्वक भाग लिया तथा महाद्वीप, उनकी संख्या, स्थिति एवं आकार को लेकर अपनी समझ विकसित की।

बच्चों की प्रतिक्रिया और उनसे प्राप्त अनुभव :

बच्चों के साथ अपने अनुभवों को साझा करने से पहले में यह स्पष्ट करना चाहूँगा कि सभी तितलियाँ एक जैसे फूलों से आकर्षित नहीं होती हैं, एक ही तितली हमेशा एक ही फूल से भी आकर्षित नहीं होती है। अलग-अलग तितलियों को हमेशा अलग-अलग रंग, आकार, सुगन्ध के फूल आकर्षित करते हैं ठीक उसी प्रकार बच्चों का मन भी होता है। सभी विद्यार्थियों की सोचने-समझने की क्षमताएँ, अपेक्षाएँ और आवश्यकताएँ भी अलग-अलग होती हैं जिनकी पूर्ति हमेशा एक ही प्रकार की शिक्षण सहायक सामग्री के द्वारा नहीं की जा सकती है। ऐसी स्थिति में हमें हमेशा कोशिश करनी चाहिए कि हमारे शिक्षण सम्बन्धित प्रयास बच्चों की आवश्यकताओं और अपेक्षाओं के आधार पर परिवर्तनशील हों। इस दिशा में हमारे कार्य, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा- 2005 की एक मुख्य विचारधारा 'बाल केन्द्रित शिक्षा' को भी बल प्रदान करेंगे।

उपरोक्त सभी गतिविधियों को कक्षा-कक्ष प्रक्रिया में विद्यार्थियों के साथ साझा करने में मुझे 6 कालखण्डों का समय लगा। उपरोक्त गतिविधियों को कक्षा-कक्ष में क्रियान्वित करते समय बच्चों द्वारा बहुत से प्रश्न पूछे गए तथा बहुत-सी प्रतिक्रियाएँ प्राप्त हुईं जिनमें से कुछ का विवरण आगे है।

जब बच्चों को पृथ्वी में स्थित कुल जल के वितरण का प्रदर्शन क्रमशः करके दिखाया तो अन्त में सभी बच्चे अलग-अलग प्रतिक्रियाएँ देते हुए नज़र आए। जैसे कुछ विद्यार्थी उपयोग लायक जल की इतनी कम मात्रा (%0.0001 अथवा 1 लीटर जल में से लगभग 1 बूँद जल) को देख कर आश्चर्यचकित थे तो वहीं कुछ बच्चे दुखी और चिन्तित थे।अन्त में सभी बच्चों ने वादा किया किवे जल को व्यर्थ नहीं करेंगे तथा दूसरों को भी ऐसा करने से रोकेंगे।

जल-चक्र के मॉडल को लेकर बच्चों ने विशेष रुचि दिखाई तथा बहुत से रोचक प्रश्न किए जिनमें से कुछ निम्न हैं-

प्रश्न 1 : मॉडल में कुछ बादल रोते हुए और कुछ बादल हँसते हुए क्यों दिख रहे हैं? क्या सच में बादलों के रोने से बारिश होती है?

प्रश्न 2 :जल-चक्र में लिखे शब्दों का क्या अर्थ है?

प्रश्न 3 : ग्रीन बोर्ड पर बना जल-चक्र इस मॉडल से अलग है, ऐसा क्यों?

प्रश्न 4 : इसे आपने गोल तख़्ते पर ही क्यों बनाया है? (एक विद्यार्थी ने उत्तर भी दिया कि,'इसी तरह वर्षा भी बार-बार चकरी की तरह होती रहती है शायद इसलिए ऐसा बनाया है।')

इसके अलावा कुछ बच्चों ने मुझसे इस मॉडल को बनाने की प्रक्रिया को उन्हें सिखाने की माँग की, जो कि मेरे लिए भी एक सुखद अनुभव रहा।

उपरोक्त सभी प्रश्न तथा जिज्ञासा शायद इसलिए जाग्रत हुई क्योंकि उन्हें इस तरह पढ़ने और सीखने में मज़ा आ रहा था। इससे उनका अधिगम के प्रति रुझान बढ़ा और वे एकाग्रता के साथ कुछ नया सीख सके।

महाद्वीपों का वितरण और उनकी अवस्थिति को समझाने के लिए प्रदान की गई पहेली को हल करने में सभी बच्चे इतना मग्न हो गए थे कि उन्हें विद्यालय की छुट्टी तक का आभास नहीं हुआ। उन्हें घड़ी दिखाने के बाद भी कुछ विद्यार्थी रुककर पहेली को हल करना चाहते थे, यह एक अनूठी घटना ही थी। क्योंकि कुछ बच्चे अन्तिम कालखण्ड के पूर्ण होने से पहले ही छुट्टी की माँग करने लगते थे, परन्तु उस दिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। उपरोक्त कक्षा-कक्ष गतिविधि से मुझे यही सीख मिली कि बच्चे एक तितली के समान होते हैं जो रंग-बिरंगे फूलों (शिक्षण सहायक सामग्री) के मनोरम दृश्य एवं बगीचे को महकाती उसकी सुगन्ध से आकर्षित हो, उसके रस का पान करने वहाँ एकत्रित हो जाते हैं। एक शिक्षक के रूप में जो सबसे अधिक सुखद अनुभव है, वह यह है कि विभिन्न कक्षाओं के बच्चे उनके किसी भी कालखण्ड के खाली होने पर मुझे अपनी कक्षा में पढ़ाने के लिए बुलाते है। मेरे लिए इस अनुभव को शब्दों में लिख पाना मुश्किल है। पर उनकी यह गतिविधि यह अवश्य दर्शाती है कि उन्हें मेरी शिक्षण-अधिगम की प्रक्रियाएँ अपेक्षाकृत अधिक रिझाती होंगी, जो मेरे लिए किसी बहुत बड़ी उपलब्धि से कम नहीं है और इस अनुभव को प्राप्त करने में शिक्षण सहायक सामग्री का भी एक प्रमुख योगदान रहा है।

आदित्य गुप्ता अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी,छत्तीसगढ़ में शिक्षक हैं। उन्होंने भूगोल विषय से स्नातक किया है और 2019 से सामाजिक विज्ञान शिक्षण कर रहे हैं। एक शिक्षक के रूप में वे सामाजिक विज्ञान विषय को दोस्ताना एवं अंतःक्रियात्मक प्रक्रिया से सीखना-सिखाना पसन्द करते है। इसके अलावा वे कविताएँ, कहानियाँ एवं ब्लॉग लिखने में रुचि रखते हैं। उनसे adityatin.gupta@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अधिगम के लिए मज़ेदार तरीक़ों का उपयोग

अंकित शुक्ला

कक्षा में सीखने के लिए शिक्षक और विद्यार्थी दोनों को निरन्तर प्रयास करने पड़ते हैं। इसके लिए एक ऐसे वातावरण की आवश्यकता होती है जो प्रेरणा प्रदान करे क्योंकि दिए गए कार्य की प्रकृति, शिक्षार्थियों की अपेक्षाएँ, जानकारियों को प्रस्तुत करने के तरीक़े- इन सभी का प्रभाव अधिगम पर पड़ता है। हम बड़ी आसानी से यह देख सकते हैं कि अधिगम के विभिन्न आयाम कौन-से हैं और उदाहरणों, अधिगम की गतिविधियों तथा बच्चों द्वारा अपने अधिगम को संसाधित करने के लिए उपयोग में लाए जाने वाले विभिन्न तरीक़ों की मदद से अधिगम कैसे होता है। मुझे लगभग तीन साल तक अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ जुड़ने और जिले के कई स्कूलों का दौरा करने के बाद इन सच्चाइयों का एहसास हुआ।

2019 में, छत्तीसगढ़ सरकार ने कहा था कि गर्मियों की छुट्टियों के दौरान स्कूलों को खुला रखा जाए और स्कूल में ही ग्रीष्मकालीन शिविर में विभिन्न मज़ेदार गतिविधियाँ करवाई जाएँ। परिणामस्वरूप मैं उन तीन स्कूलों के विद्यार्थियों के साथ जुड़ सका जो एक ही परिसर में थे। जैसे ही मैं स्कूल पहुँचा, विद्यार्थी मेरे पास ऐसे आए जैसे हम पुराने मित्र हों। कुछ लड़के फुटबॉल खेल रहे थे और कुछ क्रिकेट में व्यस्त थे। हैरानी की बात यह थी कि खेल के मैदान में लड़कियाँ नहीं थीं। वे सभी अपनी-अपनी कक्षाओं में थीं।

हम प्रधानाध्यापक के कार्यालय में गए। उन्होंने मेरा स्वागत किया और कुछ लड़कों से हॉल खोलने के लिए कहा। विद्यार्थी हॉल में इकट्ठा होने लगे और कुछ ही मिनटों में हॉल लड़कों एवं लड़कियों से भर गया। मैंने अपना परिचय दिया और अपने स्कूल आने का उद्देश्य उन्हें बताया।

वातावरण में बदलाव

पहले दिन मैंने उन्हें समूहों में विभाजित किया। हमने दस समूह बनाए और प्रत्येक में लगभग नौ विद्यार्थी थे। मैंने प्रत्येक समूह को कहानी की पुस्तकें दीं और कहा कि वे उन्हें पढ़कर आपस में चर्चा करें, जो पात्रों, कहानी (कथानक), संवाद आदि पर हो सकती है। इन चर्चाओं के आधार पर उन्हें एक नाटक तैयार करना था। समूह के प्रत्येक सदस्य ने कहानियाँ पढ़ीं और फिर चर्चा और आम सहमति के बाद उन्होंने नाटक का अन्तिम प्रारूप तैयार किया।

दूसरे दिन सब लोग बड़े समूह में मिले, अपनी-अपनी कहानियाँ साझा की और उनमें आने वाले विभिन्न चरित्रों/पात्रों के बारे में बताया। इस सारी प्रक्रिया के परिणामस्वरूप हमने कठपुतली का कार्यक्रम आयोजित करने की सोची।

कठपुतली का कार्यक्रम

इसके बाद वे अपनी कहानियों के लिए कठपुतलियाँ तैयार करने में लग गए। विचार यह था कि पहले, पात्र के चेहरे का चित्र बनाया जाए, उदाहरण के लिए, अगर कहानी में एक शेर का चरित्र था तो उन्होंने शेर का चेहरा बनाया और उसमें रंग भरा, फिर उन्होंने कठपुतली को सहारा देने के लिए उसे गत्ते के एक टुकड़े पर चिपकाया। चिपकाने के बाद उन्होंने कठपुतली पर एक पतली छड़ी लगाई और बस, उनकी कठपुतलियाँ प्रदर्शन के लिए तैयार हो गईं। तीसरे दिन हमने अपना नाटक प्रस्तुत किया।

मंच तैयार था। विद्यार्थी छड़ी वाली कठपुतलियों को पकड़े हुए पर्दे के पीछे खड़े थे। वे इस तरह से खड़े हुए थे कि केवल कठपुतलियाँ नज़र आएँ। प्रत्येक समूह ने एक-एक करके अपना नाटक प्रस्तुत किया। पहला नाटक था 'ईमानदार लकड़हारा'। विद्यार्थियों ने हर बारीकी को ध्यान में रखते हुए नाटक को ख़ूबसूरती के साथ प्रस्तुत किया। प्रस्तुति के बाद प्रत्येक प्रतिभागी ने अपना और उस पात्र का परिचय दिया जिसे वे निभा रहे थे। प्रदर्शन के बाद नाटक पर सवाल-जवाब का दौर चला। कुछ सवाल उठाए गए– जैसे, अगर आदमी सभी कुल्हाड़ियाँ ले जाता तो क्या होता? उसने लोहे से बनी कुल्हाड़ी क्यों चुनी? इसके बाद जो चर्चा हुई उसने इन विद्यार्थियों को वास्तविक जीवन की घटनाओं के बारे में सोचने के लिए प्रेरित किया।

अगला नाटक था, 'बड़ा कौन'। कहानी का सन्देश, जो दर्शकों की ओर से ही आया, यह था कि अपने आकार के कारण किसी की भी उपेक्षा नहीं की जा सकती। पृथ्वी पर प्रत्येक जीव समान सम्मान और गरिमा का पात्र है। कठपुतली के प्रदर्शन के बाद विद्यार्थी बहुत उत्साहित और ख़ुश थे।

बाल-अख़बार

अगली गतिविधि के लिए मैंने बच्चों से कहा कि वे अपने गाँव में होने वाली कुछ नई चीज़ों का अवलोकन करें। अगले दिन उनके पास हमें बताने के लिए बहुत कुछ था। इसलिए मैंने पहले एक समाचार पत्र के विभिन्न हिस्सों पर चर्चा की जैसे समाचार, रिपोर्ट, विज्ञापन आदि। मैंने उन्हें फिर से समूहों

में विभाजित किया और उनसे कहा कि उनके पास जो भी समाचार हों, उन्हें लिखें।

यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि बच्चों ने छोटी-से-छोटी बात को भी बहुत ध्यान से देखा था। कई विद्यार्थियों ने पिछले

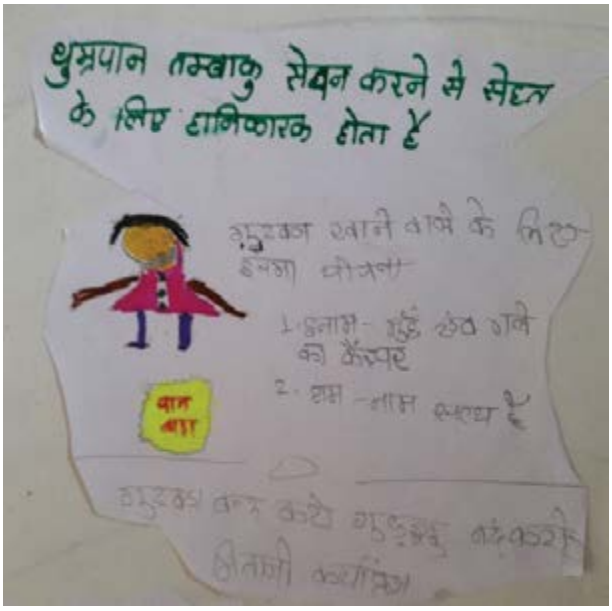

दिन हुई मूसलाधार बारिश के बारे में लिखा था। उनमें से कुछ के माता-पिता की सब्ज़ियों और फलों की दुकान थीं, उन्होंने लिखा कि इस बारिश का उन पर क्या प्रभाव पड़ा।

फिर विज्ञापनों की बारी आई। कई विज्ञापन थे– शैम्पू, दवाइयाँ और यहाँ तक कि स्कूल के एक विज्ञापन में वहाँ पर दी जाने वाली सुविधाओं पर भी प्रकाश डाला गया था। जिस विज्ञापन ने मेरा ध्यान खींचा, वह था तम्बाकू का विज्ञापन जिसमें धूम्रपान की बुराइयों के बारे में बताया गया था।

विद्यार्थियों से इन्हें एकत्र करने के बाद, अगला चरण था एक समाचार पत्र के रूप में इन्हें 'प्रकाशित' करना, अर्थात इन लेखों को एक चार्ट पेपर पर चिपकाना। यह कार्य करने के लिए एक टीम भी थी, जिसे 'प्रकाशन टीम' का नाम दिया गया। इस टीम की यह ज़िम्मेदारी थी कि वह समाचार पत्र को डिज़ाइन करे। उन्होंने चार्ट पेपर पर समाचार और विज्ञापन चिपकाए। अब हमारे पास अपना बाल-अख़बार था, बच्चों द्वारा बनाया गया अख़बार! जब इसे प्रदर्शित किया गया तो बच्चों को बहुत बड़ी उपलब्धि का अनुभव हुआ।

बच्चों ने क्या सीखा

इन गतिविधियों के बाद शिक्षकों और मैंने देखा कि अब विद्यार्थी ख़ुद को अधिक-से-अधिक व्यक्त करने लगे थे। इन गतिविधियों में सभी विद्यार्थियों को भाग लेने का मौका मिला था और इसने उन्हें अपने विचारों को सबके सामने रखने का आत्म-विश्वास दिया था। कठपुतली प्रदर्शन के लिए किए गए पूर्वाभ्यासों (रिहर्सल) से उनके मन में यह भावना जगी कि उन्हें अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करना चाहिए। उन्होंने अपने तरीक़े से कहानियों में सुधार किया जो भाषा सीखने का एक अच्छा तरीक़ा बन गया। कठपुतली के प्रदर्शन से विद्यार्थियों को मानसिक छवि निर्मित करने में सक्षम और अधिक रचनात्मक तथा कल्पनाशील बनाने के भाषा-शिक्षण के उद्देश्य भी सम्भवतः पूरे हो सके क्योंकि विद्यार्थियों ने प्रदर्शन करते समय अपनी कल्पनाओं और अपने विचारों का प्रयोग किया था।

बाल-अख़बार गतिविधि ने विद्यार्थियों को अधिक सचेत रहने और बारीकी से अवलोकन करने की शिक्षा दी। उन्होंने अपने आस-पास होने वाली हर घटना की, हर उस बात पर बारीकी से ध्यान दिया जिस पर आमतौर पर किसी का ध्यान नहीं जाता। चार्ट पेपर पर समाचारों को चिपकाने से उन्हें अपने स्थानिक ज्ञान का उपयोग करने में मदद मिली जिसका उपयोग गणित के शिक्षण में किया जा सकता है। समाचार और विज्ञापनों के रूप में अपने अनुभवों को व्यक्त करने से उन्हें अपने विचारों को सामने रखने का मौका मिला।

इन सबसे मुझे यह समझने में मदद मिली है कि अधिगम कहीं भी हो सकता है : फिर चाहे वह कक्षा हो या खेल का मैदान। हमें केवल एक चीज़ का ध्यान रखना है और वह यह है कि हमें कक्षा का वातावरण शिक्षार्थियों के अनुकूल और पूरी तरह से भयमुक्त रखना चाहिए। प्रत्येक बच्चे को किसी भी मंच पर ख़ुद को व्यक्त करने के लिए उचित स्थान दिया जाना चाहिए और तभी अधिगम भी होगा।

References

What Did You Ask at School Today? Kamala Mukunda

How People Learn: Introduction to learning Theories; developed by Linda-Darling Hammond, Kim Austin, Suzanne Orcutt, and Jim Rosso

अंकित शुक्ला 2017 में फेलो के रूप में धमतरी में अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ जुड़े। वर्तमान में वे रायगढ़ ब्लॉक (छत्तीसगढ़) में हैं और गणित विषय से जुड़े हुए हैं। उन्होंने उत्तर प्रदेश तकनीकी विश्वविद्यालय, लखनऊ से एमबीए और बीटेक किया है। फाउण्डेशन में आने से पहले उन्होंने भटिंडा में पंजाब और हरियाणा के कपास की खेती वाले जिलों में बाल अधिकारों की सुदृढ़ीकरण परियोजना में कार्यक्रम प्रबन्धक के रूप में काम किया है। वे भारत के तीन राज्यों में तपेदिक और डायबिटीज़ मेलिटस के बीच अन्तर-सम्बद्धता पर जागरण पहल द्वारा मल्टीमीडिया अभियान में जिला परियोजना समन्वयक के रूप में भी काम कर चुके हैं। उनसे ankit.shukla@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

बहुभाषी सन्दर्भ में सीखना

बिनय पटनायक

पृष्ठभूमि

झारखण्ड एक बहुभाषी राज्य है, जहाँ बत्तीस से अधिक जनजातीय समुदाय हैं जो लगभग उन्नीस जनजातीय और क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग करते हैं। इन प्रमुख सम्पर्क (लिंक) भाषाओं में से कुछ, राज्य में विभिन्न जनजातीय भाषाओं के बीच सेतु का काम करती हैं। राज्य में नौ *विशेष रूप से कमज़ोर जनजातीय समूह* (पीवीटीजी) हैं और उनकी कुछ भाषाएँ बहुत संकट में हैं।

इन सभी समुदायों के बच्चों को अपने शुरुआती स्कूली वर्षों में अधिगम सम्बन्धी बहुत असुविधाएँ होती हैं, क्योंकि उनकी घरेलू भाषाएँ हिन्दी से बहुत भिन्न होती हैं और हिन्दी स्कूल की भाषा है। राज्य के प्राथमिक विद्यालयों में प्रवेश करने वाले औसतन एक तिहाई बच्चे प्रारम्भिक कक्षाओं में ही स्कूल छोड़ देते हैं, जो देश में बच्चों के ड्रॉप-आउट की उच्चतम दर है। जो बच्चे स्कूल जाना जारी रखते हैं, वे इतने निराश हो जाते हैं कि उन्हें भी आठवीं कक्षा तक आते-आते अपनी पढ़ाई जारी रखने के लिए काफ़ी संघर्ष करना पड़ता है। क्योंकि वे अपनी पाठ्यपुस्तकों की विषयवस्तु या अपने उन शिक्षकों की बात नहीं समझ पाते जो उन्हें हिन्दी में पढ़ाते हैं और परीक्षा भी हिन्दी भाषा में ही लेते हैं। इस प्रकार बच्चों को घर और समुदाय से अधिगम के जो अनुभव प्राप्त होते हैं, उन्हें पूरी तरह से नकार दिया जाता है। इसलिए एनसीईआरटी, एएसईआर आदि के राष्ट्रीय अधिगम उपलब्धि सर्वेक्षणों में राज्य के विद्यार्थियों के अधिगम परिणाम राज्यों की सूची में सबसे नीचे दिखाई देते हैं। ख़राब प्रदर्शन के अन्य कारण हैं- राजनीतिक अस्थिरता और स्थानीय पाठ्यपुस्तकों की अनुपलब्धता।

दिलचस्प बात यह है कि राज्य ने हिन्दी और अँग्रेज़ी के बाद बारह जनजातीय और क्षेत्रीय भाषाओं को अपनी आधिकारिक भाषाओं के रूप में अधिसूचित किया है। किन्तु 40,000 प्राथमिक विद्यालयों में से किसी के पास भी कक्षा में बच्चों की मातृभाषाओं का उपयोग करने की कोई गुंजाइश नहीं थी। लगता था कि प्रशासन को उच्चतम ड्रॉप-आउट दरों, अधिगम के न्यूनतम परिणामों और शिक्षकों व विद्यार्थियों दोनों की चिन्ताजनक रूप से कम उपस्थिति जैसे मुद्दों को लेकर कोई परेशानी नहीं थी। राज्य के अधिकांश बच्चों से जुड़े इन गम्भीर मुद्दों पर कभी कोई चर्चा नहीं हुई।

शुरुआती वर्षों में बच्चों के सीखने के अनुभव और स्कूल छोड़ने के कारणों को समझने के लिए एक टीम का गठन किया गया था, जिसका नाम था मातृभाषा-आधारित सक्रिय भाषा अधिगम (एम-टीएएलएल)।

एम-टीएएलएल (M-TALL) और उसकी पहल

स्कूलों, समुदायों और उनके बच्चों की प्रतिक्रिया के आधार पर राज्य के रंग-कोडित भाषा-मानचित्रों का निर्माण किया गया जिनमें भाषाओं की प्राथमिकता का संकेत दिया गया था। इस अभ्यास से जो बात उभर कर आई, वह यह थी कि 96% उत्तरदाताओं द्वारा क्षेत्रीय बोलियों का उपयोग किया जा रहा था और केवल 4% लोग अपनी मातृभाषा के रूप में हिन्दी में बातचीत करते थे। अधिकांश बच्चे माता-पिता के साथ बातचीत करने के लिए या खेलते समय या दिन-प्रतिदिन की बातचीत में अपनी क्षेत्रीय बोलियों और भाषाओं का प्रयोग करते थे। इसलिए यह बात स्पष्ट हो गई कि बच्चों के सामने अधिगम की जो चुनौतियाँ आती हैं और जिसके कारण वे ऊब जाते हैं या स्कूल छोड़ देते हैं, वे मुख्य रूप से भाषा के अन्तर के कारण थीं।

चित्र-शब्दकोशों का विकास

इन परिणामों पर काम करते हुए, विभिन्न भाषा-विशेषज्ञ समूहों के साथ चर्चा की गई कि प्रत्येक समुदाय के बच्चे अपने शुरुआती वर्षों में क्या करना पसन्द करते हैं। फिर उन बच्चों के अनुकूल क्षेत्रों को बच्चों की मातृभाषा-आधारित, स्कूली भाषा की तैयारी पहल के लिए सामान्य थीमों के रूप में संकलित किया गया था। हमने पाया कि बच्चे खेलना, गाना, नृत्य करना, विभिन्न लोगों और दोस्तों के साथ चर्चा करना, खिलौने बनाना, खोजबीन करना, कहानियाँ सुनना/सुनाना, चित्र-कथाएँ पढ़ना पसन्द करते हैं। हमने बच्चों की पसन्दीदा कहानियाँ, गीत, नृत्य, पहेलियाँ, चित्र, खिलौने, खेल, चित्रकला और क्राफ्ट और अन्य अनुभव भी संकलित किए हैं।

2014 में एम-टीएएलएल ने नौ जनजातीय और क्षेत्रीय भाषाओं में द्विभाषी चित्र शब्दकोश 'मेरी भाषा में मेरी दुनिया' का निर्माण किया, जिनका उपयोग आँगनवाड़ियों में, शिक्षकों या माता-पिता द्वारा बच्चों के छोटे समूहों (अगर बच्चे अलग-अलग भाषा समूहों के हों तो यह अधिक उपयोगी होगा) में

किया जा सके। शिक्षक या माता-पिता और बच्चे इसे साथ मिलकर देख सकते हैं, अपनी भाषा में चित्र के विभिन्न तत्वों पर चर्चा कर सकते हैं और प्रत्येक वस्तु या घटना के बारे में अपने अनुभव साझा कर सकते हैं। इसने प्रत्येक बच्चे और सम्बन्धित शिक्षक या माता-पिता को इस बात में सक्षम किया कि वे एक समृद्ध स्थानीय शिक्षण-संसाधन के रूप में इसका उपयोग कर सकें। यह साधन चित्र, पाठ्य, साथियों, शिक्षक और माता-पिता के साथ बातचीत में सहायता करता है। इसने बच्चे (या बच्चों) की भाषा सीखने के कौशल की एक मज़बूत नींव रखने में मदद की, साथ ही दी गई अवधारणा में उनके ज्ञान, कौशल, प्रवृत्ति और रुचि का संवर्धन हुआ, पहले मातृभाषा में, और फिर समूह में भाषा की विविधता और बातचीत के स्तर तथा दिशा के आधार पर हिन्दी या अन्य भाषाओं में।

इसके बाद उपर्युक्त थीमों में से प्रत्येक के चित्रों का उपयोग विभिन्न भाषा समूहों के बच्चों के छोटे समूह में चर्चा के लिए, सीखने के प्राइमर के रूप में किया जाता है। आँगनवाड़ी सेविकाओं और शिक्षकों ने बच्चों को अपनी भाषा में चित्रों के बारे में अपने स्वयं के अनुभव और विचारों को बताने के लिए प्रोत्साहित किया।

बच्चों द्वारा उपयोग किए जाने वाले नए शब्दों को सुगमकर्ताओं ने नोट किया ताकि उनका उपयोग बाद में किया जा सके। कमरे के दो कोनों में अलग-अलग भाषा की टोकरियाँ (भाषा-टोकरी, भाषा-भण्डार) रखी गईं ताकि सुगमकर्ता बच्चों द्वारा उपयोग में लाए नए शब्दों और कहानियों को लिख सकें और बाद में कक्षा में उनका उपयोग कर सकें। धीरे-धीरे ऐसे शब्दों और कहानियों का संकलन किया गया। फिर उनकी सहायता से सम्बन्धित सुगमकर्ताओं ने अपने संस्थानों के लिए शब्दकोश, कहानी की पुस्तक, गीत की पुस्तक आदि अधिगम सम्बन्धी संसाधन तैयार किए। बच्चों की मातृभाषाओं में की गई शुरुआती चर्चा ने बच्चों को भाषा सीखने के बुनियादी कौशलों को मज़बूत करने में सक्षम बनाया। धीरे-धीरे इन चर्चाओं को हिन्दी में करने के लिए प्रोत्साहित किया गया ताकि बच्चे प्रारम्भिक भाषा-अधिगम के कौशलों का उपयोग बुनियादी हिन्दी सम्प्रेषण सीखने के लिए कर सकें। यह परियोजना पूरे समुदाय में बहुत लोकप्रिय हुई। देश के किसी भी हिस्से के ग्रामीण क्षेत्र में बच्चों और लोगों के सामाजिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर आसानी से चर्चा करने के लिए द्विभाषी चित्र शब्दकोशों में बहुत सम्भावना है।

भाषा पुलिया

चूँकि आमतौर पर यह महसूस किया गया था कि बच्चों की पूर्व प्राथमिक शिक्षा उनकी प्रथम भाषाओं में दी जानी चाहिए। इसलिए 2015 में एम-टीएएलएल ने बच्चों की भाषा की तैयारी के लिए *भाषा पुलिया* नामक पैकेज विकसित किया। इसका उद्देश्य झारखण्ड में आँगनवाड़ियों और प्राथमिक विद्यालयों की भाषा/ओं एवं बच्चों की घरेलू भाषा/ओं के बीच पुल बनाना है। इस पैकेज में बच्चों के अनुकूल सीखने की गतिविधियों को एक व्यवस्थित तरीक़े से शामिल किया गया ताकि वे इन शिक्षण गतिविधियों में सक्रिय रूप से भाग ले सकें और इसके माध्यम से उन वांछित कौशलों को प्राप्त कर सकें जो पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लिए आवश्यक हैं।

अधिगम के बारह प्रमुख पड़ावों को बारह गतिविधि गाइडबुक के माध्यम से कवर किया गया, जिसमें सभी गतिविधियों को एक क्रम में रखते हुए अधिगम-सोपान का निर्माण किया : अधिगम के आकलन के प्रारूप, गतिविधि प्रगति चार्ट, आधार-रेखा (बेसलाइन) प्रारूप, *भाषा पुलिया* के लिए एक गाइडबुक, पूरे वर्ष के लिए एक अकादमिक कैलेंडर और स्थानीय शब्दों तथा कहानियों/गीतों को सहेजने के लिए फोल्डर।

इस कार्यक्रम का बच्चों की स्कूल के लिए तैयारी और भाषा सीखने के कौशलों पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा और इस बात के स्पष्ट प्रमाण मिले कि मातृभाषा-आधारित पूर्व प्राथमिक शिक्षा प्रत्येक बच्चे को सीखने की प्रक्रियाओं का आनन्द लेने, भाषा सीखने के कौशल हासिल करने और स्कूल के लिए तैयार करने में सक्षम बनाती है जिससे वे वर्णमाला, संख्या और फिर विषय सीख सकें। बच्चे यह भी सीखते हैं कि एक टीम के रूप में अधिगम सम्बन्धी गतिविधियों में कैसे भाग लेना है और एक साथ मिलकर कैसे सीखना है।

कार्यक्रमों की सफलता

अब यह तथ्य प्रमाणित हो चुका है कि भाषा सीखने के लिए एक बहुविध दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। लेखकों ने समुदाय के भाषा-कार्यकर्ताओं के साथ बैठकर उनके समुदाय की ऐसी प्रमुख गतिविधियों का पता लगाया जो उनके क्षेत्र में होती हैं, जिनमें बच्चे सक्रिय रूप से भाग लेते हैं। उदाहरण के लिए गर्मी के मौसम में विभिन्न त्यौहारों और सामाजिक गतिविधियों में भाग लेना, ग्रीष्मकालीन त्यौहारों को मनाने के लिए विभिन्न बाज़ारों, खेतों, फलों के बागानों और आस-पास के क्षेत्रों में जाने का आनन्द लेना आदि सभी उनके दैनिक जीवन का हिस्सा हैं, जो बच्चों को वर्ष के शुरुआती भाग के लिए निर्धारित अवधारणाओं को सीखने में मदद करते हैं। उदाहरण के लिए पहली कक्षा के बच्चों को अधिगम की ढेर सारी दिलचस्प गतिविधियों में भाग लेने का अवसर दिया जाता है जैसे कि गाने गाना, एक साथ खेलना, कहानियाँ सुनना, अनुभव साझा करना, चित्र बनाना और पढ़ना आदि, ताकि वे स्कूल में सीखने की गतिविधियों में अधिक रुचि लें।

जिस तरह भाषा सम्बन्धी सामग्री का निर्माण करने वाले

लोग सामुदायिक त्यौहारों और व्यवसायों से जुड़े अवसरों, कहानियों, कविताओं, पहेलियों आदि की पहचान करते हैं, वैसे ही गणित सम्बन्धी सामग्री का निर्माण करने वालों ने रंगोली, दीवार के डिज़ाइन, समुदाय में आकृति और आकार से जुड़ी वस्तुओं का इस्तेमाल किया और दिलचस्प अधिगम-गतिविधियों की योजना बनाई जो बच्चों को गणितीय अन्वेषण, सोच और चर्चाओं में संलग्न कर सकती है।

गतिविधि-उन्मुख अधिगम के रास्ते

वर्ष की विभिन्न तिमाहियों के लिए विभिन्न प्रकार की अधिगम गतिविधियाँ तैयार की गईं, जो सभी बच्चों को उत्साहित और संलग्न कर सकें। पुस्तक के प्रत्येक अध्याय को इस तरह से डिज़ाइन किया गया था कि इसमें विभिन्न प्रकार की अधिगम परियोजनाएँ हों ताकि बच्चे विविधता का आनन्द ले सकें और अधिगम के निर्धारित लक्ष्यों तक पहुँचने के लिए पर्याप्त रूप से सीख सकें। उदाहरण के लिए भाषा की पुस्तक के लेखकों ने कहानियों, गीतों, पहेलियों, पज़ल्स, प्रहसनों और नाटकों के रूप में सामग्री को डिज़ाइन करके बहुत समृद्ध तरीक़े से भाषा को प्रस्तुत किया, जो बच्चों को इन आनन्दपूर्ण रचनात्मक गतिविधियों में संलग्न करें और विषय की सुन्दरता और विविधता की खोज करने में उनकी मदद करे। इन सभी में भाग लेते समय बच्चों को यह भी पता चलता है कि पहले से परिचित स्थानीय अनुभवों और घटनाओं का उपयोग करके रचनात्मक सामग्री को कैसे बनाया जाता है।

समुदाय द्वारा समर्थित शैक्षणिक प्रक्रियाएँ

पाठ्यपुस्तक लेखकों ने समुदाय से ही स्रोत व्यक्तियों को लिया जैसे कहानीकार, गायक, नर्तक, संगीतकार, कवि, अभिनेता, पहेली-निर्माता आदि। इन्हें स्कूल के शिक्षकों के साथ मिल कर इन गतिविधियों का संचालन करने का अवसर दिया और इस प्रकार शैक्षणिक प्रक्रियाओं को एक नया आयाम दिया गया। बच्चे, परिचित व्यक्तियों और रिश्तेदारों को शिक्षकों की भूमिका में देखकर चकित रह जाते हैं। समुदाय के, इन हुनरमंद स्रोत व्यक्तियों को कक्षा के लिए निर्धारित अधिगम के लक्ष्यों को प्राप्त करने में बच्चों का मार्गदर्शन कर पाने के अपने ज्ञान और कौशल का प्रदर्शन करने का अवसर मिलता है। समुदाय-आधारित यह दृष्टिकोण स्कूल की शैक्षणिक प्रक्रियाओं को काफ़ी समृद्ध करता है।

श्रेणीकृत पठन संसाधन

पहली कक्षा के लिए लगभग बीस, बड़ी कहानियों की पुस्तकों में भाषा और गणित से सम्बन्धित बच्चों के अनुकूल और दिलचस्प कहानियाँ हैं। उन्हें बड़े फॉन्ट में छोटे आलेख के साथ आकर्षक रूप में चित्रित किया गया है। सुगमकर्ता इन पुस्तकों का उपयोग बच्चों को चित्र दिखाने के लिए करते हैं और उन्हें सम्बन्धित पाठ्य जैसे बिल्ली, पेड़, माता आदि से परिचित कराते हैं। पहले साल में बच्चे इनका उपयोग करते हुए धीरे-धीरे अक्षर और संख्या से परिचित हो जाते हैं। दूसरे साल में बच्चों के पढ़ने के अभ्यास को समृद्ध करने के लिए कहानियों की और बीस, छोटी किताबों को डिज़ाइन किया गया जिसमें चित्रण और फॉन्ट छोटे हैं और पाठ्य सामग्री अधिक।

विषय-सामग्री के डिज़ाइनकारों ने इस बात पर ध्यान दिया कि विषय की मुख्य अवधारणाओं से सम्बन्धित गतिविधियाँ आयु-उपयुक्त, दिलचस्प, बच्चों के सन्दर्भ से जुड़ी और प्रासंगिक हों। सन्तुलन भी सुनिश्चित किया गया ताकि कोई अध्याय बच्चों के लिए लम्बा या अधिक पाठ्य वाला न हो; और इसमें शिक्षकों के लिए निर्देश तथा अन्य विवरण भी शामिल हैं। चित्र और उदाहरण ऐसे हैं जो बच्चों के समुदायों में, उनके जीवन और अनुभवों को दर्शाते हैं और बच्चों एवं सुगमकर्ताओं की सोच और आनन्द को उजागर करने के लिए डिज़ाइन किए गए हैं।

बच्चे कैसे सीख सकते हैं

यह सुनिश्चित करने के लिए कि हर बच्चा सीखे, यहाँ उन स्कूलों के कुछ प्रमुख लक्षण दिए जा रहे हैं जहाँ मातृभाषा-आधारित बहुभाषी शिक्षा (एमटीबी-एमएलई) कार्यक्रम लागू है : एक जीवन्त भौतिक और शैक्षिक वातावरण, सुविचारित शैक्षणिक योजनाएँ और प्रक्रियाएँ और सामुदायिक संसाधन-समूहों के साथ अधिगम सहयोग। साथ ही इसमें डाइट, बीआरसी, सीआरसी और गैर-सरकारी संगठनों का समर्थन भी शामिल है। स्कूल को गाँव/समुदाय के लिए अनुसन्धान और नवाचार के केन्द्र के रूप में देखा जाता है। यहाँ कुछ प्रमुख विशेषताएँ दी गई हैं :

एक तैयार स्कूल और समाज

पाठ्यपुस्तकों के साथ-साथ हमने अवधारणा नोट्स और प्रशिक्षण मॉड्यूल भी बनाए। दस जनजातीय आबादी वाले ज़िलों में भाषा मानचित्रण के माध्यम से लगभग एक हज़ार स्कूल चुने गए, जिनमें बच्चे केवल सम्बद्ध जनजातीय भाषा में बात करते थे। प्रारम्भ में इन स्कूली क्षेत्रों में माहौल निर्मित करने सम्बन्धी गतिविधियाँ की गईं ताकि शिक्षकों और समुदाय के सदस्यों को नई पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करके मातृभाषा-आधारित बहुभाषी शिक्षा (एमटीबी-एमएलई) कार्यक्रम शुरू करने की सरकार की योजना से परिचित करवाया जा सके। इन स्कूलों के शिक्षकों को नए दृष्टिकोण से जुड़ी सामग्री और शैक्षणिक प्रक्रियाओं से परिचित कराया गया और उसमें प्रशिक्षित किया गया।

पूरे समुदाय को शामिल करना

प्रत्येक स्कूल में समुदाय के संसाधन-समूह का गठन किया गया जिसमें कहानीकारों, गायकों, नर्तकों, संगीतकारों, पहेली-

निर्माताओं, खिलौना-निर्माताओं और हास्य कलाकारों आदि को शामिल किया गया। स्कूलों और समुदाय-संसाधन-समूहों की बैठकों में पाठ्यपुस्तकों को संसाधन व्यक्तियों की भूमिकाओं के साथ जोड़ा गया और इस प्रकार विभिन्न विषयों में शैक्षणिक प्रक्रियाओं को सुविधाजनक बनाया गया। फिर, स्कूलों ने एक शैक्षिक कैलेंडर विकसित किया जो यह दर्शाता है कि कौन-सा समूह बच्चों के साथ काम करने के लिए आवश्यक तैयारी के साथ किसी स्कूल विशेष का दौरा करेगा और उन्हें वांछित ज्ञान और कौशल प्राप्त करने में सक्षम करेगा।

सरकार की भागीदारी

झारखण्ड सरकार अब राज्य के दस ज़िलों के लगभग एक हज़ार स्कूलों में इन सामग्रियों और प्रशिक्षण का उपयोग करके एक मातृभाषा-आधारित बहुभाषी शिक्षा (एमटीबी-एमएलई) कार्यक्रम चलाती है जिसके लिए लेखक के मार्गदर्शन में प्राथमिक स्तर के लिए सात जनजातीय और क्षेत्रीय भाषाओं में नई पाठ्यपुस्तकों का विकास किया गया। भाषा और गणित की पाठ्यपुस्तकों ने बच्चों, शिक्षकों और समुदाय के सम्बन्धित सदस्यों में बहुत उत्साह और रुचि पैदा की है। इस समुदाय-आधारित दृष्टिकोण ने इन स्कूलों का कायापलट कर दिया है जहाँ अब सक्रिय विद्यार्थी, उत्साही शिक्षक और गतिशील समुदाय समर्थित गतिविधियाँ नज़र आने लगी हैं।

निष्कर्ष

एमटीबी-एमएलई कार्यक्रम ने स्कूलों को बदल दिया है और सम्बन्धित जनजातीय समुदायों में ज़बरदस्त उत्साह पैदा कर दिया है। शिक्षकों और विद्यार्थियों दोनों के नामांकन और उपस्थिति में बहुत महत्त्वपूर्ण सुधार हुआ है और इन स्कूलों की ड्रॉपआउट दरों में भी कमी आई है। जो कक्षाएँ कभी शान्त रहा करती थीं, उनमें अब नए सिरे से ऊर्जा, उत्साह, समुदाय का समर्थन और सीखने की गतिविधियों में सक्रिय भागीदारी देखने को मिल रही है। समुदाय के सदस्यों के सक्रिय सहयोग से तैयार की गई लोक-साहित्य पर आधारित सामग्री ने कक्षा की प्रक्रियाओं में एक नए जीवन का संचार किया है और अन्ततः सामाजिक परिवर्तन किए हैं। इन पुस्तकों को, किसी भी प्रासंगिक इलाके के सन्दर्भ से जुड़ी जानकारी के आधार पर किसी भी राष्ट्रीय भाषा के अनुकूल बनाया जा सकता है।

बिनय पटनायक झारखण्ड में एम-टीएएलएल अखरा के संस्थापक हैं। वर्तमान में वे विश्व बैंक समर्थित परियोजना, 'बिहार में शिक्षक प्रभाव का संवर्धन', के लिए कार्यान्वयन सहायता एजेंसी (आईएसए) के टीम लीडर के रूप में कार्य कर रहे हैं। वे विश्व बैंक, भारत के वरिष्ठ शिक्षा सलाहकार हैं। इससे पहले उन्होंने यूनिसेफ, भारत के साथ शिक्षा विशेषज्ञ के रूप में 8 साल से अधिक समय तक नई दिल्ली और झारखण्ड के कार्यालयों में कार्य किया। वे एक दशक तक राष्ट्रीय तकनीकी सहायता समूह (टीएसजी) की ओर से एमएचआरडी, भारत सरकार के मुख्य सलाहकार (गुणवत्तापूर्ण शिक्षा) रहे हैं। उन्होंने विज्ञान और शिक्षा विषयों पर बच्चों और शिक्षकों के लिए 180 से अधिक पुस्तकों का लेखन और अनुवाद किया है। उन्होंने कई राज्यों के पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों को बनाने में भी योगदान दिया है। वे कई राष्ट्रीय और राज्य स्तरीय पुरस्कारों से सम्मानित हैं। उनसे binaypattanayak@outlook.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

हम अभी भी अपने शिक्षकों से यही अपेक्षा करते हैं कि वे सभी बच्चों को एक ही समय में एक ही विधि से एक ही बात सिखाएँ और एक ही परिणाम प्राप्त करें। यह एक ऐसा विचार है जो 'विफल होने के लिए डिज़ाइन' किया गया है क्योंकि यह इस बात को सुनिश्चित करता है कि अधिकांश बच्चे, जो अन्यथा तीव्रबुद्धि और सक्षम हैं, वे किसी न किसी कारण से अधिगम की प्रक्रिया से बाहर रह जाएँ।

- सुबीर शुक्ला, 'हमें अनुक्रियाशील स्कूलों की आवश्यकता क्यों है !' पेज 95

अँग्रेज़ी सभी के लिए | पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए कार्यक्रम

चन्द्रा विश्वनाथन

पृष्ठभूमि

सभी के लिए अँग्रेज़ी भाषा का कौशल - यह ईएलएफ लर्निंग सॉल्यूशंस का लक्ष्य था। इस संगठन को हमने ग्रामीण और शहरी बच्चों के बीच मौजूद शैक्षिक विभाजन को दूर करने के लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए शुरू किया था। अँग्रेज़ी भाषा से सम्बन्धित अधिकांश कार्यक्रम इस बात पर ध्यान केन्द्रित करते हैं कि अँग्रेज़ी सीखने के लिए सामग्री *कैसे* डिज़ाइन करें? लेकिन हमने इस बात की शुरुआत *क्यों* से की - हम क्यों चाहते हैं कि बच्चे अँग्रेज़ी सीखें? वैसे तो परीक्षा में सफल होना और रोज़गार के बेहतर अवसर मिलना अपने आप में अच्छे कारण हैं, पर बच्चों के लिए अँग्रेज़ी सीखने का सबसे महत्त्वपूर्ण कारण है आत्मविश्वास बढ़ाना। कम आय वाले परिवारों के बहुत सारे बच्चों के साथ काम करने से यह स्पष्ट था कि भले ही यह बच्चे अन्य कौशलों में दक्ष हों, लेकिन यदि वे अँग्रेज़ी में बात नहीं कर सकते तो वे अँग्रेज़ी बोलने वाले बच्चों के सामने हीन महसूस करते हैं।

यदि अँग्रेज़ी की कक्षाओं में कठोर व्याकरण और उच्चारण नियमों को अधिक महत्त्व दिया जाता है तो बच्चे भाषा से और भी ज़्यादा डर जाते हैं। यही कारण है कि पहली पीढ़ी के अधिकांश शिक्षार्थी, अँग्रेज़ी भाषा के कौशल प्राप्त करने में असफल रह जाते हैं। और अगर कुछ बच्चे इन कौशलों को सीख भी लेते हैं तब भी उनमें इतना आत्म-विश्वास नहीं आ पाता कि वे अँग्रेज़ी में साधारण-सी बातचीत भी कर सकें।

पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए अँग्रेज़ी

हमने इस विषय पर शोध शुरू किया कि अँग्रेज़ी अधिगम किस तरीक़े से किया जाए जिससे कि बच्चे इसे सीखने की प्रक्रिया में आत्म-विश्वास का निर्माण कर सकें। हमने अपना पहला प्रयास ग्रामीण तमिलनाडु के अड़तालीस सरकारी स्कूलों के शिक्षकों के साथ किया। इन कक्षाओं में शिक्षकों ने दो मुख्य सिद्धान्तों का पालन किया – पहला, बच्चों को गलतियाँ करने देना और दूसरा, अँग्रेज़ी बोलने का प्रयास करते समय उन्हें अँग्रेज़ी वाक्यों में अपनी भाषा के शब्दों का प्रयोग करने देना।

हमने ऐसी तकनीकों का विकास करना भी शुरू कर दिया जिनसे बच्चों को अँग्रेज़ी पढ़ना सीखने में आसानी हो, ख़ासकर उनको जो केवल स्कूल में अँग्रेज़ी से रूबरू होते हैं। अँग्रेज़ी जैसी भाषा में, जिसमें अधिकांश शब्द ध्वनि-विज्ञान के नियमों का पालन नहीं करते, ऐसे में बच्चे पढ़ना सीखने की कोशिश करते समय जल्दी निराश हो जाते हैं। वे जल्द ही यह निर्णय ले लेते हैं कि अँग्रेज़ी भाषा के नियम तार्किक नहीं हैं और वे पढ़ना नहीं सीख सकते। स्कूल के कई शिक्षकों के साथ काम करते हुए हमने अँग्रेज़ी पढ़ना सीखने के लिए एक सरल, श्रेणीकृत, ध्वनि-विज्ञान आधारित संरचना विकसित की।

आज ईएलएफ अँग्रेज़ी कार्यक्रम का उपयोग भारत के 115 स्कूलों में किया जा रहा है - इनमें मिज़ोरम के 40 सरकारी स्कूल, असम के 2 और तमिलनाडु के 73 स्कूल शामिल हैं। कार्यक्रम ने बार-बार यह दिखाया है कि जब शिक्षक स्पष्ट

लक्ष्य निर्धारित करते हैं और इस विश्वास के साथ आगे बढ़ते हैं कि सभी बच्चे अँग्रेज़ी सीख सकते हैं तो बेहद अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।

क्रियाविधि

आमतौर पर प्रत्येक कक्षा एक ऑडियो या वीडियो पाठ के साथ शुरू होती है। इसके बाद सर्कल-टाइम की गतिविधियाँ और छोटे समूह की गतिविधियाँ होती हैं जो बातचीत को प्रोत्साहित करती हैं। जोड़ी में किए गए प्रश्न-उत्तर अभ्यास यह सुनिश्चित करते हैं कि हर बच्चे को बोलने का मौका मिले। रोल-प्ले और गानों से बच्चों को अँग्रेज़ी के प्रति अपना डर दूर करने में मदद मिलती है। चार महीने की छोटी अवधि में हमने पाया कि कम से कम 51% बच्चे सामान्य बातचीत सम्बन्धी प्रश्नों का जवाब अँग्रेज़ी में दे पा रहे थे।

हमने पढ़ने के कौशल को आठ सरल स्तरों में विभाजित किया। अक्षर की ध्वनियों के साथ शुरू करते हुए हम एक-एक करके शब्दों, वाक्यों, अनुच्छेदों और कहानियों की ओर बढ़े। हर स्तर पर कुछ नई ध्वनियों, मिश्रणों और शब्दों को पेश किया गया। प्रत्येक स्तर पर सामग्री का सावधानीपूर्वक श्रेणीकरण किया गया ताकि बच्चे के सामने केवल वही शब्द आएँ जिन्हें वह पहले से सीखी गई ध्वनियों की मदद से डीकोड (decode) कर सके। प्रत्येक चरण में प्रस्तुत कुछ साइट वर्ड्स (sight words) के कारण बच्चे वाक्य और अनुच्छेद पढ़ने में तेज़ी से प्रगति कर सके।

इस लेख में हम अपनी इस यात्रा से प्राप्त कुछ सीखों को साझा कर रहे हैं। साथ ही यह भी बताने का प्रयास है कि शिक्षक इन विचारों को अपनी अँग्रेज़ी की कक्षा में कैसे उपयोग में ला सकते हैं।

अँग्रेज़ी बोलने की कक्षा

बोलने से पहले सुनना

इससे पहले कि हम बच्चों से कुछ बोलने के लिए कहें, शिक्षिका को उन्हें वह करके दिखाना चाहिए जिसकी अपेक्षा उन्हें बच्चों से है। हम अपनी कक्षाओं में इंटरैक्टिव वीडियो की सहायता से ऐसा करते हैं, लेकिन शिक्षक *शो एंड टेल* में मदद करने के लिए वास्तविक जीवन के उदाहरणों या सरल पोस्टरों का उपयोग भी कर सकते हैं। उदाहरण के लिए यदि हम चाहते हैं कि बच्चे कक्षा में वस्तुओं के बारे में एक सरल-सी बातचीत का अभ्यास करें तो शिक्षिका इस तरह से शुरू करती हैं : *What is this? This is a pen. What is that? That is a fan.*

वे वस्तुओं की ओर इशारा करते हुए सवाल पूछती हैं। वे उन वस्तुओं का चयन करती हैं जिनका अँग्रेज़ी शब्द बच्चे स्वाभाविक रूप से जानते हैं। मिसाल के तौर पर *फैन* और *टेबल* जैसे शब्द बच्चों की शब्दावली में इतनी गहराई से समाए हुए हैं कि वेल्लोर के एक सरकारी स्कूल में बच्चों ने ज़ोर देकर कहा कि यह तो तमिल शब्द हैं और उन्हें इनके अँग्रेज़ी शब्दों की जानकारी नहीं है!

इस गतिविधि के दौरान शिक्षिका बच्चों से जवाब देने की अपेक्षा नहीं करतीं - वे ख़ुद सवाल पूछती हैं और जवाब देती हैं तथा बच्चे सुनते हैं। हम शिक्षकों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करते हैं कि वे बच्चों को समझाने के प्रयास में, प्रत्येक शब्द का मातृभाषा में अनुवाद न करें। इस प्रकार बिना अनुवाद किए, शिक्षकगण चित्रों और चेहरे के हाव-भाव से अभिव्यक्ति करके बच्चों को यह समझने में मदद करते हैं कि वे क्या कह रहे हैं।

सर्कल-टाईम के अभ्यास

शिक्षक की बात सुनने के बाद बच्चे सर्कल-टाईम में प्रश्नों और उत्तरों का अभ्यास करने के लिए तैयार हो जाते हैं। पहला बच्चा पड़ोसी बच्चे से एक सवाल पूछता है। वह बच्चा उसका उत्तर देने के बाद अपने पास बैठे हुए दूसरे बच्चे से प्रश्न पूछता है, फिर अगले बच्चे की बारी आती है। इस तरह बारी-बारी प्रत्येक बच्चे को बोलने का मौका दिया जाता है। इस बिन्दु पर गलतियों को सुधारा नहीं जाता है। यदि बच्चे संकोच करते हैं तो शिक्षक दूसरे बच्चे के साथ रोल-प्ले करते हैं और फिर से बातचीत करके दिखाते हैं।

छोटे समूह में अभ्यास

शिक्षक 4-5 बच्चों के समूह बनाते हैं ताकि वे सीखी हुई सरल बातचीत का अभ्यास करें। छोटे समूहों में बच्चों को इस बात की चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं होती कि कोई वयस्क उनका निरीक्षण कर रहा है; वे बोलने की कोशिश कर सकते हैं, हँस सकते हैं और मज़े कर सकते हैं। धीरे-धीरे शिक्षक

बच्चों की आवाज़ों की गूँज के अभ्यस्त हो जाते हैं - आख़िर अँग्रेज़ी बोलने की कक्षा शान्त कैसे रह सकती है!

चित्रों का वर्णन करना

जॉन होल्ट का कहना है कि जब बच्चों से *कुछ बोलने* के लिए कहा जाता है तो वे केवल तभी जवाब दे सकते हैं जब उनके पास बोलने के लिए कुछ हो। अगर हम शुरुआत में ही बच्चों से किसी घटना का वर्णन करने या किसी विषय पर अपनी राय देने के लिए कहें तो उन्हें अपने विचारों को व्यवस्थित करने और ख़ुद को अभिव्यक्त करने के लिए बहुत मेहनत करनी पड़ सकती है।

तस्वीरें बातचीत की शुरुआत करने का बहुत अच्छा साधन हैं। सवाल पूछने और देखी हुई चीज़ का वर्णन करने में बच्चों की मदद करने के लिए हम चित्रों का उपयोग करते हैं। यदि बच्चे अपने आप बोलने के लिए तैयार न हों तो शिक्षक सरल सवाल पूछकर उनकी मदद कर सकते हैं, जैसे *Who is in the picture? Where are they? What are they doing?*

अगर हम कक्षा में उपयोग किए जाने वाले चित्रों को बच्चे के परिवेश से ही लें तो बहुत अच्छा होगा। बच्चे के पर्यावरण से उनकी परिचित वस्तुओं और दृश्यों का उपयोग करने से बच्चों को अँग्रेज़ी इतनी अपरिचित नहीं लगती बल्कि अपनी-सी लगती है।

अनुक्रमण और कहानी सुनाना

कहानी सुनाने से अनुक्रमण कौशल का निर्माण होता है जो सम्प्रेषण के लिए महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक बच्चे को एक कहानी-कार्ड दिया जाता है और वह उस चित्र के बारे में एक या दो वाक्य बताने की कोशिश करता है। वे सीखते हैं कि एक समूह के रूप में किसी कहानी को एक साथ कैसे सुनाया जाए।

कैसे-करें सम्बन्धित सरल वीडियो, बच्चों को चरण-दर-चरण निर्देश बनाने में मदद करने के प्रभावी तरीक़े हैं। उदाहरण के लिए 'छड़ी वाली कठपुतलियाँ (स्टिक पपेट) कैसे बनाएँ' विषय पर वीडियो दिखाते समय बच्चों को साथ-साथ बोलने के लिए इस तरह से प्रोत्साहित किया जाता है :

चरण 1: Take a chart paper.

चरण 2: Draw the picture of a dog on it.

चरण 3: Cut out the picture.

चरण 4: Paste it on an ice-cream stick.

चरण 5: Your stick puppet is ready!

रोल-प्ले

आत्म-विश्वास पैदा करने के लिए दर्शकों के सामने बोलने से बेहतर तरीक़ा और कोई नहीं है। बच्चे रोल-प्ले के लिए बहुत सरल-से संवाद याद करते हैं। समूहों में अभ्यास करने के बाद बच्चे कक्षा के सामने रोल-प्ले करते हैं। यह रोल-प्ले छोटे होने चाहिए और उनमें दोहराव वाले सरल संवाद होने चाहिए, जिन्हें याद रखना आसान हो। यहाँ हमें रंगमंच की सामग्री या वेशभूषा या निपुणता के साथ संवाद बोलने पर ध्यान नहीं देना है - सिर्फ़ आत्म-विश्वास बढ़ाने के लिए प्रदर्शन को महत्व देना है।

धाराप्रवाह अँग्रेज़ी पढ़ना

हालाँकि बोलने से आत्म-विश्वास बहुत बढ़ता है, लेकिन बच्चों को धाराप्रवाह रूप से अँग्रेज़ी पढ़ना सीखना भी ज़रूरी है। इससे उन्हें न केवल स्कूल में मदद मिलती है बल्कि वे स्वतंत्र रूप से उन कहानियों और पुस्तकों को भी पढ़ पाते हैं जो उन्हें पसन्द हैं और साथ ही उनकी समझ और शब्दावली-कौशल का निर्माण भी होता है।

ध्वनि विज्ञान के कई कार्यक्रम वर्ण की ध्वनियों और सम्मिश्रण के बारे में सिखाते हैं। लेकिन उनमें से बहुत कम ऐसे हैं जो बच्चे को तीन-अक्षर के शब्दों को पढ़ने के आगे ले जाते हैं। जब बच्चों को लम्बे शब्दों और वाक्यों को पढ़ना सीखना होता है तो ध्वनि विज्ञान के दृष्टिकोण को छोड़ दिया जाता है। फिर उन्हें पाठ्य को देखकर पढ़ना और वर्तनी याद रखना सिखाया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप कई बच्चे धाराप्रवाह रूप से नहीं पढ़ पाते। अपने कार्यक्रम में हमने ध्वनि-विज्ञान दृष्टिकोण का उपयोग न केवल अक्षरों से छोटे शब्दों को पढ़ने के लिए किया, बल्कि उसकी सहायता से वाक्य, छोटे अनुच्छेद और कहानियाँ पढ़ने के लिए भी किया।

जिस तरह बच्चों को अँग्रेज़ी बोलना सिखाते वक़्त उनका आत्म-विश्वास बढ़ाने की ज़रूरत होती है, वैसे ही अँग्रेज़ी पढ़ने के लिए भी उन्हें आत्म-विश्वास की ज़रूरत होती है। ऐसी कई तकनीकें हैं जो इस आत्म-विश्वास के निर्माण में मदद करती हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

खेलो और पढ़ो

शब्दों को पढ़ने में बच्चों की मदद करने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है खेल। शिक्षक सरल *मेमोरी मैच* और *बिंगो कार्ड* गेम बनाने के लिए सरल चित्र और शब्द-कार्ड बना सकते हैं जिन्हें बच्चे बार-बार खेलना पसन्द करते हैं।

शब्द बिंगो
शिक्षक शब्द-ग्रिड बनाते हैं और बच्चों से कहते हैं कि वे दिखाए गए चित्रों के अनुरूप शब्दों को काटते चलें। उन्हें हर पंक्ति/स्तम्भ पूरा करने के लिए अंक दिए जाते हैं।

मेमोरी मैच
बच्चे छोटे समूहों में खेलते हुए चित्रों और शब्दों के जोड़े को ढूँढ़ते हैं।

ईएलएफ सेन्टेंस बिल्डर एक फ्लिप-बुक है जो बच्चों को शब्दों को पढ़ते हुए, वाक्यों को पढ़ने तक ले जाने में मदद करता है। शिक्षक एक पुराने कैलेंडर या स्पाइरल नोटपैड का उपयोग करके अपनी आवश्यकतानुसार यह फ्लिप-बुक बना सकते हैं। बच्चे वाक्य की शुरुआत या अन्त को बदलने के लिए बाएँ या दाएँ आधे भाग को फ्लिप कर सकते हैं और जो नया वाक्य बनता है उसे पढ़ सकते हैं। यह गतिविधि समूहों के साथ-साथ व्यक्तिगत रूप से भी की जा सकती है।

दोहराना, दोहराना, दोहराना

दोहराव वाले पाठ्य शुरुआती-पाठकों को अधिक पढ़ने का आत्म-विश्वास देते हैं।

She likes to jump.
She likes to jump and skip.
She likes to jump and skip in the rain.
She likes to jump and skip in the rain all day.

विस्तारित वाक्य जो पढ़ने को आसान बनाते हैं

वाक्य का विस्तार करें

सरल कार्डों का उपयोग करके बच्चों को वाक्य बनाने और पढ़ने में मदद की गई

इसे सरल रखें

शुरुआती-पाठकों को डिकोडेबल शब्दों के साथ सरल पाठ्यों की आवश्यकता होती है। वाक्य छोटे होने चाहिए; फ़ॉन्ट बड़ा होना चाहिए और शब्दों के बीच बहुत अधिक खाली स्थान होना चाहिए।

शुरुआती-पाठकों के लिए उपयुक्त	शुरुआती-पाठकों के लिए अनुपयुक्त
Meera gets a new pen. The pen is red. She puts it in her bag. Meera likes her new pen.	Meera buys a new pen from the departmental store. The pen is shiny and smooth and has a golden nib. Her mother asks Meera to keep it inside her pencil box and promise her that she will keep it safe.

कक्षा के बाहर भी अँग्रेज़ी का प्रयोग

हम यह कैसे सुनिश्चित करें कि बच्चे कक्षा के बाहर भी अँग्रेज़ी का उपयोग करें? जिन स्कूलों में हमने काम किया है, वहाँ हमने *वॉक 'एन' टॉक* कार्यक्रम शुरू किया जिसका उद्देश्य था अँग्रेज़ी को कक्षा से बाहर और बच्चे के घर में ले जाया जाए। हम चाहते थे कि जब बच्चे स्कूल से घर वापस जाएँ तो अँग्रेज़ी का उपयोग करें। लेकिन जिन समुदायों में कोई भी अँग्रेज़ी नहीं जानता है, वहाँ यह कैसे सम्भव हो पाएगा?

वॉक 'एन' टॉक कार्यक्रम में, जब बच्चे शाम को स्कूल से घर जाते थे तो वे समूह बनाकर अपने अड़ोस-पड़ोस में घूमते और वयस्कों से अँग्रेज़ी में सवाल पूछते। बच्चे प्रश्न का अनुवाद तमिल में करते और अपने माता-पिता, दादा-दादी और अन्य वयस्कों को यह सिखाते कि अँग्रेज़ी में कैसे जवाब दें। जब बच्चों ने जितनी बहुत भी अँग्रेज़ी सीखी थी वह वयस्कों को सिखाई तो पूरे समुदाय को उनपर गर्व हुआ और इससे उनका आत्म-विश्वास बढ़ा।

हर उपलब्धि का जश्न मनाना

यदि अँग्रेज़ी सीखने का लक्ष्य है आत्म-विश्वास पैदा करना, तो बच्चों की उपलब्धियों का जश्न हर कदम पर मनाया जाना चाहिए। आमतौर पर, प्रत्येक कक्षा में केवल अव्वल आने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कृत किया जाता है या सराहा जाता है। लेकिन अगर हम चाहते हैं कि हर बच्चा अँग्रेज़ी सीखे तो हमें *प्रगति* का जश्न मनाना चाहिए, न कि *प्रवीणता* का।

प्रत्येक सत्र के अन्त में हम बच्चों के लिए एक *कौशल-मेला* आयोजित करते हैं। पूरे स्कूल में उत्सव का माहौल होता है।

स्कूल में *अक्षर स्टॉल, शब्द स्टॉल, वाक्य स्टॉल* और *चित्र स्टॉल* लगाए जाते हैं। बच्चे अपने स्तर का कोई भी स्टॉल चुन सकते हैं और उस स्टॉल के कार्ड पढ़ने की कोशिश कर सकते हैं। वे एक चित्र चुन सकते हैं और उसके बारे में सवालों के जवाब दे सकते हैं। यदि वे अधिकांश प्रश्नों का सही उत्तर देते हैं तो उन्हें अपनी डायरी के लिए एक स्टिकर या कार्ड मिलता है। कुछ स्कूलों में माता-पिता को अपने बच्चों की प्रगति देखने के लिए आमंत्रित किया गया था। हर उपलब्धि का जश्न मनाया जाता है, चाहे वह कितनी भी छोटी क्यों न हो।

इस बात पर केवल विश्वास करना ही काफ़ी नहीं है कि हर बच्चा अँग्रेज़ी सीख सकता है, चाहे उसकी सामाजिक या आर्थिक पृष्ठभूमि कुछ भी हो; यह भी ज़रूरी है कि हम बच्चों को ख़ुद पर विश्वास करना भी सिखाएँ। जब हम बच्चों में कौशलों के साथ-साथ उनके आत्म-विश्वास का निर्माण भी करते हैं तो हम ऐसी नई पीढ़ी के बच्चों का निर्माण करते हैं जिनमें, जो कुछ भी वे चाहते हैं उसे हासिल करने का आत्म-विश्वास होता है।

चन्द्रा विश्वनाथन ईएलएफ लर्निंग सॉल्यूशंस की संस्थापक निदेशक हैं। इस संगठन का लक्ष्य है पूरे भारत में बच्चों, युवाओं और वयस्कों के लिए अँग्रेज़ी भाषा-कौशल सुनिश्चित करना, विशेष रूप से अँग्रेज़ी सीखने वाले पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए। चन्द्रा और ईएलएफ की अँग्रेज़ी टीम ने अँग्रेज़ी सीखने के लिए कई नवाचारी शिक्षण सामग्रियाँ विकसित की हैं जिनका उपयोग सौ से अधिक स्कूलों में शिक्षकों और बच्चों द्वारा किया जा रहा है। शिक्षा के ग़ैर-लाभकारी संगठन एआईडी इंडिया का हिस्सा होने के नाते चन्द्रा को सरकारी स्कूलों में शैक्षिक अनुसन्धान, पाठ्यक्रम, प्रशिक्षण और कार्यान्वयन कार्यक्रमों में 20 से अधिक वर्षों का अनुभव है। सर्वशिक्षा अभियान (SSA), तमिलनाडु सरकार, स्कूलों और गैर-सरकारी संगठनों के लिए, प्राथमिक शिक्षा की रिसोर्स पर्सन और प्रशिक्षिका के रूप में चन्द्रा ने, बच्चों में अधिगम परिणामों में सुधार लाने की दिशा में, सरकारी स्कूलों के 10,000 से अधिक शिक्षकों के साथ काम किया है। उनसे chandra.aid@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

बच्चे 'भाग' से क्यों डरते हैं

गोमती राममूर्ति

पाँच साल पहले मैं अपने स्कूल की गणित प्रयोगशाला पर एक पेपर प्रस्तुत कर रही थी। प्रस्तुति के बाद चर्चा में मुझसे पूछा गया, 'हम अन्य अंक गणितीय संक्रियाओं में एक अंक से शुरू करते हैं लेकिन भाग में हम उच्च स्थानीय मान से क्यों शुरू करते हैं?'

मेरा उत्तर था, 'यदि स्थानीय मान के बारे में आपकी समझ अच्छी है तो यह आवश्यक नहीं है कि आप इकाई अंक से ही संक्रिया शुरू करें, इसे विपरीत क्रम में भी किया जा सकता है। इसी तरह भाग में भी आप किसी भी तरह से भाग शुरू कर सकते हैं।'

वह सवाल अब भी मेरे दिमाग़ के एक कोने में है। चार बुनियादी अंकगणितीय संक्रियाएँ करते समय हम जिस नियम का पालन करते हैं, वह एल्गोरिदम (algorithm) स्थापित करने के लिए है। लेकिन यह कोई पक्का नियम नहीं है।

भाग सभी अंकगणितीय संक्रियाओं में से सबसे कठिन है। बच्चे इससे डरते हैं क्योंकि इसमें बहुत सारे नियम शामिल हैं, विशेष रूप से लम्बे भाग, जो प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों के लिए सबसे कठिन हैं। स्कूलों में जब हम नियमों/एल्गोरिदम का पालन करने के रूप में भाग शुरू करते हैं तो हम भाग के वास्तविक अर्थ को समझाने में विफल हो जाते हैं। भाग के नियम एक प्रक्रिया हैं लेकिन अवधारणा को समझने के लिए तर्क और ध्यानपूर्वक विश्लेषण करने की आवश्यकता है।

अवधारणा को समझना

संज्ञानात्मक वैज्ञानिक और लेखक डैनियल विलिंगम ने एक उदाहरण दिया है। इससे बेहतर उदाहरण नहीं मिल सकता; वे कहते हैं कि, अमरीका में छठी कक्षा के लगभग 25% बच्चों को लगता है कि = चिह्न का मतलब है *यहाँ जवाब लिखें* । वे यह नहीं समझते हैं कि = चिह्न का अर्थ *समानता* या *गणितीय समानता* है। (ACT, अमेरिकन एजुकेटर)

कक्षा में क्या आवश्यक है? एनसीएफ (2005) के गणित के आधारपत्र में एक ऐसे पाठ्यक्रम की सिफ़ारिश की गई है जो महत्वाकांक्षी और सुसंगत हो। साथ ही इसमें कहा गया है कि गणित सीखना हर बच्चे का अधिकार है। और ऐसा करने के लिए इसमें यह अनुशंसा की गई है कि स्कूली गणित, गतिविधियों पर केन्द्रित होना चाहिए।

इसलिए भाग में 'गणित' के विचार को सामने लाने और अपनी कक्षा के प्रत्येक बच्चे को इसे सिखाने के लिए मैंने भाग की कक्षाओं में गतिविधि-उन्मुख दृष्टिकोण अपनाने का प्रयास किया है। मैं यह बात सुनिश्चित करती हूँ कि मेरे सभी विद्यार्थी आसानी से भाग करना सीख सकें। इन्हीं विचारों को इस लेख में प्रस्तुत किया गया है।

बच्चों के लिए भाग करना मुश्किल क्यों है?

समस्या बच्चों के साथ नहीं बल्कि उसे सिखाने के तरीक़े में है। यहाँ कुछ ऐसे सवाल दिए गए हैं जिनपर हमें सोच-विचार करना चाहिए और पूछना चाहिए कि क्या हम अपने कक्षा-शिक्षण में इन्हें सम्बोधित कर रहे हैं :

1. भाग क्या है?
2. वास्तविक जीवन में इसका उपयोग कहाँ किया जाता है?
3. क्या हमारे वास्तविक जीवन में ऐसी कोई स्थिति आती है जहाँ हम चार या पाँच अंकीय संख्या को तीन अंकीय संख्या से भाग करते हैं? (बहु-अंकीय गणना)
4. और अगर ऐसी कोई स्थिति है तो कितने लोग कैलकुलेटर के बिना इसे कर सकते हैं?

मैं यहाँ एक महत्त्वपूर्ण बात का उल्लेख करना चाहूँगी। स्कूल में इन अवधारणाओं को औपचारिक रूप से सीखने से पहले बच्चे अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में बुनियादी अंकगणित करने में सक्षम होते हैं, जिसमें भाग और भिन्न भी शामिल हैं। (परमार, 2003; मिक्स और अन्य, 1999)। एनसीटीएम (नेशनल काउंसिल ऑफ टीचर्स ऑफ मैथमेटिक्स) के एक प्रकाशन के अनुसार, जब विद्यार्थी समझ जाते हैं तो वे सवाल हल करने के लिए अपनी ही प्रक्रिया विकसित कर लेते हैं। भाग के शिक्षण-अधिगम को अधिक सार्थक बनाने के कई

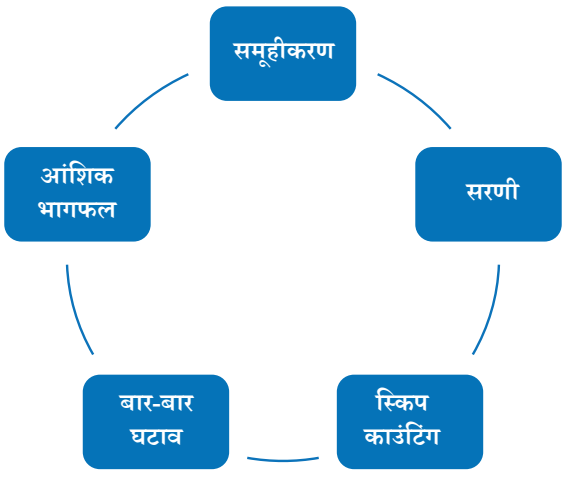

तरीक़े हैं। इन तरीक़ों को मैंने अपने स्कूल में चौथी कक्षा के बच्चों के साथ उपयोग में लाने की कोशिश की है। हमारा विद्यालय बालिकाओं का प्राथमिक विद्यालय है जिसमें अधिकांश छात्राएँ ग़रीबी रेखा के नीचे जीवन-यापन करने वाले परिवारों की हैं।

कुछ तरीक़े

सरणी (Array)

चूँकि बच्चे पहले ही तीसरी कक्षा में समूहबद्ध करने की विधि का उपयोग करके भाग करना सीख चुके हैं, इसलिए मैंने उनसे सरणी का उपयोग करके भाग करने के लिए कहा। सरणियों (पंक्तियों) को बनाने के लिए काउंटरों का उपयोग करके इसे किया जाता है। बच्चे किसी दी गई संख्या के लिए सभी सम्भावित सरणियाँ बनाते हैं और उनके लिए भाग के तथ्यों को लिखते हैं। जब बच्चे अधिक से अधिक सरणियाँ बनाते हैं तो वे उस संख्या के गुणनखण्डों की अवधारणा से परिचित हो जाते हैं। पारम्परिक विधि में सब कुछ गुणन सारणियों या पहाड़ों पर निर्भर करता है, यहाँ तक कि गुणनखण्डों को सीखते

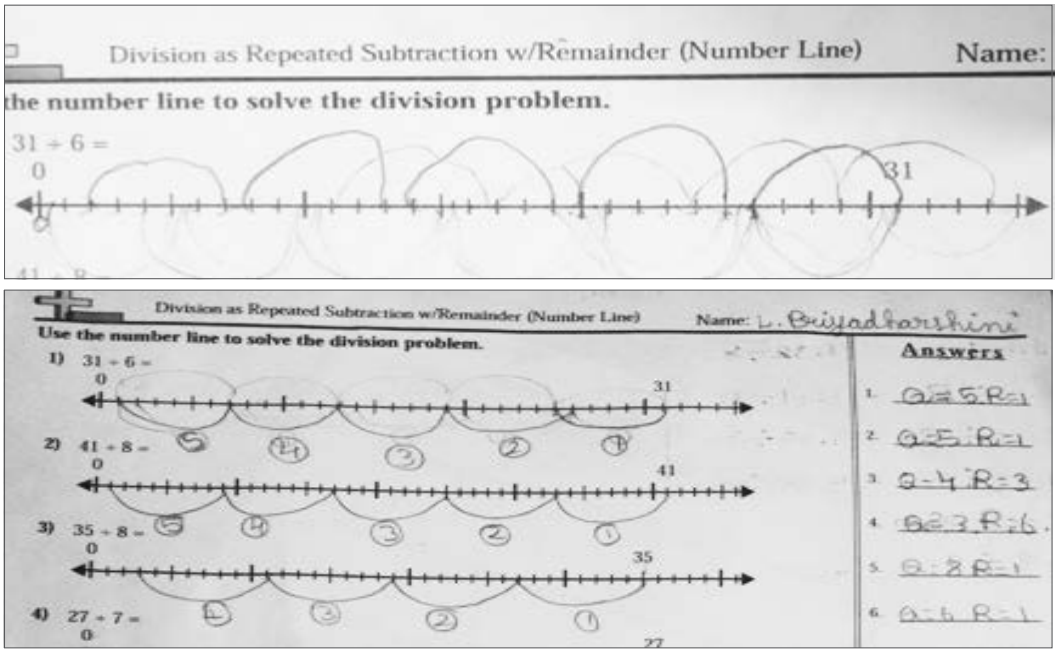

समय भी। सरणियों से बच्चे अवधारणा को समझते हैं और जान जाते हैं कि 16 को एक पंक्ति में तीन के रूप में व्यवस्थित नहीं किया जा सकता है क्योंकि एक पंक्ति में तीन का मतलब तीन की पाँच पंक्तियाँ और एक (15 +1) होगा। यह सब कुछ बहुत कम समय में होता है, जिससे यह साबित होता है कि इसकी अच्छी समझ से संख्या का अच्छा बोध विकसित होता है।

गणितमाला

संख्या-रेखा का भाग किसी दुःस्वप्न से कम नहीं है क्योंकि यह एक अमूर्तता है जिसका वास्तविक जीवन में कभी भी उपयोग नहीं किया जाता, सिवाय इसके कि गणित में संख्या के बोध को विकसित किया जाए।

यह चित्रण दिखाता है कि विद्यार्थी यह नहीं समझ पाते कि कहाँ से शुरू किया जाए और वे नहीं जानते कि निरन्तरता बीच में नहीं टूटनी चाहिए। गणितमाला संख्या-रेखाओं का एक बहुत अच्छा निरूपण है। यह अमूर्तता के स्तर को कम करता है। जब विद्यार्थी गणितमाला का उपयोग करते हैं तो वे संख्या-रेखा की अच्छी समझ विकसित कर लेते हैं और कम त्रुटियाँ करते हैं।

आंशिक भागफल विधि

मेरा अनुभव यह कहता है कि अगर विद्यार्थियों को धनराशि के साथ कार्य-व्यवहार करने दिया जाए तो वे किसी भी अवधारणा को आसानी से सीख लेंगे, फिर चाहे वह जोड़ हो, घटाना हो, गुणा हो या भाग हो। मैं इसके लिए खिलौने वाले सिक्कों और रुपयों का इस्तेमाल करती हूँ। कक्षा को पाँच समूहों में बाँट कर उन्हें आकृतियों के नाम दिए जाते हैं : घन, घनाभ, बेलन, शंकु और गोला।

पहला सवाल यह है कि 132 को दो लोगों के बीच कैसे साझा किया जाए। इसे करने के लिए वे दो स्टिक फिगर बनाते हैं और उनके सामने प्रत्येक की हिस्सेदारी लिखते हैं। यह पता चला है कि बच्चे सवालों को हल करने के लिए स्वयं आविष्कार की गई प्रक्रियाओं का उपयोग करते हैं। इसलिए कक्षा में हल किए जाने वाले गणित के सवालों को वास्तविक जीवन की स्थितियों के अनुरूप होना चाहिए जिनके साथ बच्चे जुड़ सकें (वेरशाफेल और अन्य, 2006)।

उन्होंने पहले सौ को दो पचासों में बाँटा। फिर उन्होंने तीस को लिया और उसे दो पन्द्रहों में बाँटा और अन्त में दो को

एक-एक में बाँट दिया। उन्होंने हर एक को मिलने वाले हिस्से, भागफल को गिना, और पाया कि कोई शेषफल नहीं था।

गणित का एक महत्त्वपूर्ण पहलू लिखना या रिकॉर्ड करना है, जिसके बिना सीखना अधूरा है। गतिविधि करने से अवधारणा सीखी जाती है और इसे *रिकॉर्ड* करना प्रक्रिया सीखने का तरीक़ा है। अवधारणा और प्रक्रिया एक साथ चलनी चाहिए ताकि उसके साथ जुड़ा जा सके और समझने में आसानी हो। बच्चे ख़ुद ही उत्तर निकाल लेते हैं, लेकिन शिक्षकों को उत्तर सम्बन्धी मतभेदों पर ध्यान देना चाहिए और गतिविधि में सभी बच्चों की समान भागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए।

कुछ सामान्य गलतियाँ

बच्चे घटाव में गलती कर सकते हैं जो भाग का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। उदाहरण के लिए जब 125 में से 80 को घटाना हो तो शेषफल 100 से कम होना चाहिए। लेकिन बच्चों को कभी-कभी यह समझ में नहीं आता है और इस समस्या का कारण है घटाव की अवधारणा को न समझना। उसे दूर किए बिना भाग को सिखाने की कोशिश करना व्यर्थ होगा। पहला चरण है घटाव सिखाना।

बच्चे अपना काम करते समय लापरवाही भी करते हैं जैसे कि भाग दी जाने वाली संख्या के कुछ हिस्सों को छोड़ना। शिक्षक को इन गलतियों के प्रति सचेत रहना चाहिए और इसके पीछे की मूल अवधारणाओं को समझाने के लिए तैयार रहना चाहिए।

हर बच्चा भाग देना सीख सकता है

भाग को सिखाते समय जो सर्वश्रेष्ठ क्षण मेरे सामने आया उसे मैं साझा करना चाहूँगी। मेरी एक छात्रा को उसके ट्यूशन मास्टर ने भाग का एक सवाल दिया था। उसने वह सवाल कक्षा में सिखाई गई विधि का उपयोग करके किया, लेकिन उसके ट्यूशन मास्टर को यह समझ में नहीं आया और उन्होंने यह कहते हुए उसे काट दिया कि वह ग़लत थी और फिर उन्होंने उसी सवाल को भाग की लम्बी विधि से किया। बच्ची ने उनके सामने अपनी बात स्पष्ट की और कहा, 'हम दोनों को एक ही जवाब मिला है।' उन्होंने इस बात को स्वीकार किया और उसकी सराहना की। अब वही छात्रा इंटरनेशनल मैथ ओलंपियाड (आईएमओ) परीक्षा में अपनी कक्षा में अव्वल आई है और आईएमओ परीक्षा, 2020 के दूसरे दौर के लिए चुनी गई है।

चाहे संकीर्ण अर्थों में भाग सीखने की बात हो या व्यापक अर्थों में गणित सीखने की, ऐसे कई कारक हैं जो बच्चों के अधिगम को प्रभावित करते हैं। शिक्षक और उनका शिक्षणशास्त्र सम्बन्धी ज्ञान, अनुचित विधियों का उपयोग और समझ की कमी, कक्षा का वातावरण और अन्य कारक बच्चे के अधिगम को प्रभावित करते हैं।

एक ऐसी धारणा बन चुकी है कि गणित आमतौर पर बच्चों के लिए कठिन होता है, विशेषकर लड़कियों के लिए। लेकिन यह सिर्फ लिंग सम्बन्धी पूर्वाग्रह है। अर्नेस्ट का 1976 का अध्ययन प्राथमिक स्कूल के बच्चों में लैंगिक-विषमता और शिक्षकों के दृष्टिकोण पर केन्द्रित है। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह धारणा बिल्कुल ग़लत है कि गणित में महिलाओं की तुलना में पुरुष श्रेष्ठ हैं। अगर पेशेवर गणितज्ञों के रूप में महिलाओं की कमी है तो इसका कारण उनमें क्षमता की कमी नहीं है, वरन ऐसा सांस्कृतिक प्रभावों के कारण अधिक होता है।

इसलिए मैंने लड़कियों के स्कूल में शिक्षिका के रूप में काम करने के अवसर का लाभ उठाया और यह साबित करने की कोशिश की कि गणित सीखना हर किसी का अधिकार है और हर बच्चा यह कर सकता है। वंचित समुदायों की लड़कियों को गणित में उत्कृष्टता प्राप्त करने के अवसर प्रदान करना हमारे आने वाले समय के लिए एक महत्त्वपूर्ण सामाजिक परिवर्तन है। मैं इस दिशा में कार्य कर रही हूँ।

References

https://www.academia.edu/11106660/TACKLING_THE_DIVISION_ALGORITHM

https://grantwiggins.wordpress.com/2014/04/23/conceptual-understanding-in-mathematics/

http://www.ncert.nic.in/html/pdf/schoolcurriculum/position_papers/math.pdf

http://faculty.etsu.edu/gardnerr/math-honors/theses/Horton-Thesis.pdf

'Developing mathematical power in whole number operations' published by NCTM

गोमती राममूर्ति सवरायलु नयागर गवर्नमेंट गर्ल्स प्राइमरी स्कूल, पुदुचेरी में प्राथमिक विद्यालय की शिक्षिका हैं। उन्हें 16 साल के अध्यापन का अनुभव है और वे पुदुचेरी में सीबीएसई पाठ्यक्रम संचालन में स्रोत व्यक्ति हैं। वे अपने स्कूल में गणित प्रयोगशाला चलाती हैं और 'ARRAY' की सम्पादिका हैं, जो बच्चों की द्विभाषी गणित पत्रिका है जिसमें पूरा योगदान बच्चों का होता है। वे अवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए गणित के शिक्षण-अधिगम में विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग करने में रूचि रखती हैं। वे एससीईआरटी (तमिलनाडु) में पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति (2018) की सदस्या रही हैं और उन्होंने पहली कक्षा की गणित की पाठ्यपुस्तक को तैयार करने में एक लेखिका के रूप में योगदान दिया है। उनसे gomurama@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

जगमोहन सिंह कठैत

'पेट में नहीं होगा अन्न, तो पढ़ने में कैसे लगेगा मन' जैसी कहावतें अक्सर सुनी हैं हमने। यह कहावतें यही तो दर्शाती हैं न कि ज़िन्दा रहने की चीज़ें निश्चित ही स्कूली पढ़ाई-लिखाई से पहले आती हैं। जिन परिवारों की प्राथमिकताएँ पेट की भूख को शान्त करना होती हैं या इसके लिए आजीविका की तलाश होती है, उन परिवारों से आने वाले बच्चों को शैक्षिक बातचीत में अक्सर 'फर्स्ट जनरेशन लर्नर' कहा जाता है। मालूम नहीं उन्हें फर्स्ट जनरेशन लर्नर क्यों कहते हैं। शायद इसलिए कि लर्निंग या सीखना तो स्कूल में ही होता है ऐसा माना जाता हो। या फ़िर इनके माता-पिता शायद यह नहीं सोच पाते हों कि हमारे बच्चे अभी पढ़ेंगे-लिखेंगे, कुछ सीखेंगे तो 15-20 साल बाद एक बेहतर और कम शारीरिक मेहनत वाला जीवन जी पाएँगे। मालूम नहीं, सोच पाने की क्षमताओं का अभाव है या अभावों का प्रभाव है, जो सोचने के लिए ठहराव ही नहीं देता। ख़ैर जो भी हो, कुल मिलाकर परिणाम तो यही है कि ऐसे लोगों की प्राथमिकता में स्कूली पढ़ाई-लिखाई दोयम दर्जा ही पाती है।

जहाँ आम बच्चों के होमवर्क होते हैं, सुलेख लिखना, कविता याद करना, सवाल बनाना आदि, वहीं इनके 'होमवर्क' कुछ अजीब क़िस्म के होते हैं। स्कूल से आने के बाद उनके तयशुदा होमवर्क होते हैं जैसे– लकड़ी लाना, घास काटना, पशुओं की देखभाल करना, छोटे भाई-बहनों को सम्भालना, माता-पिता की अनुपस्थिति में घर की देखभाल करना, अनाज की कटाई, छँटाई आदि करना। और हाँ, अगर लड़की है तो शाम के लिए खाना बनाना भी तो शामिल है। उनके लिए स्कूल से मिले होमवर्क से अधिक सहज, नैसर्गिक और आवश्यक उपरोक्त कार्य हैं। स्कूल से मिला होमवर्क तो उन्हें उनके दैनिक जीवन से दूर और अति-कृत्रिम लगता है। इसे पूरा करने के लिए उन्हें सायास प्रयास करना पड़ता है। अपने सोचने, विचारने, भावाभिव्यक्ति के सहज पैटर्न से हटकर नए पैटर्न को समझना और अपनाना पड़ता है। वह भी इतना जटिल कि जिसका उन्हें अपने जीवन से सीधा रिश्ता दिखाई ही नहीं देता। ऐसी पृष्ठभूमि वाले अधिकांश बच्चे कम-से-कम प्राथमिक स्तर पर तो सरकारी विद्यालयों में ही पढ़ते हैं। इसलिए भी यह सरकार का दायित्व है कि सभी के लिए शिक्षा मुहैया करवाए।

प्रचलित मान्यताएँ

ओह! मैं भूमिका में कुछ ज़्यादा ही चला गया। ख़ैर चलो वापस अपनी मूल बात पर आते हैं। मैं यह बात रखना चाह रहा था कि उपरोक्त पृष्ठभूमि के बच्चों के बारे में यानि सरकारी विद्यालयों के बच्चों के बारे में अक्सर कहा जाता है कि इनका अधिगम अपेक्षित स्तर का नहीं है। कक्षा 5-7 तक के बच्चों को अक्षर-पहचान तक नहीं आती। विभिन्न संस्थान इसी प्रकार के शोध करते हैं। राष्ट्रीय स्तर पर इस बारे में संगोष्ठियाँ आयोजित की जाती हैं। सरकार भी अपने स्तर पर समय-समय पर विभिन्न प्रकार के शोध करती रहती है। तमाम शोध यही स्थापित करने की कोशिश करते हैं कि सरकारी विद्यालयों में बच्चों का अधिगम-स्तर कक्षा के अनुरूप नहीं है।

इस पूरी प्रक्रिया में अक्सर शिक्षकों को दोषी ठहराने का प्रयास रहता है। कहा जाता है कि शिक्षक लोग अपना काम ठीक से नहीं करते हैं, वे काफ़ी छुट्टियाँ मारते हैं, हालाँकि 'शिक्षक अनुपस्थिति' पर किया गया हमारा शोध ऐसा नहीं बताता। शोध तो यही बताता है कि शिक्षक विद्यालय से बाहर तो रहते हैं लेकिन विभिन्न सरकारी कार्यों की वजह से। दूसरी ओर जब शिक्षकों से इसके कारण पूछे जाते हैं तो वे बच्चों की पृष्ठभूमि, उनकी ग़रीबी और नियमित स्कूल न आने को दोष देते हैं। जो एक स्तर पर ठीक भी प्रतीत होता है। साथ ही वे सरकार की योजनाओं और नीतियों को भी दोष देते हैं। पर मेरा एक लम्बी अवधि का अनुभव और अवलोकन यह कहता है कि इन तमाम परिस्थितियों के चलते भी ऐसे बहुत सारे सरकारी शिक्षक-शिक्षिकाएँ हैं जो बेहतर ढंग और असरदार तरीक़े से काम कर रहे हैं। सिर्फ़ मेरा ही नहीं, बल्कि गाँव-समाज के लोगों का भी ऐसा ही मानना है। तभी तो लोग ऐसे शिक्षकों के स्थानान्तरण रुकवाने या विदाई देने के लिए उमड़ पड़ते हैं। यहाँ पर यह देखना और समझना दिलचस्प होगा कि लगभग एक-समान परिस्थिति में कुछ लोग बेहतर काम कर पा रहे हैं तो कुछ नहीं कर पा रहे हैं। जो शिक्षक बेहतर परिणाम दे रहे हैं वे आख़िर ऐसा क्या कर रहे हैं जिससे ऐसा हो पा रहा है। यदि ऐसे शिक्षकों की प्रक्रियाओं को समझा जाए तो एक उम्मीद बँधती है कि ऐसा करने से परिणाम बेहतर आ सकते हैं।

मैं जब उन तमाम प्रभावी, बेहतर और असरदार शिक्षकों की तस्वीर अपने दिल में लाता हूँ तो कुछ बातें है जो उन सभी की स्कूली दिनचर्या में समान रूप से दिखती है। मैं उस वक़्त के बारे में सोचता हूँ जब मैं शिक्षण कार्य करता था तो स्वयं को भी इन्ही शिक्षकों की जमात का पाता हूँ। इन्हीं प्रक्रियाओं

में से बहुत-सी चीज़ें करता भी था। इसलिए जब आगे इन प्रक्रियाओं को दर्ज करने की कोशिश कर रहा होऊँगा तो अपने व्यक्तिगत पूर्वाग्रहों और अनुभवों को शायद अलग न रख पाऊँ। संभवतः मैं बहुत सलीक़े से उन शिक्षकों की समान या कॉमन प्रक्रियाओं को दर्ज न कर पाऊँ। फिर भी जो समझ पा रहा हूँ वे प्रक्रियाएँ कुछ इस प्रकार हैं।

ख़ुशियों में शामिल होना

बेहतर कर पाने वाले शिक्षकों के बारे में मैंने पाया कि यह लोग बच्चों के घरों पर होने वाली ख़ुशियों के अवसर पर जाते हैं और उनमें शरीक होते हैं। जैसे बच्चों के घर में किसी का विवाह हो, मुण्डन हो, बच्चे का जन्म हुआ हो या किसी का जन्मदिन हो, यहाँ तक कि यदि किसी के घर गाय-भैंस को बच्चा भी हुआ हो तो उन ख़ुशियों में शरीक होते हैं। यदि शरीक न हो पाए तो लोग खीस (शुरुआती दिनों का दूध) का डिब्बा भरकर स्कूल में भिजवा देते हैं। ख़ुशियों भरे क्षणों में भागीदार होने से शिक्षक, अभिभावक और बच्चे के बीच आत्मीय रिश्ते तो पैदा होते ही हैं, साथ ही शिक्षक यह भी समझ पाता है कि परिवार के सदस्यों और बच्चों के बीच क्या केमिस्ट्री है। केमिस्ट्री से मेरा मतलब है कि बच्चों के माता-पिता के आपसी रिश्ते कैसे हैं, दादा-दादी के बीच के सम्बन्ध कैसे हैं, चाचा-चाची, माता-पिता और बच्चों के आपसी सम्बन्धों का बहाव कैसा है आदि। यानि वे तमाम सम्बन्ध जिसका बच्चों की भावनात्मक, विचारात्मक व क्रियात्मक गतिविधियों पर असर पड़ता है। इस केमिस्ट्री का मालूम होना शिक्षक के शिक्षा-कर्म को बहुत प्रभावी बनाता है। कक्षा-कक्ष में बच्चे को किस प्रकार की हैण्ड होल्डिंग देनी है, किस प्रकार की संवेदनशीलता बरतनी है, किस प्रकार मनोबल बढ़ाना है या बच्चा कोई बात नहीं समझ रहा है तो क्या सम्भावित कारण हो सकते हैं, इन सभी बातों की समझ बनाने में परिवार की केमिस्ट्री का जानना बड़ा प्रभावी होता है। और इन मुद्दों को हल करने की तरकीब एक सचेत शिक्षक के ज़ेहन में ख़ुद ही उतर आती है। इसके लिए उसे विशेष प्रयास नहीं करने होते हैं बल्कि उसकी सचेतनशीलता ही उसे सहज रूप से इस दिशा की ओर ले जाती है।

शिक्षक, पालकों की ख़ुशी में शामिल होकर यह सम्मान अभिभावक को देता है तो वे भी उस पर अपना प्यार उड़ेल देते हैं। यह प्यार की गर्माहट कभी नई फ़सल आने पर शिक्षक को दाल की पोटली देने में झलकती है, तो कभी लौकी-कद्दू की बेल में लगी सब्जी को प्यार से शिक्षिका के हाथ में थमाते समय महसूस की जा सकती है। घर में पौधे ने पहली बार फल दिया हो तो वह भी गुरुजी/बहिन जी के लिए बचाया जाता है। भैंस बिहाई हो तो खीस की कटोरी में भी देखा जा सकता है। सम्मान और प्यार का शिक्षण-प्रक्रियाओं के साथ बड़ा जटिल रिश्ता है। इसे समझने से अधिक महसूसना होता है। तार्किकता से विश्लेषित करने पर शायद इसके रेशे ही बिखर जाएँ।

दुख की घड़ियों में साथ

एक और बात जो कुछ बेहतर कर पाने वाले शिक्षकों में दिखती है, वह है कि यह न केवल ख़ुशियों के पलों में अभिभावकों के साथ होते हैं बल्कि मुश्किल की घड़ियों में भी उनके साथ होते हैं। घर-परिवार में किसी के बीमार होने पर मिलने जाते हैं, फ़ोन पर हालचाल पूछते हैं। किसी भी प्रकार की हानि (इन्सान, पशु से लेकर खेत-खलिहान बह जाने तक) के बारे में बात करते हैं। पारिवारिक मन-मुटाव और झगड़ों तक का ख़्याल होता है उन्हें। मालूम नहीं कि आत्मीयता से किसी के हालचाल पूछने भर से ऐसा क्या हो जाता है, रिश्तों के कौन-से तन्तु गतिमान हो जाते हैं कि पूरा-का-पूरा दृश्य अलग दिखने लग जाता है। मज़ेदार बात तो यह है कि इसके लिए कुछ विशेष प्रयास नहीं करने पड़ते हैं। रिश्ते जब महसूस होते हैं तो यह सब जानकारियाँ लेनी नहीं होती हैं बल्कि हो जाती हैं। लॉकडाउन के दौरान भी उन बच्चों से सम्पर्क करना और उनके परिवारों की मुश्किलों को समझना, उसे महसूस करना साथ ही जो हो सके उसमें हाथ बँटाने के लिए तैयार रहते हैं। इन विशेषताओं का, एक प्रभावी शिक्षक बनने से संभवतः सीधा सम्बन्ध न हो लेकिन इन भूमिकाओं के कारण यह शिक्षक असरकारी ज़रूर हो जाते हैं।

गाँव-समाज के मामलों में भागीदारी

यह भी देखने को मिलता है कि ऐसे शिक्षक न केवल अभिभावकों के साथ ही अपने इन आत्मीय रिश्तों को जोड़ते हैं बल्कि पूरे गाँव-समाज के साथ जुड़ते हैं। गाँव-समाज के पूजा-पाठ से लेकर तीज-त्यौहारों में अपनी प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष भागीदारी देख पाते हैं। गाँव-समाज की महिलाएँ इन शिक्षिकाओं के पास अपने घर-मायके के दुख साझा करती हैं। अपने स्वास्थ्य आदि के हालचाल बताती हैं। शिक्षिकाएँ भी दवा आदि से लेकर विभिन्न प्रकार की राय-मशविरा देती हैं। इस प्रकार की भागीदारी सम्भवतः बच्चे के शिक्षण में सीधे तौर पर कोई भूमिका न निभाती हो लेकिन विद्यालय-समुदाय के आपसी रिश्तों के लिहाज़ से काफ़ी महत्त्वपूर्ण है। ऐसे गाँव-समाज के लोग विद्यालय को अपना समझते हैं और विद्यालय को सँवारने व निखारने में अपनी भागीदारी सहज व नैसर्गिक रूप से निभाते हैं। विद्यालय का कोई कार्यक्रम हो या विद्यालय के लिए श्रमदान आदि, सभी में सक्रिय भागीदारी करते हैं। जहाँ और जब, यह रिश्ते आत्मीय नहीं होते हैं तो ऐसी जगह के बारे में हम अक्सर सुनते हैं कि विद्यालय से कुछ सामान चोरी हो गया, विद्यालय में तोड़-फोड़ कर दी, किसी ने विद्यालय में आकर शराब पीकर गन्दगी फैला दी आदि। बहुत

बार हम देखते हैं कि समुदाय और विद्यालय का रिश्ता शक पर आधारित हो जाता है। धरना-प्रदर्शन से लेकर शिकायतों तक मामले चले जाते हैं।

स्कूल की समय सीमा से परे बच्चों के साथ सम्बन्ध

मैंने पाया है कि यह शिक्षक-शिक्षिकाएँ अपने को सोमवार से शनिवार और नौ से तीन बजे की सीमा में नहीं बाँध पाते हैं। वे उन दिनों भी बच्चों के सम्पर्क में रहते हैं जब विद्यालय बन्द रहता है। उनकी एक स्वाभाविक कोशिश रहती है बच्चों की दिनचर्या को जानने की। विद्यालय से आने के बाद भी अपने बच्चों के लिए चार्ट बनाते हैं, बच्चों के लिए रंग, पेंसिल, कॉपी-किताब खरीदते हैं। आने वाले दिनों में क्या पढ़ाना है उसकी सामग्री भी तैयार करते हैं। एक शिक्षिका कहती हैं कि, "मेरे अपने बच्चों के स्कूल में जो पेंसिल, कॉपी, चॉक के टुकड़े नहीं चलते हैं उन्हें भी मैं अपने स्कूल में संजोकर रखती हूँ और हमारे स्कूल में तो वो सब चल पड़ते हैं। पेन्सिल की बस थोड़ी छिलाई की तो चल पड़ती है। पेंसिल और चॉक छोटी होती है तो उसे पकड़ने की आदत डालनी होती है, बस।"

सीखने-सिखाने की तत्परता

एक और बात इन सब शिक्षकों में महसूस की है मैंने। इन तमाम साथियों में कहे-अनकहे रूप में बच्चों को सिखाने की एक चिन्ता रहती है। बच्चे कुछ सीख नहीं पाते हैं तो उसका हल ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं। यही कोशिशें इन्हें और अधिक सीखने के लिए भी प्रेरित करती है। यही बातें इन्हें विभिन्न मंचों पर सक्रिय भागीदारी की तरफ भी ले जाती है। ऐसा लगता है कि जैसे कोई एक अच्छी या बुरी आदत माला की तरह पिरोई होती है। एक बुरी आदत दूसरी बुरी आदत को अपनी तरफ आकर्षित करती है तो एक अच्छी आदत दूसरी अच्छी आदत को जन्म देती है। ऐसा ही कुछ इन शिक्षकों के साथ भी होता है। इस प्रकार की तत्परता और भागीदारी इन्हें पढ़ने-लिखने के लिए प्रेरित करती है।

एक व्यापक नज़रिए से देखना

मैं ऐसा नहीं कह रहा हूँ कि यह जो असरकारी और प्रभावी शिक्षक हैं वे यह सारी-की-सारी प्रक्रियाओं को अपनाते हैं, लेकिन अक्सर इन आयामों में प्रयास करते हुए दिखते हैं। जिस पृष्ठभूमि के बच्चों की बात यहाँ पर की जा रही है उनके साथ केवल प्रगतिशील, नवाचारी कक्षा-कक्षीय शिक्षण-विधाओं से बेहतर अपेक्षित परिणाम आ पाते हैं, इस पर मुझे सन्देह है। इस बात को ऐसे भी कह सकता हूँ कि मैंने ऐसे होते हुए नहीं देखा है। लेकिन जो लोग शिक्षण-विधाओं के साथ उपरोक्त क्रियाओं में अपने को भागीदार बनाते हैं उनके परिणाम निश्चित ही बेहतर दिखते हैं। शिक्षा की भूमिका को साक्षरता और किताबी ज्ञान से आगे व्यक्ति-निर्माण तक देखना अधिक महत्त्वपूर्ण है। देखने की ऐसी नज़र तो लोगों के बीच अन्तःक्रिया करके ही आ पाती है, न केवल नज़र आ पाती है बल्कि बच्चों के साथ काम क्या करना है और कैसे करना है, इनके बीजों का अंकुरण भी हो पाता है जब अभिभावकों के साथ हमारे जीवन्त सम्बन्ध होते हैं।

दूसरी बात यह समझने की है कि विद्यालय समाज का एक हिस्सा है न कि कोई कटी हुई इकाई जिसका अपने आप में कोई अस्तिव हो। बेहतर शिक्षण तभी सम्भव हो पाता है जब हम एक-दूसरे में रहकर एक-दूसरे को समझते हैं। हिस्से को अलग करके नहीं समझा जा सकता। ऐसा करना अन्धों द्वारा हाथी को समझने जैसा ही होगा। चूँकि बच्चा समाज व परिवार में ही रहता है, उसे सही स्वरूप में समाज और परिवार के हिस्से के बतौर ही समझा जा सकता है। परिवार और समाज से बाहर निकालकर समझने की कोशिश करेंगे तो वह वैसा समझ नहीं आएगा जैसा वह है। जब, जैसा है वैसा समझ नहीं आएगा तो शिक्षक और बच्चे के बीच की अन्तःक्रिया प्रभावी शिक्षण के रूप में नहीं हो सकती। किसी को केवल नौ से तीन की नौकरी मात्र करनी है तो ठीक है लेकिन प्रभावी शिक्षण के लिए इस प्रक्रिया को सम्पूर्णता के साथ ही समझना होता है। जब हम यह रिश्ते कायम करते हैं तो हमें चीज़ें समझनी नहीं पड़तीं बल्कि ख़ुद-ब-ख़ुद समझ आ जाती हैं। यह केवल शिक्षक की संवेदनशीलता और भावात्मक पक्ष को ही नहीं निखारता बल्कि शिक्षण के कौशल की धरती को भी हरा-भरा करने की सम्भावना को खोलता है।

एक शिक्षिका का कथन

प्रियंका जब प्रवेश लेने आई तो वो मेरी साड़ी के पल्लू के पीछे छुप गई थी। उसकी नानी प्रवेश दिलाने आई थी। सब ठीक चलता रहा। पढ़ने में औसत से कम ही करती थी। थोड़ी डाँट लगते ही वो चुप हो जाती थी। उपस्थिति भी कम हो रही थी। उससे बात करने की कोशिश की तो कुछ ख़ास नहीं निकला। मैंने सोचा कि घर जाकर देखना चाहिए शायद कुछ बातें समझ आएँ। घर जाकर जब नानी से बात की तो मेरे पाँव तले ज़मीन खिसक गई। नानी ने कहा कि प्रियंका की मौसी के पति का देहान्त हो गया, मौसी अकेली रह गई तो इसके माता-पिता ने इसे इसकी मौसी को दे दिया ताकि मौसी का अकेलापन कुछ कम हो। कुछ समय बाद मौसी ने काम शुरू किया तो चंडीगढ़ चली गई। अब यह मेरे पास ही रहती है। यह कहानी सुनकर मैं बहुत रोई। दूसरे दिन जब मैं स्कूल गई तो मैं उसे डाँटने ही वाली थी कि मेरी आँखें भर आईं। मैं जल्दी से ऑफिस में गई और अपने को संयत किया। फिर आई और उसे गले से लगाया और प्यार से समझाया। अब मैं गृहकार्य न करने पर उससे बात करती। उसकी उपस्थिति

बढ़ने लगी और पढ़ाई में भी बेहतर होने लगी। नानी अब सारे दुख-सुख मुझे बताती हैं और कभी-कभी बाज़ार से सामान लाना होता है तो मुझे कहती हैं। 'चुलू' पकने पर मेरे लिए भेजती हैं। और कभी-कभी हरी सब्जी भेजती हैं।

एक और शिक्षिका की ज़बानी

राधिका अक्सर विद्यालय देर से आती थी। बहुत बार समझाया पर कुछ असर नहीं पड़ा। प्रार्थना सभा में भी सभी को समय पर स्कूल आने को कहा। मैंने दूसरे बच्चों से पड़ताल की तो बच्चों ने कहा कि इसके पापा देर से जागते हैं। फिर मैंने घर जाकर समझाना उचित समझा। घर गई तो पता चला कि राधिका की माँ नहीं है। माँ ने आग लगा कर आत्महत्या कर ली थी। पिता दारू पीते हैं और सुबह देर से जागते हैं इसलिए राधिका देर से स्कूल आती है। पिता से बात की तो उन्होंने उसे बड़ी बुआ के पास भेज दिया। राधिका के बारे में सोचकर मेरा दिल पीड़ा से भर उठा। मेरा राधिका के साथ व्यवहार अब ज़्यादा सजग और आत्मीय हो गया। मेरा उसके घर आना-जाना होता रहा। एक दिन मैं गई तो सारे बच्चे सकपका कर भाग गए। कुछ सामान, जिससे वे कुछ कर रहे थे उसे भी छिपा दिया। सभी जगह काग़ज़ और आटे की लेई बिखरी थी। मैंने अधिक कुरेदना उचित नहीं समझा, सोचा फ़िर कभी बात करूँगी। एक दिन परीक्षा के बाद सभी शिक्षक एक जगह कॉपियाँ जाँच रहे थे। मैं बच्चों की कक्षा में गई तो राधिका और उसकी बुआ के बच्चे चुपके-चुपके काग़ज़ के लिफ़ाफ़े बना रहे थे। मेरे देखते ही उन्होंने छुपा दिए। मैंने धीरे-धीरे प्यार से पूछा तो मालूम हुआ कि यह बच्चे लिफ़ाफ़े बनाते हैं और बाज़ार में बेचते हैं। अब मैंने बच्चों के लिए क्राफ्ट की क्लास लगा दी। सभी बच्चों को लिफ़ाफ़े बनाना सिखाने लगी। राधिका और बच्चे तो एक्सपर्ट थे। वे अब दूसरे बच्चों को भी सिखाने लगे। दूसरे दिन मैं घर से भी अख़बार ले गई। सभी बच्चे जो लिफ़ाफ़े तैयार करते उसे राधिका को दे देते। राधिका जो एक दिन इस काम को करते हुए झिझक रही थी वह आज सहज और सिखाने का गर्व भी महसूस कर रही थी। उसकी पढ़ाई भी बेहतर हो गई और स्कूल आना भी नियमित। उसने मुझे लिखा है कि मैं उसकी माँ होती तो कितना अच्छा होता। उसने लिखा, "आप मुझे माँ जैसी लगती हैं।"

जगमोहन सिंह कठैत गत 28 वर्षों से सामाजिक क्षेत्र में काम कर रहे हैं। पिछले 11 वर्षों से वे अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के साथ जुड़े हुए हैं। वे गढ़वाल क्षेत्र में फाउण्डेशन का काम सम्भालते हैं और वर्तमान में श्रीनगर, उत्तराखण्ड में रहते हैं। उन्होंने 18 वर्षों तक सोसाइटी फॉर इंटीग्रेटेड डेवलपमेंट ऑफ़ हिमालायाज़ (SIDH) के लिए काम किया है जिसमें वे विभिन्न शैक्षिक मुद्दों और ग्रामीण विकास के नवाचारी और वैकल्पिक तरीक़े खोजने के कार्यों से जुड़े हुए थे। उनसे Jagmohan@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

सम्बद्धता के शिक्षणशास्त्र का विचार | एक रणनीति

जोयिता बनर्जी

एक रणनीति के रूप में 'सम्बद्धता स्थापित करने' का उद्देश्य

लेख के प्रारम्भ में ही मैं यह कहना चाहूँगी कि इस लेख का उद्देश्य है कि सम्बद्धता स्थापित करने के बारे में संवाद की शुरुआत हो सके और औपचारिक अधिगम के क्षेत्र में सम्बद्धता का शिक्षणशास्त्र (Pedagogy of Connect) विकसित हो सके। ऐसे समय में तो यह और भी आवश्यक है जब पूरी दुनिया एक महामारी, नस्लवाद और जलवायु संकट के कारण खण्डित है। हमारा अधिगम पूरी तरह से बन्द या सीमित स्थान में होता है जो न केवल अधिगम की मशीन की तरह काम करता है बल्कि निरीक्षण, पदानुक्रम तथा पुरस्कृत करने के लिए भी मशीन के रूप में कार्य करता है (फूको, 1991)। यह बुरी तरह से विफल रहा है और 'मानसिक चिन्ता और अस्तित्वगत अनिश्चितता' का निर्माण हुआ है (पाठक, 2020)।

ऐसा क्यों है? इसका कारण यह है कि हमारा असम्बद्ध अधिगम, सीखने के ऐसे अवसरों को पैदा नहीं करता जिसकी जड़ें शिक्षार्थियों, विशेष रूप से वंचित शिक्षार्थियों की सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक वास्तविकता में जमी हों। विभिन्न शैक्षिक नीतियों और योजनाओं के कारण माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में अब पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों (एफजीएल) की संख्या काफ़ी अधिक हो गई है। ग्रामीण माध्यमिक विद्यालयों में पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी 'जो कई सामाजिक श्रेणियों से सम्बन्धित हैं' (बनर्जी, 2017) - वे औपचारिक, 'सीमित शैक्षिक स्थानों' में परायापन-सा महसूस करते हैं, क्योंकि 'जिन तौर-तरीक़ों से यह विद्यार्थी प्रेरित होते हैं, आत्म-प्रभावशाली बनते हैं, भाषा सीखने की मान्यताएँ निर्मित करते हैं और परसंस्कृति ग्रहण करते हैं, शिक्षणशास्त्र उन तरीक़ों की उपेक्षा करता है (जमशीदी, 2013)। इसलिए शिक्षा के सभी हितधारकों की यह ज़िम्मेदारी है कि वे उन वंचित शिक्षार्थियों के लिए अधिगम के ऐसे स्थान बनाएँ जो उनकी 'न्यायसंगत भागीदारी' सुनिश्चित करें भले ही उनकी पीढ़ीगत स्थिति कुछ भी हो।

मैंने अन्यत्र (बनर्जी, 2018) उन चुनौतियों की चर्चा की है जिनका सामना पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी स्कूल में करते हैं और किस प्रकार स्कूली प्रक्रियाएँ उनके अलगाव में योगदान करती हैं। अधिगम के औपचारिक सीमित स्थान वास्तव में ऐसे 'सामाजिक स्थान हैं जहाँ संस्कृतियाँ मिलती हैं, टकराती हैं; और एक-दूसरे से जूझती हैं, और ऐसा अक्सर अत्यधिक विषम शक्ति-सम्बन्धों के सन्दर्भों में होता है… '(प्रेट, पृ. 34)।

'बैंकिंग मॉडल' (फ्रेरे,1970) के आधार पर प्रदान किए जाने वाले, उपेक्षा के शिक्षणशास्त्र के भीतर भी आलोचनात्मक जाँच पसन्द करने वाली, भाषा की सुगमकर्ता और शोधकर्ता होने के नाते, मेरे इस लेख का वैचारिक ढाँचा भी 'आलोचनात्मक चेतना' (Critical Consciousness) पर टिका हुआ है। यह लेख उन शैक्षणिक रणनीतियों को विकसित करने का प्रयास करता है जिन्हें 'चौथी दीवार को तोड़ने के लिए' (ब्रेख्त की नाट्य तकनीक) काम में लाया जा सकता है और सभी शिक्षार्थियों के बीच 'आलोचनात्मक चेतना' पैदा करने का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

उपेक्षा की पहचान

भाषा की सुगमकर्ता, विशेष रूप से द्वितीय भाषा की सुगमकर्ता के रूप में मुझे इस बात का ध्यान रखना होगा कि शैक्षिक नीतियों, योजनाओं और विशेषाधिकार प्राप्त लोगों की माँगों के अनुसार भाषा शिक्षा का लक्ष्य है 'कक्षा स्तर की दक्षताओं' को विकसित करना और शिक्षार्थियों का परिचय नए सांस्कृतिक मानदण्डों से करवाना। पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए द्वितीय भाषा का अधिग्रहण ऐसा ही है जैसा कि किसी दूसरी संस्कृति को सीखना (ब्राउन, 1986), उनके लिए द्वितीय भाषा की कक्षाएँ कष्टदायी अनुभव बन जाती हैं क्योंकि 'स्कूल की औपचारिक, विस्तृत, सन्दर्भ-स्वतंत्र भाषा, घर में बातचीत की सीमित, अन्तरंग संहिता से अलग है'(बर्नस्टीन, 1971)। इसके अलावा लेखन से पहले व्याकरण सीखने का बोझ, एक अनजान भाषा के साथ सार्थक रूप से जुड़ने की सम्भावना को खत्म कर देता है। इसलिए मेरा सुझाव है कि सम्बद्धता के शिक्षणशास्त्र को शुरू करने का पहला क़दम है- भाषा सीखने के शिक्षणशास्त्रीय दृष्टिकोण में छिपे हुए, उपेक्षित क्षेत्रों की पहचान की जाए, जो एक ऐसी रणनीति की आधारशिला है जो भाषा सीखने की पूरी प्रक्रिया में आमूल परिवर्तन कर सकती है और आलोचनात्मक चेतना के निर्माण में सहायता कर सकती है।

एक स्वतंत्र शोधकर्ता और सरकारी सहायता प्राप्त ग्रामीण माध्यमिक विद्यालय में भाषा की सुगमकर्ता के रूप में मैंने

पाया है कि हमारी शिक्षा प्रणाली, विकास और असमानता पर केन्द्रित एक आर्थिक अनिवार्यता में सहयोजित रहती है। अलगाव की प्रक्रिया यहीं से शुरू होती है। सभी शिक्षार्थियों के बीच 'मौन की संस्कृति' है, जो पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों में और भी अधिक है।

द्वितीय भाषा की सुगमकर्ता होने के नाते मेरे लिए यह पहचानना ज़रूरी है कि कैसे मेरे शिक्षणशास्त्रीय दृष्टिकोण, महज़ 'भाषाई शक्ति के प्रयोग के साधन' माने जाते हैं' (फिलिप्सन, 1992) और एकभाषी दुनिया के प्रमुख कथ्य की स्थापना करते हैं। इससे, पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों को भाषा सीखने सम्बन्धी अपनी मान्यताओं पर सवाल उठाना शुरू करने में मदद मिलेगी। पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे भाषा सीखने की अपनी मान्यताओं पर, और यह मान्यताएँ अपनी मातृभाषा के प्रति उनके दृष्टिकोण को कैसे प्रभावित करती हैं इस पर आलोचनात्मक दृष्टि डालें। इससे उन्हें विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग की भाषा में छिपी हुई उपेक्षा, और यह उपेक्षा किस प्रकार से स्कूलों द्वारा अनुसरण की जाने वाली शैक्षणिक रणनीतियों में अन्तर्निहित है, इस पर सवाल उठाने में मदद मिलेगी है। जब एक बार उपेक्षा की पहचान हो जाती है तो बाक़ी क़दम ख़ुद-ब-ख़ुद सही पड़ने लगते हैं।

कक्षा व्यवस्था

मुझे लगता है कि सम्बद्ध अधिगम को बनाने में कक्षा-व्यवस्था की प्रमुख भूमिका है। यह इस बात के संरचनात्मक पहलुओं पर ध्यान देता है कि शिक्षक अपनी कक्षा को कैसे संरचित करते हैं (स्ट्रेंज, और अन्य)। कक्षा की वर्तमान भौतिक व्यवस्था में शिक्षार्थियों को पंक्तियों में बैठाया जाता है और सुगमकर्ता उनके सामने, मानो उनके ख़िलाफ़, खड़े होते हैं। यह व्यवस्था एक ऐसी 'एकल प्रधान टेबल' का निर्माण करती है जिसमें मास्टर की 'सूक्ष्म "वर्गीकृत" करने वाली दृष्टि' के तहत अलग-अलग लोगों की अलग-अलग प्रविष्टियाँ होती हैं (फूको, 1991)। पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी जो पहली बार इस प्रकार की व्यवस्था का सामना करते हैं, इस प्रक्रिया में अन्यता की भावना महसूस करते हैं जो कक्षा की प्रक्रियाओं के साथ सार्थक सम्बद्धता में बाधा डालती है। इसलिए वे कक्षा-स्तरीय दक्षताओं को प्राप्त करने में पीछे रह जाते हैं और उन सुगमकर्ताओं और अन्य लोगों के निकट आने से झिझकते हैं जो कक्षा में औपचारिक अधिगम की पृष्ठभूमि से आते हैं (बनर्जी, 2013)। इसलिए सुगमकर्ताओं को चाहिए कि इस प्रकार की व्यवस्थाओं को बदलें और बच्चों को गोल घेरे में या अर्ध-गोल घेरे में बिठाएँ और स्वयं घेरे के बीच में बैठें। बड़ी कक्षाओं में ऐसा करना एक चुनौती है। अतः उन कक्षाओं में बैठने की व्यवस्था को प्रतिदिन बारी-बारी से बदलना चाहिए।

शिक्षार्थियों को लुभाना

सीमित शैक्षिक स्थान जहाँ मैं अपनी भाषा की कक्षाएँ लेती हूँ, वे शैक्षणिक मशीनें हैं जो स्वास्थ्य, योग्यता, राजनीति और नैतिकता की अनिवार्यताओं की पुनःपुष्टि करती हैं (फूको, 1991), और वास्तविक जीवन की सभी पुष्टि-प्रक्रियाओं की उपेक्षा करती हैं। मैं जो शिक्षा प्रदान करती हूँ वह, 'आधुनिकता के आत्म-बोध-प्रकृति पर मानवीय वर्चस्व की उसकी धारणा, तकनीकी-विज्ञान की जानकारी के माध्यम से होने वाली असीमित 'प्रगति' में आत्म-मुग्ध विश्वास और पूर्वानुमान, नियंत्रण और व्यवस्था स्थापित करने की इसकी शक्ति, के साथ गहराई से जुड़ी हुई है' (पाठक, 2020)।

प्रथम पीढ़ी के शिक्षार्थी, जो माध्यमिक शिक्षा में एक़दम नए हैं, सामाजिक पदानुक्रम के औपचारिक विकास के लिए तथाकथित 'आधुनिक शिक्षा' की संहिता को समझने की कोशिश कर रहे हैं, उन्हें इस तथ्य की पुष्टि की आवश्यकता है कि वे ख़ुद भी ज्ञान के उस विशाल संग्रह से समृद्ध हैं जिसे उन्होंने अपने अनुभवात्मक जीवन से पहले ही हासिल कर लिया है। उन्हें इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे वर्तमान दुनिया में 'आधुनिकता को भुलाने या अनलर्न' (unlearn) करने में सुगमकर्ता और अन्य लोगों की मदद करें, क्योंकि आज के समय में शिक्षक एवं एजुकेटर्स 'जीवन जीने की सूक्ष्म कला' के साथ बच्चों का सार्थक जुड़ाव स्थापित करवा पाने में असफल रहे हैं (पाठक, 2020)।

भाषा की कक्षा में तुलनात्मक रूप से कम अनुकूलित मस्तिष्क (कंडीशंड माइंड्स) को कक्षा में लाने की प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जो स्थानीय साहित्य और गीतों के माध्यम से उनकी गरिमा को पुष्ट करने के लिए प्रोत्साहन तथा अवसर प्रदान करे। शिक्षार्थी, चाहे उनकी पीढ़ीगत स्थिति कुछ भी हो, प्रकृति की बर्बादी के परिणामों को समझते हैं और मानवजनित जलवायु संकट में अपनी भूमिकाओं की आलोचनात्मक जाँच (critical enquiry) करते हैं। कक्षाओं में एक संवादात्मक रिश्ते को बढ़ावा देने और शिक्षक के साथ बातचीत में महत्त्वपूर्ण सह-अन्वेषक बनकर सम्बद्धता के एक नए अभ्यास से शिक्षार्थियों को परिचित कराने के लिए कक्षाओं के भीतर साप्ताहिक रूप से शिक्षार्थियों के नेतृत्व वाले और उन्हीं के द्वारा चुने गए विषयों पर सेमिनार का आयोजन करना चाहिए।

आकलन : प्रक्रिया का अन्तिम चरण

बहुविकल्पी प्रश्नों की मदद से उद्देश्यपूर्ण आकलन की वर्तमान प्रक्रिया से शिक्षार्थियों में रूढ़िवादिता या कट्टरता का विकास होता है। वे केवल एक सही उत्तर की अवधारणा को इनडॉक्ट्रीनेट (indoctrinate) कर लेते हैं। इसके अलावा युवा मस्तिष्क पहले से ही डिग्री-नौकरी के गठजोड़ पर पूर्ण

विश्वास रखने के लिए अनुकूलित(conditioned) होता है। जितनी ऊँची डिग्री, उतना बेहतर काम - इसके चलते आकलन की प्रक्रिया का कायापलट करना एक चुनौती बन जाता है। इसलिए शिक्षार्थियों को, विशेष रूप से पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों को, समीक्षात्मक चिन्तन से परिचित कराने के लिए, परियोजनाओं को उनके जीवन और भाषाओं के प्रत्यक्ष अनुभवों पर आधारित होना चाहिए। हालाँकि शुरुआत में इस रणनीति का पालन करना कठिन होगा, लेकिन एक बार अभ्यास हो जाए तो अपेक्षित परिणाम प्राप्त होंगे - आलोचनात्मक चेतना का निर्माण होगा।

References

Banerjee, J. (2018). The Excluded Variable in Quality Learning: Generational Status, A Case Study of First-Generation Learners Enrolled in Rural Schools, Bankura

Barnstein, B. (1971). Class, codes and Control, Volume III, Towards A Theory of Educational Transmission

Brown, H.D. (1986). Culture Bound: Bridging the Culture Gap in Language Teaching, Cambridge Language Teaching Library

Foucault, M. (1991). Discipline and Punish, Penguin books

Garavan, M. (2010). Opening up Paulo Freire's Pedagogy of the Oppressed, ResearchGate, Doi10.2307/30023905

Jamshidi , K.(2013). Generational Status: An Ignored Variable In Language Learning, The Journal of ASIA TEFL, Vol: 10, No.2, pp-35-62, Summer 2013

Pathak, A. (2020). Mainstream, VOL. LVIII No.23

Pratt, M. L. (1991). Arts of the contact zone. Profession, 1991, 33–40. (Originally a keynote address at the Responsibilities for Literacy Conference, Pittsburgh, PA, September,1990.)

जोयिता बनर्जी पिछले 18 वर्षों से पश्चिम बंगाल के बांकुरा के निकुंजपुर हाई स्कूल में ईएसएल शिक्षिका के रूप में कार्य कर रही हैं। इससे पहले वे अरलडीही हाई स्कूल में सहायक शिक्षिका और बांकुरा सम्मिलनी कॉलेज में अतिथि व्याख्याता के रूप में कार्य कर चुकी हैं। वे एक स्वतंत्र शोधकर्ता के रूप में कार्य करती हैं और विविध विषयों पर उनके शोधपत्र प्रकाशित हुए हैं। जोयिता को CRY से राष्ट्रीय बाल अधिकार अनुसंधान फैलोशिप (2012) प्राप्त है। उनसे joyeeta007@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

बीज के अंकुरण की प्रक्रिया को देखना, अपने आसपास के क्षेत्र के पेड़ों को समझना आदि कुछ ऐसे विषय हैं जो जीवन की वास्तविक विषय-सामग्री का निर्माण करते हैं और जिन्हें पारम्परिक शिक्षकों को भी अपनी कक्षा में लाना चाहिए; ज़रूरी नहीं कि बीएड की डिग्री प्राप्त शिक्षक ही ऐसा करें। हमारे स्कूलों का उद्देश्य भी यही वास्तविक अधिगम है जो बच्चे को भी आश्वस्त करता है और यह तय करता है कि उसे यह स्थान अपने लिए ठीक लगता है या नहीं।

- शिवानी तनेजा, 'प्रत्येक बच्चे को स्कूल में लाना', पेज 83

भाषा और कला हस्तक्षेप | निज़ामुद्दीन मॉडल

ज्योत्सना लाल और हैदर मेहदी रिज़वी

दिल्ली की हज़रत निज़ामुद्दीन बस्ती भारत की बहुलवादी परम्पराओं का केन्द्र है। यहीं पर 13 वीं शताब्दी के सूफ़ी सन्त हज़रत निज़ामुद्दीन औलिया की दरगाह है जिसके दर्शन करने सभी धर्मों के तीर्थयात्री आते हैं। 700 साल पुरानी इस बस्ती में 10,000 से अधिक लोग रहते हैं और 70% से अधिक लोग असंगठित क्षेत्र में काम करते हैं। आगा खान ट्रस्ट फॉर कल्चर और आगा खान फाउण्डेशन की, द निज़ामुद्दीन अर्बन रिन्यूअल इनिशिएटिव, एक सार्वजनिक-निजी भागीदारी परियोजना है।2007 से चल रही इस परियोजना का उद्देश्य निज़ामुद्दीन बस्ती में समुदाय के जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए धरोहर-संरक्षण का उपयोग करना है।

इस क्षेत्र में कार्यक्रम के हस्तक्षेप को जीवन की गुणवत्ता के सर्वेक्षण के आधार पर डिज़ाइन किया गया था, जिसमें बच्चों की शिक्षा की ख़राब गुणवत्ता एक प्रमुख मुद्दे के रूप में सामने आई। यह आश्चर्य की बात नहीं थी क्योंकि निज़ामुद्दीन बस्ती में 98% मुसलमान हैं। सच्चर समिति की रिपोर्ट (नवम्बर,2006) में मुसलमानों में शिक्षा को, विशेष रूप से महिलाओं और लड़कियों की शिक्षा को, एक प्रमुख मुद्दे के रूप में चिह्नित किया जा चुका है। निज़ामुद्दीन बस्ती में यह समस्या और भी गम्भीर थी क्योंकि नगर निगम के प्राथमिक विद्यालय में आने वाले अधिकतर बच्चे पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वाले बच्चे थे।

निज़ामुद्दीन अर्बन रिन्यूअल इनिशिएटिव ने नगर निगम स्कूल के भौतिक बुनियादी ढाँचे, स्कूल प्रबन्धन, कक्षा प्रक्रियाओं और समुदाय के साथ जुड़ाव में सुधार करने का कार्य किया।

पृष्ठभूमि

एसडीएमसी (दक्षिण दिल्ली मुनिसिपल कारपोरेशन) स्कूल में नामांकित बच्चों के माता-पिता को यूँ तो साक्षर के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है, लेकिन यह एक व्यापक क्षेत्र है और उनके व्यवसाय और घर के माहौल को शायद ही सीखने के अनुकूल कहा जा सके। माता-पिता की सीमित साक्षरता, उनके काम करने की लम्बी अवधि, घर पर प्रिंट सामग्री का अभाव, छोटे भाई-बहनों की देखभाल करने की आवश्यकता, कम उम्र में ही घरेलू हिंसा और अपमानजनक भाषा का सामना करना – यह सब स्कूल में आने वाले बच्चों के जीवन के प्रमुख गुण-अवगुण हैं।

निज़ामुद्दीन बस्ती की प्रकृति ऐसी है कि यह पूरे भारत के लोगों को आकर्षित करती है, वैसे यहाँ बिहार, बंगाल और उत्तर प्रदेश के लोगों की प्रमुखता है। इसका मतलब यह भी हुआ कि स्कूल में नामांकित बच्चों में से कई बच्चे घर पर हिन्दी नहीं बोलते, जो एसडीएमसी स्कूल में शिक्षण की भाषा है। बोलचाल की अँग्रेज़ी से तो उनका सम्पर्क और भी कम है।

इसलिए अगर हम निज़ामुद्दीन के एसडीएमसी प्राथमिक विद्यालय में नामांकित बच्चों को परिभाषित करने वाले सामान्य कारकों की पहचान करने की कोशिश करें तो – वे ऐसे परिवार के होते हैं जहाँ संसाधनों की कमी होती है, लगभग निश्चित रूप से वे मुसलमान होते हैं, घर में बहुत कम शैक्षिक समर्थन मिलता है (कुछ लोग बस्ती के ही किसी युवा व्यक्ति को ट्यूटर के रूप में काम पर रख लेते हैं) और इस बात की काफ़ी सम्भावना होती है कि शिक्षण की भाषा उनकी मातृभाषा से अलग हो।

2007 में स्कूल की स्थिति

2007 में जब परियोजना शुरू हुई थी तब प्राथमिक स्कूल एक उजाड़-सी जगह थी, स्कूल में मुश्किल से 50-60 बच्चे आते थे जबकि नामांकन 100 से अधिक था। स्कूल उतने न्यूनतम घण्टों के लिए भी काम नहीं करता था जितना अपेक्षित था और पाठ्यक्रम का संचालन शिक्षकों की प्राथमिकता नहीं थी।

स्कूल की इमारत और उसका रख-रखाव सीखने के माहौल के अनुकूल नहीं था और एसडीएमसी के सुरक्षा मानकों पर भी पूरा नहीं उतरता था। कक्षाओं में रोशनी और हवा की अच्छी व्यवस्था नहीं थी, फ़र्नीचर असुविधाजनक था और कक्षा में कोई चार्ट वगैरह प्रदर्शित नहीं किए गए थे। शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया के नाम पर रटकर सीखने पर ज़ोर दिया जाता था और शारीरिक दण्ड देने का चलन था। बच्चों और शिक्षकों के सम्बन्ध भयपूर्ण तो नहीं लेकिन तनावपूर्ण थे और कक्षा-प्रक्रियाएँ अप्रेरक। बच्चों और शिक्षकों की उपस्थिति अनियमित थी। बच्चों का शैक्षिक स्तर न तो उम्र के उपयुक्त था और न ही कक्षा-उपयुक्त; सबसे ख़राब बात थी शिक्षकों का रवैया, जिन्हें लगता था कि बच्चे पढ़ाने के लायक नहीं हैं और माता-पिता का रवैया जिन्हें लगता था कि उनके बच्चे नहीं सीख सकते।

स्कूल परिवर्तन की प्रक्रिया

निज़ामुद्दीन बस्ती के समुदाय और वहाँ आने वाले लोग यह

मानते हैं कि दक्षिण दिल्ली नगर निगम (एसडीएमसी) स्कूल बिल्कुल बदल गया है। एसडीएमसी *प्रतिभा विद्यालय* का परिवर्तन एक जन-सार्वजनिक-निजी भागीदारी के तहत हुआ है जिसमें एसडीएमसी, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (एएसआई) और केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग (सीपीडब्लूडी) सार्वजनिक साझेदार तथा आगा खान फाउण्डेशन और आगा खान ट्रस्ट फॉर कल्चर निजी भागीदार हैं [जिन्हें साथ में आगा खान डेवलेपमेंट नेटवर्क (एकेडीएन) के रूप में जाना जाता है]। इन बदलावों को लाने के पीछे हमारी प्रेरणा थी इस बात पर हमारा दृढ़ विश्वास कि अगर सीखने का सही अवसर और वातावरण दिया जाए तो हर बच्चा सीख सकता है।

सभी हितधारकों के साथ चर्चा के बाद स्कूल में काम शुरू हुआ। पहले हमने प्रस्तावित बदलावों पर राय पाने के लिए कई क्लस्टर-स्तरीय बैठकों के माध्यम से समुदाय के साथ चर्चा की। इसमें माता-पिता और बच्चों के साथ एक विज़निंग एक्सरसाइज़ की गयी जिसमें चर्चा की गई कि आदर्श स्कूल के बारे में उनके क्या विचार हैं। माता-पिता और बच्चों ने बताया कि वे अपने लिए कैसा स्कूल पसन्द करेंगे।

दूसरा, भौतिक अवसंरचना का आन्तरिक आकलन करते समय इस बात का ध्यान रखा गया कि विद्यालय के बुनियादी ढाँचे और प्रक्रियाओं में परिवर्तन करने से विद्यालय में विद्यार्थियों का नामांकन बढ़ेगा। इसमें एसडीएमसी मानदण्डों के बरक्स विद्यालय की इमारत की स्थिति का आकलन और कमियों की पहचान की गई। इसके अलावा भवन का डिज़ाइन बनाने के लिए एक विशेषज्ञ वास्तुकार की मदद ली गई ताकि विद्यालय के भवन का उपयोग अधिगम-सहायक सामग्री के रूप में किया जा सके। इसे बिल्डिंग एज़ अ लर्निंग एड (BaLA) दृष्टिकोण कहा जाता है।

तीसरा, दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग के साथ मिलकर हिन्दी और गणित में बच्चों के शैक्षिक स्तर अर्थात साक्षरता और संख्या-ज्ञान का आकलन किया गया ताकि हस्तक्षेपों को डिज़ाइन करने में मदद हो सके।

बेसलाइन आकलन और स्थिति के विश्लेषण के आधार पर निज़ामुद्दीन अर्बन रिन्यूअल इनिशिएटिव द्वारा हस्तक्षेप के लिए निम्नलिखित क्षेत्रों की पहचान की गई। यह इस प्रकार थे :

- भवन का भौतिक सुधार और उसके बुनियादी ढाँचे में सुधार
- स्कूल प्रबन्धन
- कक्षा-प्रक्रियाएँ जिनमें पाठ्यक्रम संवर्धन और अन्य रणनीतियाँ शामिल हैं
- समुदाय के साथ जुड़ाव
- स्कूल के बाद के कार्यक्रम ताकि बच्चे अपनी शिक्षा जारी रखें

निज़ामुद्दीन मॉडल

निज़ामुद्दीन मॉडल अनिवार्य रूप से ऐसे निर्धारकों पर काम कर रहा है जो शिक्षा और जीवन की गुणवत्ता में सुधार करते हैं। यही कारण है कि यह परियोजना प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल और शिक्षा, प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ्य, आजीविका, स्वच्छता, ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन और संस्कृति के क्षेत्रों में काम करती है।

यह लेख कक्षा प्रक्रियाओं और पाठ्यक्रम संवर्धन के दो तत्वों पर ध्यान देता है यानी कि भाषा-शिक्षण और कला हस्तक्षेप जैसे बदलाव जो सीखने में बच्चों की मदद करें।

भाषा-शिक्षण

प्राथमिक स्तर पर हिन्दी पढ़ाने के लिए सामान्यतया जो रणनीति अपनाई जाती है उसमें पहले वर्णमाला सिखाई जाती है और फिर बारहखड़ी याद करवाई जाती है। इसके बाद बच्चों को बिना मात्रा वाले दो और तीन अक्षर के छोटे शब्द सिखाए जाते हैं और फिर इन शब्दों का प्रयोग करते हुए छोटे वाक्य। इसके बाद बच्चों को अपनी पाठ्यपुस्तकों के पाठ पढ़ने और लिखित कार्य करने के लिए दिए जाते हैं जिसमें वे मुख्य रूप से प्रश्नों के उत्तर देते हैं।

एसडीएमसी स्कूल में एनसीईआरटी की पाठ्यपुस्तकों का उपयोग किया गया। इन पुस्तकों में राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, 2005 के अनुसार भाषा-शिक्षण के दृष्टिकोण को पूर्ण रूप से बदल दिया गया था और *समग्र भाषा शिक्षण* विधि का उपयोग किया गया था। दुर्भाग्य से शिक्षकों ने किसी भी सेवाकालीन प्रशिक्षण में भाग नहीं लिया था और इसलिए वे नई पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करने में सहज नहीं थे।

आगा खान फाउण्डेशन ने एसडीएमसी शिक्षकों के लिए आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इस मुद्दे को सम्बोधित किया और समुदाय से ही शिक्षकों को नियुक्त किया। शिक्षकों ने नए दृष्टिकोण के अनुसार पाठ-योजनाएँ बनाना सीखा और कहानी के नक्शे, चरित्र पिरामिड, चरित्र विश्लेषण, 6 डब्ल्यू फ्रेमवर्क - क्या, कब, कहाँ, किसने, क्यों और किसको- बनाए (6 Ws- what, when, where, who, why, whom) और उन्हें केन्द्रीय विचार तथा कहानी के अन्य विचारों के साथ इसका सम्बन्ध पहचानने के लिए प्रशिक्षित किया गया। उन्होंने यह भी सीखा कि नए प्रकार के इन अभ्यासों को कैसे 'बनाना' है। पूरी पाठ्यपुस्तक के लिए पाठ-योजना बनाई गई और इससे शिक्षकों को नए पाठ्यक्रम पर काम करने में मदद मिली। भाषा शिक्षण के परिवर्तित दृष्टिकोण के पीछे के दर्शन को समझने में भी शिक्षकों की मदद की गई।

शिक्षकों ने प्रशिक्षण के दौरान शिक्षण-अधिगम सामग्री तैयार की ताकि बच्चे सन्दर्भ के साथ पढ़ना सीख सकें – यह नए दृष्टिकोण का सबसे प्रमुख बदलाव था। साथ ही इसमें कई सारे खेल भी शामिल थे। भाषा सीखने की सुविधा के लिए एक

पुस्तकालय बनाया गया।

प्रशिक्षण कार्यक्रमों में इस बात पर भी ध्यान दिया गया कि कक्षा में की जा रही गतिविधि के आधार पर कक्षा को पुनर्व्यवस्थित किया जाए। स्कूल में परिवर्तन लाने के लिए वहाँ पर हल्के फ़र्नीचर लाए गए ताकि बच्चे हमेशा पंक्तियों में बैठने की बजाय ख़ुद ही फ़र्नीचरों की व्यवस्था बदलकर बैठ सकें। बच्चों को छोटे समूहों में काम करने की आदत नहीं थी, लेकिन उन्होंने धीरे-धीरे यह सीखा कि जब वे समूहों में काम करते हैं तो प्रत्येक बच्चे के लिए योगदान करना आवश्यक होता है। शिक्षक कहानी-पठन के सत्र के दौरान बच्चों को अपने पास बुलाते और इस तरह से कक्षा में हँसी-खुशी का माहौल पैदा करते। एसडीएमसी ने वर्ष के अन्त में परीक्षाओं को जारी रखा और आगा खान फाउण्डेशन ने अधिगम के आकलन पर ध्यान केन्द्रित किया जिसमें बच्चे के पढ़ने, लिखने, बोध और बोलने का आकलन किया गया था। आकलन में ऐसे प्रश्न भी शामिल थे जिनके लिए बच्चे को पाठ से परे जाकर अपनी कल्पना का उपयोग करना होता था।

इन विविध रणनीतियों ने बच्चों को अपने भाषा-कौशल में सुधार करने में मदद की और बच्चों की भाषागत क्षमताओं में 20 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई।

कला सम्बन्धी हस्तक्षेप

इस बात के मद्देनज़र कि इस परियोजना का नेतृत्व आगा खान ट्रस्ट फॉर कल्चर द्वारा किया गया है, कला सम्बन्धी हस्तक्षेप के द्वारा आगे बढ़ना एक तर्कसंगत तरीक़ा था। इसकी शुरुआत थिएटर और फ़ोटोग्राफी की कार्यशाला के साथ हुई थी जिसके लिए बच्चों ने अपने हाथ से बनाए हुए निमंत्रण कार्ड देकर अपने माता-पिता को आमंत्रित किया। ऐसा पहली बार हुआ था कि जब समुदाय को नाटक देखने के लिए स्कूल में आमंत्रित किया गया। इस हस्तक्षेप के लिए स्कूल में जगह बनाने की ज़रूरत थी। स्कूल की समय-सारिणी में इसके लिए समय का प्रावधान करना था, स्रोत शिक्षकों की पहचान की जानी थी और बच्चों के लिए अवसरों का निर्माण करने की आवश्यकता थी।

कला के लिए दो शिक्षक नियुक्त किए गए थे और समय-सारिणी में इस तरह से परिवर्तन किए गए कि प्रत्येक बच्चे को कम-से-कम एक घण्टे के लिए कला सम्बन्धी गतिविधियाँ करने का मौका मिले। भाषा-शिक्षण में थियेटर रोल-प्ले; मासिक बाल सभाएँ और विशेष, साप्ताहिक प्रातःकालीन सभाएँ जिनमें विशेष दिन मनाए जाने लगे ताकि बच्चों को अभिव्यक्ति के लिए एक औपचारिक मंच मिल सके। बच्चों के लेखन और चित्रों को स्थान देने लिए *रंग-तरंग* नामक एक पत्रिका शुरू की गई। धरोहर के पाठ्यक्रम के साथ सांस्कृतिक सराहना और इको-क्लब के माध्यम से पर्यावरणीय चेतना जैसे विषयों को भी जोड़ा गया। निर्दिष्ट 'बैगलेस दिनों' में विशेष गतिविधियों का आयोजन किया जाता था।

इन सभी हस्तक्षेपों से बच्चों को अपनी विश्व-दृष्टि का विस्तार करने, अभिव्यक्ति के लिए मंच पाने, आत्मविश्वास हासिल करने और स्कूल में उपस्थिति पर सकारात्मक प्रभाव डालने में

मदद मिली और वे स्कूल में नियमित रूप से आने लगे।

निज़ामुद्दीन बस्ती में, जहाँ अधिकतर अभिभावक ज़्यादा पढ़े-लिखे नहीं हैं लेकिन अपने बच्चों को शिक्षित करना चाहते हैं, समुदाय के साथ जुड़ना बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। अक्सर माता-पिता शिक्षक समुदाय के सदस्यों से मिलने में झिझकते हैं।

विचारणीय बिन्दु

स्कूल में बदलाव आया है, लेकिन आगा खान विकास नेटवर्क एजेंसियों द्वारा प्रदान/सृजित किए गए अतिरिक्त संसाधनों के बिना भी काम की निरन्तरता बनी रहेगी या नहीं, यह बहुत बड़ा प्रश्न है। सरकार द्वारा ख़र्च की जाने वाली मौजूदा राशि को देखते हुए ऐसा नहीं लगता है कि अतिरिक्त संसाधन मिल पाएँगे। दिल्ली की एनसीटी सरकार ने शिक्षा के लिए 26% की मंज़ूरी दी है जो शायद सबसे बड़ा आवंटन है किन्तु प्राथमिक शिक्षा, स्थानीय सरकार के अधिकार क्षेत्र में आती है, (इस मामले में नगर निगम) और उस आवंटन से इस स्कूल को लाभ नहीं मिलता।

यहाँ कुछ मुद्दे दिए गए हैं जो आगे बढ़ने के दौरान हमारे समक्ष आते हैं :

- अधिगम को आगे बढ़ाने वाले कारकों के बारे में अब सभी को बहुत अच्छी तरह से पता है, फिर भी सरकारी स्कूलों में स्टाफ़ की कमी है, वे गन्दे हैं, नीरस हैं और बच्चों को सीखने के लिए बिल्कुल प्रेरित नहीं करते। अग्रलिखित विषयों पर कई शोध अध्ययन उपलब्ध हैं जैसे - शिक्षण के आदर्श घण्टे, क्या मध्याह्न भोजन योजना उपस्थिति को प्रोत्साहित करती है, क्या शौचालयों का होना लड़कियों के नामांकन को बढ़ाता है - और हम निश्चित रूप से इनके महत्त्व को जानते हैं। पर लगता है कि हमारे भीतर ऐसे स्कूल बनाने के इरादों की कमी है जो बच्चों को सीखने के लिए अपनी ओर खींचें। अच्छा होगा अगर बहस इन बातों पर हो कि पाठ्यक्रम का संचालन कैसे किया जाए, भाषा-शिक्षण की विधि क्या होनी चाहिए बजाय इसके कि हम स्कूल की बुनियादी आवश्यकताओं के बारे में जो पहले से जानते हैं उन पर बहस करें।
- ऐसा क्या किया जाए कि शिक्षा प्रशासन हमारे शिक्षकों को एक ऐसा स्वायत्त व्यक्ति माने जो यह जानते हैं कि उनके बच्चों को क्या चाहिए और फिर उनका समर्थन करे?
- दिल्ली में बच्चे किसी न कारण से नवम्बर के बाद से नियमित रूप से स्कूल नहीं जा रहे हैं - शीतकालीन स्मॉग, कड़ाके की सर्दी, विरोध, दंगे और अब कोविड-19। धनी परिवारों के बच्चों की डिजिटल कक्षाओं तक पहुँच है लेकिन कम संसाधन वाले क्षेत्रों के बच्चों के पास यह सुविधा नहीं है। ऐसे परिवारों के बच्चों को फोन पर जो समय मिलता है वह अधिकतम 25-30 मिनट का होता है और उनके पास घर पर कंप्यूटर नहीं होता है। एसडीएमसी ने एक प्रकार का डिजिटल समर्थन शुरू कर दिया है - लेकिन इसका असर देखना बाक़ी है। ईडब्ल्यूएस कोटे के तहत 'पब्लिक स्कूलों' में दाख़िला लेने वाले बच्चों को अधिगम में एक अन्तराल का सामना करना पड़ेगा क्योंकि उनके अधिक सम्पन्न परिवारों के सहपाठियों की पहुँच डिजिटल कक्षाओं तक होगी।

यह देखना अभी बाक़ी है कि इन सबका क्या असर होगा, न सिर्फ़ उनके स्कूल जाने पर, बल्कि सीखने के सभी पहलुओं पर।

ज्योत्सना लाल आगा खान ट्रस्ट फॉर कल्चर के निज़ामुद्दीन अर्बन रिन्यूअल इनिशिएटिव की कार्यक्रम निदेशक हैं। वे निज़ामुद्दीन बस्ती में सामाजिक विकास की पहल को सम्भालती हैं। उनसे jyotsna.lall@akdn.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हैदर मेहदी रिज़वी आगा खान डेवलेपमेंट नेटवर्क के निज़ामुद्दीन अर्बन रिन्यूअल इनिशिएटिव के कार्यक्रम अधिकारी (शिक्षा) हैं। उनसे hydermehdi.rizvi@akdn.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अनुवाद : नलिनी रावल

नशे पर चर्चा | स्कूल से बाज़ार तक

खिलेन्द्र कुमार साहू

यह अज़ीम प्रेमजी स्कूल में शुरुआती समय था। एक दिन मेरी संगीत की कक्षा में कुछ ऐसी गतिविधि हुई जो मेरे मन को छू गई। यह कक्षा पहली की बात है। इससे मैंने सीखा कि बच्चे किस तरह अपने परिवेश की घटनाओं के बारे में परिचित होते हैं और उस माहौल में वे स्वयं भी शामिल होते हैं। बच्चे देखते हैं, सुनते हैं और तर्क कर काफ़ी कुछ सीखते व समझ भी विकसित करते हैं। उसी का एक छोटा-सा संस्मरण प्रस्तुत है। बच्चों के साथ यह चर्चा उनकी स्थानीय भाषा में हुई। लेकिन आपकी आसानी के लिए मैं इसे हिन्दी भाषा में लिख रहा हूँ।

द्वितीय कालखण्ड में, संगीत विषय पढ़ाने के लिए जब मैं कक्षा में गया तो *'बड़े सवेरे उठ मुर्गे ने'* कविता से कक्षा प्रारम्भ की। बच्चे बारी-बारी से इस कविता को गा रहे थे। गाने का क्रम चल ही रहा था कि एक बच्चे ने मुर्गे की आवाज़ निकाली। सब मुर्गे की आवाज़ निकालने पर जोर से हँसने लगे।

तभी एक बच्चे ने कहा, "टीचर देखो तो इसका दाँत टूट गया है!"

दूसरे बच्चे ने कहा, "यह ब्रश नहीं करता है।"

किसी अन्य बच्चे ने कहा, "इसका दाँत सड़ गया है।"

तो एक अन्य ने कहा, "यह पाउच/गुटखा खाता है।"

पाउच का नाम सुनते ही वह बच्चा गुस्सा हो गया। कहने लगा, "टीचर देखो न मेरे ऊपर ज़बरदस्ती इल्ज़ाम लगा रहे हैं। जबकि मैं यह सब नहीं खाता हूँ।"

मैंने कहा, "पाउच? यह क्या होता है?"

बच्चे बोले, "ओहो, क्या सर आप पाउच नहीं जानते?"

मैंने कहा, "नहीं।"

तो बच्चे बोले, "खाने का होता है।"

मैंने कहा, "तो यह खाने की चीज़ है। फ़िर उसे खाता है तो क्या हुआ?"

बच्चों ने जवाब दिया, "वाह सर, आप नहीं जानते, सर वो नशा करता है।"

मैंने कहा कि नशा करता है तो क्या हुआ? इस पर सभी बच्चों के अलग-अलग विचार आए। कुछ इस तरह : "टीचर जब कोई नशा करता है तो वो खूब हिलने-डुलने लगता है, बिजली के खम्भे से टकरा जाते हैं, घर में झगड़ा करते हैं, सड़क में सो जाते हैं, गन्दी गालियाँ देते हैं।"

मैंने कहा, "ओह! तो यह क्या अच्छी चीज़ है?"

बच्चे बोले, "नहीं।"

मैंने कहा, "हाँ, यह तो मुझे भी अच्छी चीज़ नहीं लग रही है। यह कहाँ मिलता है?"

बच्चों का जवाब था, "दुकान में।"

मैंने कहा, "जब यह अच्छी चीज़ नहीं है तो इसे क्यों बेचते हैं?"

बच्चे बोले, "टीचर, पैसा कमाने के लिए।"

मैंने सवाल किया, "तो क्या पाउच बेचकर ही पैसा कमाया जा सकता है?"

बच्चे एक साथ बोले, "नहीं।"

मैंने पूछा, "तो फिर?"

बच्चों ने जवाब दिया, "हाँ, कमा सकते हैं ना...आलू बेच के, प्याज बेच के, चॉकलेट बेच के, बिस्कुट बेच के, फसल बेच के, मोटू-पतलू (कॉमिक्स) बेच के, आलू चिप्स बेच के।"

मैं बोला, "तो फिर यह बन्द होना चाहिए।"

बच्चों ने कहा, "हाँ सही बात है।"

मैंने पूछा, "तो कैसे होगा यह?"

बच्चे बोले, "हम कल दुकान में जाकर बोलेंगे कि पाउच मत बेचो।"

चर्चा अभी चल रही थी। लेकिन तब तक दूसरे विषय की कक्षा का समय हो गया था, तो मैं चला गया।

चर्चा की शुरुआत में मैं गुटखे से अंजान-सा बन रहा था। इसलिए कुछ देर बाद बच्चों ने मुझे बुलाकर दिखाया। उन्होंने ब्लैकबोर्ड पर एक दुकान का चित्र बनाया हुआ था, जिसमें पाउच टंगे हुए थे।

जब मैं अगली बार उनकी कक्षा में गया तो उन्होंने अपने अनुभव बताए। बच्चों के अनुभव काफ़ी अलग-अलग थे। कुछ बच्चों ने बताया, "हम लोग अपने मौहल्ले की दुकानों में गए थे। हमने उनसे कहा कि वे पाउच बेचना बन्द कर दें। वहाँ पर बैठे लोगों ने और दुकान वाले ने हम लोगों को भगा दिया। और वे हँस रहे थे। कुछ अन्य बच्चों ने बताया, "ठेला वाला

बोला वह बेचना नहीं बन्द करेगा।"

एक बच्ची ने बताया, "पापा बोले ठीक है बन्द कर देंगे। पर अभी भी बेच रहे हैं।"

मैंने पहले भी अन्य संस्थानों में कार्य किया है, परन्तु ऐसा रोचक अनुभव कभी नहीं हुआ। छोटे बच्चों की भी ऐसी समझ होती है यह शायद मेरे लिए एक नया अनुभव था। स्कूल में प्रायः सभी शिक्षकों के लिए एक विशेष समय निर्धारित होता है और उस समय में शिक्षकों से विषयगत अपेक्षा भी रहती है और उसी के अन्तर्गत कक्षा आगे बढ़ती है। मुझे लगा कि बच्चों और उनके परिवेश की घटनाओं को समझने के लिए बातचीत एक बेहतर तरीक़ा हो सकता है और उसके लिए भी बच्चों के पास अवसर होने चाहिए। इसलिए मैंने संगीत की कक्षा में अपने विषय की गतिविधि को रोककर बच्चों के साथ चर्चा को आगे बढ़ाया।

उनकी बातों से मैं समझ पा रहा था कि किस तरह उनके या हमारे परिवेश में या व्यापक समाज में वयस्क, छोटे बच्चों को या उनकी बातों को सीधे तौर पर दबा देते हैं या नज़रअन्दाज़ कर देते हैं। उनके विचारों को उतना महत्त्व नहीं देते हैं, या यह समझते हैं कि बच्चे हैं कोई फ़र्क नहीं पड़ता। यह बच्चे भले ही आज शारीरिक या मानसिक रूप से उतने सक्षम नहीं हैं, जो उनसे अपनी बात मनवा सकें या किसी तरह का वाद-विवाद कर सकें। परन्तु बच्चे सही-ग़लत का फ़र्क समझ कर बड़ों के बीच अपनी बात रखकर विरोध कर पाने में सफल रहे हैं यह बड़ी बात है। बच्चों की यह सोच यदि इसी तरह बनी रही तो निश्चित ही वे आने वाले समय में एक बेहतर समाज को स्थापित करने में बहुमूल्य भूमिका निभा सकेंगे।

बच्चों ने बनाए 'पाउच' की दुकान के चित्र

खिलेन्द्र कुमार साहू ने शास्त्रीय संगीत में एमए और विशारद की उपाधि हासिल की है। पिछले सात वर्षों से वे शिक्षा के क्षेत्र में संगीत से जुड़े हुए हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन जैसे राष्ट्रीय चैनेलों पर आयोजित सांस्कृतिक कार्यक्रमों में लोकगीतों की प्रस्तुति उनकी विशेष उपलब्धि रही है। वे छोटे बच्चों को संगीत के माध्यम से, गीत गाकर, वाद्ययन्त्र बजा कर और बातचीत कर भाषागत कौशल सिखाने की प्रक्रिया में शामिल हैं। 2017 से वे अज़ीम प्रेमजी स्कूल, शंकरदाह, धमतरी (छत्तीसगढ़) में संगीत शिक्षक के तौर पर कार्यरत हैं। उनसे khilendra.sahu@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

भारतीय शिक्षा प्रणाली में ख़ुशी की किरण?

कृति गुप्ता

आरम्भ से ही शिक्षा का अर्थ गत्यात्मक रहा है। प्राचीन काल में जिसे धर्म के रूप में परिभाषित किया जाता था, वह आज बदल गया है और अब उसे 'वैज्ञानिक सोच' के रूप में समझा जाने लगा है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना में एक शिक्षित भारतीय की परिभाषा प्रतिबिम्बित होती है : वैज्ञानिक प्रकृति और उदार दृष्टिकोण वाला व्यक्ति जो व्यक्तिगत चिन्तन करने में सक्षम हो। वह शान्त और ख़ुश रहकर अपने अवलोकन, प्रयोग और चिन्तन के आधार पर नए ज्ञान का युग लाएगा (Liav Orgad, 2010, Heignotes, 2016)। लेकिन क्या यह स्वप्न, जिसे देश ने 1947 में देखा था, अपनी स्वतंत्रता के 73 साल बाद पूरा हो रहा है?

शिक्षा के उद्देश्य

सरकार द्वारा शिक्षा में किया गया कोई भी निवेश भविष्य में होने वाले लाभ के मद्देनज़र किया जाता है। हम विज्ञान, गणित और कला के क्षेत्र में ज्ञान और नवाचार के नए द्वार खोलने में सक्षम हैं। लेकिन हम इस सच्चाई से नज़रें नहीं चुरा सकते कि हर साल बड़ी संख्या में युवाओं को शिक्षित करने के बाद भी हम उन्हें एक ऐसे जीवन का आश्वासन नहीं दे पा रहे हैं जो हिंसा, कड़वाहट, लालच, घृणा जैसी बुराइयों से रहित हो। विश्व स्तर पर आज मानव जाति के सामने सबसे बड़ा ख़तरा वे परिस्थितियाँ हैं जो सामाजिक बुराइयों के कारण तेज़ी से बढ़ रही हैं (शिक्षा निदेशालय, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र की सरकार, दिल्ली)।

विश्व प्रसन्नता रिपोर्ट (वर्ल्ड हैप्पीनेस रिपोर्ट), 2018 में भारत का 133वाँ स्थान है, साथ ही दुनिया में विद्यार्थियों की आत्महत्या की उच्चतम दर (ईटी कॉन्ट्रिब्यूटर्स, 2018) भी भारत में ही है; यह आँकड़े भारतीय विद्यालयों में विद्यार्थियों की ख़ुशहाली को लेकर हमारी शिक्षा प्रणाली पर सवाल उठाते हैं।

दिल्ली सरकार ने इसे एक संकट के रूप में देखते हुए एक ऐसे पाठ्यक्रम की कल्पना की जो न केवल संज्ञानात्मक विकास, भाषा, साक्षरता आदि को बढ़ावा दे, बल्कि विद्यार्थियों के कल्याण और ख़ुशी को भी सम्बोधित करे (एससीईआरटी, दिल्ली, 2019)। इस सपने को साकार करने के लिए, जुलाई 2018 में दिल्ली सरकार की आम आदमी पार्टी ने राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के सभी सरकारी स्कूलों में नर्सरी से आठवीं कक्षा तक के लिए *ख़ुशी पाठ्यचर्या* शुरू की।

मैंने अपनी शीतकालीन फ़ील्ड परियोजना के रूप में ख़ुशी पाठ्यचर्या पर एक स्वतंत्र अध्ययन किया और फ़ील्ड में सात सप्ताह से अधिक समय बिताया। इसमें मैंने दिल्ली के आठ सरकारी स्कूलों के साथ कार्य किया, शिक्षकों और विद्यार्थियों के साथ सम्बन्ध जोड़ा, साक्षात्कार किए, कक्षाओं का अवलोकन किया और शिक्षकों एवं अन्य शैक्षिक अधिकारियों के साथ फोकस समूह चर्चाएँ कीं। इससे मुझे पाठ्यचर्या के शिक्षण और कक्षा में इसके अनुप्रयोगों को समझने में मदद मिली।

ख़ुशी का त्रय

ख़ुशी पाठ्यचर्या क्या है?

ख़ुशी पाठ्यचर्या (हैप्पिनेस करिकुलम या एचसी) वैज्ञानिक रूप से तैयार किया गया कोर्स है, जो अग्रहार नागराज (1999) नामक एक दर्शनशास्त्री द्वारा डिज़ाइन किए गए एक मज़बूत मानवीय और सामाजिक मॉडल पर आधारित है, जिसे द *ट्राइऐड ऑफ हैपिनेस* (एससीईआरटी, दिल्ली, 2019) कहा जाता है। इसके अनुसार, मनुष्य को अपनी इन्द्रियों, सम्बन्धों और सीखने के माध्यम से ख़ुशी मिलती है। इनमें से प्रत्येक, मानव जीवन के चार आयामों को सम्बोधित करता है : भौतिक, व्यावहारिक, बौद्धिक और अनुभवात्मक। ए.नागराज के अनुसार, मानव को जीवन के इन सभी पहलुओं की आवश्यकता है और वह इनकी तृप्ति चाहता है, जिसके परिणामस्वरूप उसे शान्ति, सन्तुष्टि और प्रसन्नता मिलती है और यह एक साथ मिलकर मानव की ख़ुशी का निर्माण करते हैं।

इस मॉडल के आधार पर, दिल्ली शिक्षा विभाग ने अपनी पाठ्यचर्या को इस प्रकार बनाया है कि सभी इकाइयाँ और मॉड्यूल बच्चों को तीनों प्रकार के आनन्द प्रदान करते हैं। मॉड्यूल को एक सर्पिल रूप में डिज़ाइन किया गया है, जिसका अर्थ है कि बाद में आने वाली प्रत्येक थीम पिछली थीम से जुड़ेगी और ज्यों-ज्यों बच्चा एक कक्षा से अगली कक्षा में जाएगा, उसका ज्ञान गहरा होता जाएगा। शिक्षकों के मार्गदर्शन के लिए '*टीचर्स हैंडबुक फॉर हैप्पीनेस क्लास*' प्रदान की गई।

पाठ्यचर्या के रचनाकारों के अनुसार, इसकी सामग्री सार्वभौमिक है, इसका डिज़ाइन आयु के उपयुक्त है तथा इसे शिक्षकों, दर्शनशास्त्रियों और अन्य लोगों के मार्गदर्शन में बनाया गया है। इस पाठ्यचर्या से अपेक्षा यह है कि विद्यार्थियों की जागरूकता के स्तर एवं सचेतनता का संवर्धन हो तथा अधिगम और गहन हो ताकि वे एक ख़ुशहाल और सार्थक जीवन जी सकें, भले ही भविष्य में वे कुछ भी बनें। इसके रचनाकारों का मानना है कि इस पाठ्यचर्या से हर बच्चा, चाहे वह किसी भी नस्ल, क्षेत्र, धर्म और जाति का हो, ख़ुश रहना सीख सकता है क्योंकि ख़ुशी एक कौशल है, और उचित मार्गदर्शन के साथ इसका *अभ्यास* किया जा सकता है और इसे *सीखा* जा सकता है।

मुख्य विशेषताएँ

- ख़ुशी की हर कक्षा में तीन मुख्य घटक होते हैं– सचेतनता या माइंडफुलनेस (10 मिनट), एक गतिविधि या कहानी (25 मिनट) जिसके बाद गतिविधि-उन्मुख चर्चाएँ होती हैं। प्रत्येक दिन एक विशिष्ट विषय पर ध्यान दिया जाता है, उदाहरण के लिए सोमवार को सचेतनता के साथ सुनने पर विशेष ध्यान दिया जाता है; शनिवार को अभिव्यक्ति पर आदि।
- इस पाठ्यक्रम में किसी कठोर समयरेखा का पालन नहीं किया जाता है। अगर शिक्षकों को लगता है कि किसी विशेष इकाई का सार विद्यार्थियों की समझ में नहीं आया है तो वे पूरे एक वर्ष तक उसी इकाई को समझा सकते हैं।
- इसमें बाल-केन्द्रित शिक्षणशास्त्र का अनुसरण किया जाता है, जहाँ बच्चे कक्षा का नेतृत्व करते हैं और शिक्षक चर्चाओं का सुगमीकरण करते हैं।
- इसमें कोई लिखित परीक्षा या ग्रेडिंग सिस्टम नहीं है। मूल्यांकन इसलिए किया जाता है कि बच्चे के जीवन में ख़ुशी की स्थिति का सीधे अवलोकन और मॉनिटर किया जा सके।
- इस पाठ्यचर्या के उद्देश्य, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005 के बिल्कुल अनुरूप हैं।

ख़ुशी पाठ्यचर्या और नीति विज्ञान

एचसी के शुरू होने के बाद इस पाठ्यचर्या की सबसे ज़्यादा आलोचना इस बात को लेकर हो रही है कि यह नीति विज्ञान (मॉरल साइंस) कार्यक्रमों के समान है जो दशकों से हमारी शिक्षा प्रणाली का हिस्सा है।

अपने अध्ययन में, मैंने पाया कि यह दोनों कार्यक्रम मिलते-जुलते अवश्य हैं पर वे समान नहीं हैं। दोनों के मूलभूत मूल्य समान हैं, लेकिन उनकी विशेषताएँ भिन्न हैं। नीति विज्ञान कार्यक्रम का उद्देश्य विद्यार्थियों को पहले से तय जीवन-मूल्य के बारे में सिखाना है। जिन कहानियों और शैक्षणिक विधियों का इस्तेमाल किया जाता है, वे शिक्षक-केन्द्रित ज़्यादा होते हैं और जहाँ चर्चा के दौरान पूछे जाने वाले सामान्य प्रश्न इस प्रकार के होते हैं कि *आपने इस कहानी से क्या सीखा?*

ख़ुशी की कक्षा में मेरा अवलोकन यह था कि इसमें जो प्रश्न पूछे जाते हैं वे बाल-केन्द्रित तरीक़े से पूछे जाते हैं; प्रश्न यह नहीं होता कि *आपने क्या सीखा* बल्कि यह पूछा जाता है कि *आपको क्या लगता है कि उस पात्र विशेष ने ऐसा क्यों किया होगा* या *यदि हम उसकी जगह होते तो हम क्या करते?* विद्यार्थियों को सोचने और चिन्तन करके उत्तर देने के लिए स्वतंत्र छोड़ दिया जाता है।

इसका तात्पर्य यह है कि नीति विज्ञान कक्षा में, 45 विद्यार्थी किसी कहानी से एक ही जीवन-मूल्य ग्रहण करते हैं जबकि ख़ुशी की कक्षा में एक ही कहानी के 45 अलग-अलग दृष्टिकोण हो सकते हैं।

ख़ुशी पाठ्यचर्या के बारे में धारणाएँ

मैंने पाया कि यद्यपि वर्तमान में देश में स्कूलों की संख्या की तुलना में एचसी बहुत कम स्कूलों में चलाया जा रहा है। फिर भी सभी हितधारकों की इसके सम्बन्ध में बहुत भिन्न धारणाएँ है :

- प्रधानाध्यापकों, ख़ुशी समन्वयकों और ज़िला समन्वयकों के लिए यह कार्यक्रम बच्चों में आत्म-विश्वास, स्वस्थ सम्बन्ध, एक अच्छे और सुरक्षित समाज का निर्माण करने और पारिस्थितिक स्थायित्व के लिए संवेदनशीलता को बढ़ावा देने से सम्बन्धित है।
- शिक्षक विकास समन्वयकों और स्कूल परामर्शदाताओं (मेंटॉर) के लिए यह कार्यक्रम बच्चों में एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाने से सम्बन्धित है ताकि वे चीज़ों पर ध्यान केन्द्रित कर सकें।
- शिक्षकों के लिए यह कार्यक्रम अच्छी और बुरी आदतों तथा नैतिक मूल्यों से सम्बन्धित है जो बच्चों को तनाव से निपटने में मदद करते हैं ताकि वे अपनी पढ़ाई पर बेहतर तरीक़े से ध्यान केन्द्रित कर सकें।
- विद्यार्थियों के लिए, यह एक मज़ेदार कक्षा है जिसमें वे कहानियाँ सुनते हैं, अच्छी बातें सीखते हुए गतिविधियाँ करते हैं।
- 'आप' अधिकारियों के अनुसार, यह कार्यक्रम विद्यार्थियों को ईमानदार और ज़िम्मेदार बनाकर मानवजाति के सर्वांगीण विकास के लिए हमारी शिक्षा प्रणाली को सक्षम और मज़बूत करता है। (एससीईआरटी, दिल्ली, 2019)

एचसी को प्रत्येक हितधारक अलग-अलग दृष्टिकोण से देखता है। इसका एक कारण यह है कि इन दो वर्षों में ख़ुशी शिक्षकों को अपर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त हुआ है– जब 2018 में इसे आरम्भ किया गया था तो उस दौरान सिर्फ़ एक कार्यशाला हुई थी। इसका मतलब यह है कि सभी नए शिक्षकों और नए सत्र में इस पाठ्यचर्या को पढ़ाना शुरू करने वाले शिक्षकों को प्रशिक्षण नहीं दिया गया था, हालाँकि नए शिक्षकों की मदद करने के लिए ख़ुशी समन्वयक, स्कूल परामर्शदाता और शिक्षक विकास समन्वयक होते हैं, जिन्हें शिक्षकों की तुलना में अधिक बार प्रशिक्षण प्राप्त होता है, और वे शिक्षकों का मार्गदर्शन करते हैं। लेकिन एकत्रित आँकड़ों से पता चलता है कि शैक्षिक दबाव के कारण स्कूल में एचसी पर केन्द्रित नियमित बैठकें बहुत कम होती हैं। इससे शिक्षकों और सरकार के बीच खाई पैदा हुई है।

इस पाठ्यचर्या में युवा शिक्षकों के तैयार न होने का एक और कारण यह है कि अब तक के शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम भावी शिक्षकों को ख़ुशी पाठ्यचर्या में प्रशिक्षित नहीं करते और नए शिक्षकों को इसके बारे में तभी पता चलता है जब वे स्कूल आते हैं। इसलिए शिक्षकों के लिए शिक्षकों की हैंडबुक ही सबसे विश्वसनीय मार्गदर्शिका है, जो अब एचसी के सभी युवा और नए शिक्षकों के लिए एकमात्र सन्दर्भ पुस्तिका बन गई है।

विद्यार्थियों पर प्रभाव

ऐसा पाया गया है कि बच्चों पर इसका सकारात्मक प्रभाव हुआ है जो साफ़ नज़र आता है। शिक्षकों के अनुसार, इस पाठ्यचर्या ने शिक्षक और विद्यार्थी दोनों के बीच के अन्तर को पाटने में मदद की है। हिंसा में कमी आई है, विशेषकर लड़कों के स्कूलों में। बच्चों ने अपनी व्यक्तिगत कहानियों और अनुभवों को साझा करना शुरू कर दिया है जिसके कारण स्कूल में एक सुरक्षित और ग़ैर-निर्णायक स्थान का निर्माण हुआ है।

माता-पिता भी बच्चों में एक स्पष्ट बदलाव देखते हैं, वे कहते हैं कि उनके बच्चे अब बहुत कुछ ऐसा सीख रहे हैं जो जीवन में उनकी मदद करेगा। उदाहरण के लिए, एक अभिभावक ने यह बात साझा की कि पहले वे जब भी वे बाज़ार जाते थे तो उनका बेटा हमेशा कुछ न कुछ माँगता था लेकिन अब वह ऐसा नहीं

करता। अब वह अपने पिता से कहता है, 'मुझे अपने दोस्तों को दिखाने के लिए कुछ भी नहीं चाहिए, मैं वही चीज़ें लूँगा जिनकी मुझे ज़रूरत है।'

आगे का रास्ता

इस अध्ययन के आधार पर मेरा निष्कर्ष यह है कि इस पाठ्यचर्या का विद्यार्थियों के जीवन पर कुछ सकारात्मक प्रभाव तो पड़ा है, लेकिन पाठ्यचर्या और मेरे अध्ययन की सीमित अवधि के कारण शिक्षा प्रणाली पर इसका अधिक प्रभाव अभी तक स्थापित नहीं किया जा सका है। लेकिन मेरा अध्ययन एक बात स्थापित कर सकता है- वह यह कि अगर शिक्षाविद्, शिक्षक और अभिभावक साथ मिलकर काम करें तो हमारी शिक्षा प्रणाली में हर बच्चा ख़ुश रहना सीख सकता है। अभी एचसी हमारी राष्ट्रीय पाठ्यचर्या का हिस्सा नहीं है, लेकिन इसमें जो जीवन मूल्य हैं, उनकी जड़ें *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा* (एन.सी.एफ., 2005) और शिक्षा बिना बोझ के (1993) में देखी जा सकती हैं। इसका मतलब यह है कि अगर हम दिल्ली मॉडल को ध्यान में रखते हुए इन राष्ट्रीय दिशानिर्देशों और सुझावों को लागू कर सकें तो कोई भी स्कूल, शिक्षक या अभिभावक ख़ुशी का अभ्यास करने में बच्चों की और ख़ुद की मदद कर सकते हैं।

हमें केवल एक बात पर विश्वास करना चाहिए : ख़ुशी एक भावना से कहीं बढ़कर है। यदि सही मार्गदर्शन हो और अच्छी तरह से इसका अभ्यास किया जाए तो इसे *सिखाया* जा सकता है।

References

Directorate of Education, Government of NCT of Delhi. (n.d.). 2015 and beyond Delhi Education Revolution. Delhi: Directorate of Education, Government of NCT of Delhi.

ET Contributors. (2018, March 22). A student commits suicide in India every hour; how can our educational system prevent this? Retrieved from Economic Times: *https://economictimes.indiatimes.com/magazines/panache/between-the-lines/a-student-commits-suicide-in-india-every-hour-how-can-our-educational-system-prevent-this/articleshow/63411123.cms*

Heignotes. (2016, December 17). THE PREAMBLE OF THE INDIAN CONSTITUTION AND ITS EDUCATIONAL IMPLICATIONS. Retrieved from Heignotes: https://heignotes.com/2016/12/17/the-preamble-of-the-indian-constitution-and-its-educational-implications/

Liav Orgad. (2010). The preamble in constitutional interpretation. International Journal of Constitutional Law, 714-738.

SCERT, Delhi. (2019). Happiness Curriculum. Delhi: SCERT, Delhi.

कृति गुप्ता शिक्षकों के परिवार में जन्मी और पली-बढ़ी। शिक्षा में अपनी रुचि को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय से प्राथमिक शिक्षा में स्नातक की डिग्री पूरी की। एकलव्य, SAMA (महिलाओं और स्वास्थ्य का एक संसाधन समूह) और लोकपंचायत सहित कई संगठनों के साथ स्वैच्छिक रूप से काम किया। 2020 में उन्होंने अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु से एमए (विकास) पूरा किया है। वे शिक्षा तथा मानसिक स्वास्थ्य एवं कल्याण के क्षेत्र में रुचि रखती हैं। उनसे kritiguptaa96@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

अँग्रेज़ी सीखना आसान बनाएँ

पौलमी सामन्त

आजकल हर किसी पर अँग्रेज़ी बोलना सीखने का दबाव है। ऐसी धारणा बनी हुई है कि यदि कोई व्यक्ति अँग्रेज़ी भाषा नहीं सीखता तो वह सफल नहीं हो सकता। भाषा कोई भी हो, उसे सीखने के लिए अभ्यास के अवसर चाहिए होते हैं। ऐसे कई कारण हैं जिनसे बच्चों को अँग्रेज़ी सीखने में मुश्किल होती है, ख़ासकर अगर वे अपने घर की भाषा बोलने के अधिक अभ्यस्त हों। यहाँ कुछ कारण दिए गए हैं :

- झिझक
- अधिगम की उचित गतिविधियों का अभाव
- अँग्रेज़ी में बातचीत के लिए उपयुक्त वातावरण का न होना
- मातृभाषा का अधिक उपयोग
- माता-पिता के सहयोग की कमी
- सीखने का सही माहौल या सीखने के लिए एक सुरक्षित स्थान बनाने में शिक्षकों की अक्षमता

अँग्रेज़ी-अधिगम के संवर्धन के तरीके

सीधा तरीक़ा

इस तरीक़े में शिक्षक, विद्यार्थियों के साथ केवल अँग्रेज़ी में बातचीत करते हैं और नए वाक्य बनाने में कक्षा की मदद करते हैं। बाद में, बातचीत के दौरान शिक्षक अँग्रेज़ी भाषा बोलने में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करते हैं। इसमें दृश्य-श्रव्य सामग्री की मदद से वाक्य को प्रस्तुत करने की तकनीक का उपयोग करना चाहिए। यदि सीखने के शुरुआती चरण में सहायक सामग्री के रूप में चित्र, मॉडल, फ्लैशकार्ड और वास्तविक चीज़ों को शिक्षार्थी के सामने आकर्षक और दिलचस्प रूप से पेश किया जाए तो इनका बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। अँग्रेज़ी के लगातार उपयोग से विद्यार्थियों को अँग्रेज़ी बोलने और पढ़ने में मदद मिलती है।

व्याकरण एवं अनुवाद विधि

इस विधि में शिक्षक शब्दावली के परिचय के साथ पाठ शुरू करते हैं। शब्दों का अर्थ मातृभाषा/स्थानीय भाषा में समझाया जाता है। फिर शिक्षक अनुच्छेद का अनुवाद करते हैं और मातृभाषा/स्थानीय भाषा की मदद से व्याकरणिक अंशों की व्याख्या करते हैं। शिक्षार्थियों को मातृभाषा/स्थानीय भाषा में व्याकरण के नियमों की नकल करने के लिए कहा जाता है। अन्त में, अधूरे रह गए अभ्यास और नियमों को सीखना, इन्हें गृहकार्य के रूप में दिया जाता है।

किसी शब्द के विभिन्न रूपों या उनके उपयोग के बारे में सीखना

कक्षा या घर में अन्य सम्बन्धित शब्दों को सीखना और ग्रहण करना, उदाहरण के लिए *tidy* और *untidy, tidying up* आदि।

शिक्षक क्या कर सकते हैं

हो सकता है कि कई मामलों में कक्षा ही एकमात्र ऐसी जगह हो जहाँ बच्चे को एक नई भाषा, विशेष रूप से अँग्रेज़ी सीखने और अभ्यास करने का अवसर मिलता हो। शिक्षक को उन तरीक़ों के प्रति सचेत रहना होगा जिनसे बच्चों को सीखने में मदद मिल सके। इसके लिए यह सुनिश्चित करना ज़रूरी है कि कक्षा को पर्याप्त पठन सामग्री और बोलने के अवसर दिए जाएँ। कहानियों को पढ़ने या कक्षा में किसी विषय पर बोलने के माध्यम से नए शब्दों को सीखना एक बहुत प्रभावी रणनीति है।

शब्दावली का संवर्धन

एक अच्छे वक्ता की शब्दावली समृद्ध होती है और वह बोलते समय उनका उपयोग करता है। इसलिए अगर शिक्षक हर दिन कक्षा का परिचय कम-से-कम दस शब्दों से करवाएँ और अगले दिन कक्षा में उनका उपयोग करने के अवसर दें तो इससे बच्चों को काफ़ी मदद मिलेगी।

बच्चों की झिझक दूर करने में मदद करना-

यदि आप बोलते समय गलतियाँ करें तो लोग आपको किस दृष्टि से देखेंगे, इस बारे में सभी के मन में हिचकिचाहट रहती है और डर रहता है, विशेष रूप से उनके मन में जिनकी अपनी भाषा अँग्रेज़ी नहीं है। यह डर तब तक बना रहेगा जब तक कि शिक्षक इसे दूर न कर दें। क्योंकि वे ही एक ऐसे सुरक्षित वातावरण का निर्माण कर सकते हैं जहाँ सभी बच्चों को अपनी सोच और विचारों को व्यक्त करने का समान अवसर दिया जाता है।

कहानी सुनाना

बच्चों का ध्यान *सही* ढंग से बोलने की बजाय *धाराप्रवाह* रूप से बोलने पर केन्द्रित करें। इसके लिए उन्हें कहानियाँ सुनाने के लिए प्रोत्साहित करें।

अँग्रेज़ी फिल्में देखना

यदि सम्भव हो तो विद्यार्थियों को अँग्रेज़ी के टेलीविज़न कार्यक्रम या फिल्में देखने के लिए प्रोत्साहित करें। यह नए शब्दों और वाक्यांशों को सीखने का एक अच्छा तरीक़ा है। अगर स्कूल के घण्टों के दौरान इन्हें एक साथ देखा जा सके तो उसके बाद उस कार्यक्रम पर चर्चा की जा सकती है।

नोटबुक रखना और शब्दकोश का उपयोग करना

बच्चों को नए शब्द लिखने के लिए एक नोटबुक रखने के लिए प्रोत्साहित करें और शब्दकोश में उनके अर्थ ढूँढ़ने में उनकी मदद करें। कक्षा के लिए यह एक दिलचस्प गतिविधि हो सकती है।

स्थानीय भाषा के साथ-साथ अँग्रेज़ी का उपयोग करना

यदि शिक्षक स्थानीय भाषा के साथ-साथ अँग्रेज़ी का भी प्रयोग करें तो अँग्रेज़ी सीखने में आसानी होगी और अच्छी तरह से समझ में भी आएगी। उदाहरण के लिए बच्चों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे कहानियों की व्याख्या स्थानीय भाषा में करें।

छोटे-छोटे वाक्यों में चित्रों का वर्णन करना

विद्यार्थी चित्रों का वर्णन करके अपनी क्षमता और समझ विकसित कर सकते हैं। उन्हें एक तस्वीर दिखाकर सरल वाक्यों में उसका वर्णन करने के लिए कहें। यह गतिविधि कक्षा में मौजूद विभिन्न स्तर के विद्यार्थियों के लिए सहायक है।

शब्दों से वाक्य बनाना

थोड़ी-सी मदद और प्रोत्साहन के साथ हर बच्चा यह सीख सकता है कि अँग्रेज़ी के साथ-साथ स्थानीय भाषा में भी वाक्य कैसे बनाएँ।

चित्र-कथाएँ बनाना

विद्यार्थियों से कहें कि वे चित्रों को एक क्रम में व्यवस्थित करके कहानी सुनाएँ। उन्हें कहानी सुनाने के लिए और साथ ही स्थानीय भाषा व अँग्रेज़ी भाषा दोनों में चित्रों का वर्णन करने के लिए प्रोत्साहित करें। यह गतिविधि उनकी अँग्रेज़ी में सुधार करने के साथ-साथ उनकी सोच और कल्पना को भी विकसित करती है।

अख़बार पढ़ना

यह गतिविधि बड़े बच्चों के लिए उपयोगी है। शिक्षक, पठन के अभ्यास के लिए अख़बार पढ़ने के लिए दे सकते हैं और

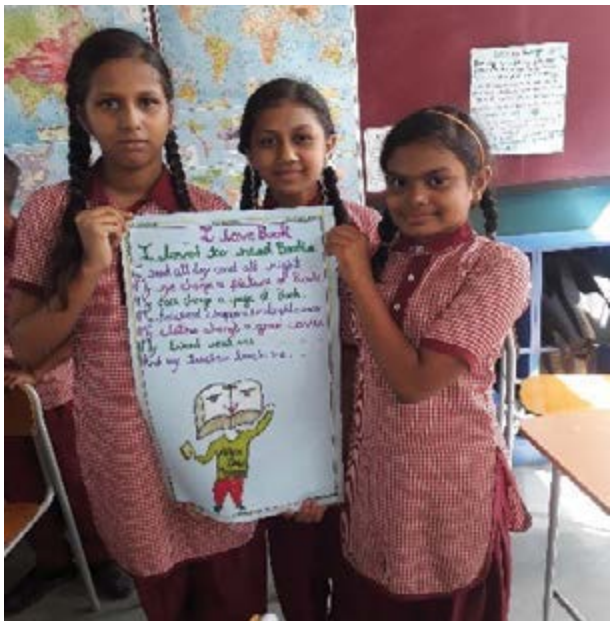

बच्चों को कठिन शब्दों के अर्थ जानने के लिए शब्दकोश का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित कर सकते हैं। किसी समाचार के बारे में चर्चा करने से बोलने का अभ्यास होगा।

कहानी का विस्तार करना

कहानी समाप्त होने के बाद बच्चे से कहिए कि वह अपनी कल्पना से एक नई कहानी बनाने की कोशिश करे। कक्षा का प्रत्येक बच्चा इस गतिविधि में भाग ले सकता है।

पुस्तकालय का सक्रिय रूप से उपयोग करना

अगर पुस्तकालय या कक्षा-पुस्तकालय का अच्छी तरह से उपयोग किया जाए तो यह एक बढ़िया संसाधन हो सकता है। पढ़ने से शब्दावली का संवर्धन होता है और लेखन-कौशल में मदद मिलती है।

निष्कर्ष

ऐसा कोई एक तरीक़ा नहीं है जो सभी बच्चों के लिए उपयुक्त हो, इसलिए शिक्षक को कक्षा की ज़रूरतों के अनुसार अँग्रेज़ी सिखाने की सर्वोत्तम विधि का चयन करना चाहिए। शिक्षण का जो तरीक़ा, टैक्नॉलाजी की उपलब्धता के कारण, शहरी परिवेश में सफल रहे, हो सकता है वह ग्रामीण क्षेत्र में काम न आए। मैंने अँग्रेज़ी सीखने के लिए जिन गतिविधियों और प्रक्रियाओं का वर्णन किया है, वे ग्रामीण क्षेत्रों में विद्यार्थियों की मदद कर सकती हैं।

पौलमी सामन्त ने स्नातकोत्तर उपाधि के साथ-साथ रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, रायपुर से बीएड भी किया है। वे अज़ीम प्रेमजी स्कूल, शंकरदाह, धमतरी (छत्तीसगढ़) में शिक्षिका हैं। वे मानती हैं कि हर बच्चे में सीखने की सामर्थ्य और क्षमता होती है और शिक्षकों का उचित मार्गदर्शन प्राप्त होने पर वे बेहतर सीख सकते हैं। उन्हें खाना बनाना, गाना, यात्रा करना और कहानियाँ लिखना बहुत पसन्द है। उनसे poulami.samanta@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

शून्य अंक प्राप्त करने वाले समूह पर ध्यान देना

रश्मि पालीवाल

पृष्ठभूमि

एकलव्य एक ग़ैर-सरकारी संगठन है जो मध्यप्रदेश में 1982 से स्कूली शिक्षा में नवाचारों की दिशा में काम कर रहा है। यह लेख मध्यप्रदेश के एक आदिवासी ब्लॉक के 34 गाँवों में प्राथमिक स्कूल के बच्चों के लिए, 2015-19 के बीच *एकलव्य* द्वारा किए गए हस्तक्षेप पर आधारित है। *एकलव्य* का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना था कि चार साल तक बच्चों के साथ कार्य करने के फलस्वरूप उनकी भाषा और गणित की योग्यता में सुधार हो, उनके प्राप्तांकों में संवर्धन हो। कुछ हद तक सफलता मिली भी : हालाँकि, हमने पाया कि कुछ बच्चे जो स्कूल के साथ-साथ *एकलव्य* केन्द्रों में भी जाते थे, वे साल भर तक स्कूल में उपस्थित रहने के बावजूद शून्य अंक के स्तर पर ही बने रहे। हम इस विषय पर चर्चा करेंगे कि *एकलव्य* ने इस मुद्दे की जाँच कैसे की और सभी बच्चों को सीखने में मदद करने के लिए किन सम्भावित कदमों की परिकल्पना की गई।

एकलव्य सहित कई और संगठन भी ऐसे हैं जो सभी बच्चों को सीखने में सक्षम बनाने के लिए बहुत आशा और ईमानदारी के साथ काम करते हैं। हम जिन विषयों पर ध्यान देते हैं, वे इस प्रकार हैं : अभिनव सामग्रियों, गतिविधियों और तरीक़ों को विकसित करना, प्रशिक्षण, कार्यशालाओं और शिक्षाविदों तथा शिक्षकों के साथ फॉलोअप बैठकें करना, बच्चों के अधिगम के आकलन के लिए वैकल्पिक और समग्र तरीक़े अपनाना आदि। इसके अलावा, पिछले पाँच वर्षों में मैंने डाटा संधारण और उसके अध्ययन से होने वाले लाभों के बारे में भी सीखा ताकि इन प्रयासों में सुधार करके उन्हें अधिक प्रभावी बनाया जा सके।

कार्य-प्रणाली

मैंने अक्टूबर 2015 से मार्च 2019 तक जमशेदजी टाटा ट्रस्ट के तत्वावधान में छिन्दवाड़ा जिले के तामिया ब्लॉक में प्रारम्भिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण की परियोजना में भाग लिया। इसे 34 गाँवों में आयोजित किया गया था, जिसमें 37 प्राथमिक स्कूलों के लगभग 3500 बच्चे और 15 माध्यमिक स्कूलों के लगभग 1800 बच्चे थे। *एकलव्य* की 6 लोगों की कोर टीम ने 62 लोगों की फील्ड टीम के साथ काम किया; जिसमें 39 स्थानों में प्राथमिक स्तर के लिए स्कूल के बाहर (आउट-ऑफ-स्कूल) सहायता केन्द्रों का दो घण्टे के लिए संचालन करना शामिल था। इसके अतिरिक्त साप्ताहिक रूप से स्कूलों को पुस्तकालय-संचालन, गतिविधि केन्द्रों के उपयोग, शिक्षण-अधिगम सामग्री का उपयोग और शिक्षक-विकास प्रक्रियाओं में मदद दी गई।

कार्य के प्रभाव को देखने के लिए, स्कूल और *एकलव्य* के आउट-ऑफ-स्कूल केन्द्रों (जिन्हें शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र कहा जाता है) में प्रत्येक बच्चे की उपस्थिति के आँकड़ों को एकत्र करके उनकी समीक्षा की गई। अधिगम-स्तर पर हुए प्रभाव का अध्ययन करने के लिए 34 गाँवों में से 17 गाँवों के सैम्पल का अध्ययन किया गया। कक्षा III और कक्षा V के बच्चों का आकलन किया गया।

मूलत: प्रारम्भिक योजना यह थी कि परियोजना के बाद के प्रत्येक वर्ष में इन बच्चों द्वारा प्राप्त अंकों में सुधार हुआ है या नहीं, इस बात का पता लगाना। इसके पीछे की हमारी सोच यह थी कि *एकलव्य* द्वारा बच्चों, शिक्षकों और माता-पिता को निरन्तर शैक्षिक मदद देने के कारण, बाद के प्रत्येक बैच के अधिगम-स्तर में सुधार होना चाहिए। यानी फरवरी 2016 में तीसरी कक्षा के किसी बच्चे को सिर्फ़ कुछ महीनों के लिए शैक्षिक मदद मिली होगी; 2017 में तीसरी कक्षा के बच्चे को एक साल तक शैक्षिक मदद का लाभ मिला होगा; 2018 में तीसरी कक्षा के बच्चे को दो साल तक और 2019 में तीन साल तक शैक्षिक मदद मिली होगी। हमारा उद्देश्य यह सुनिश्चित करना था कि तीसरी कक्षा के सभी बच्चे पहली कक्षा की हिन्दी और गणित की बुनियादी योग्यता हासिल कर चुके हों और पाँचवीं कक्षा के सभी बच्चे तीसरी कक्षा की हिन्दी और गणित की बुनियादी योग्यता हासिल कर चुके हों। *एकलव्य* की कोर टीम और फील्ड टीम के कुछ सदस्यों द्वारा प्रत्येक वर्ष फरवरी-मार्च में आयोजित लिखित और मौखिक अभ्यासों के माध्यम से इनका परीक्षण किया गया। हर साल तीसरी कक्षा के लगभग 150 बच्चों और पाँचवीं कक्षा के 150 बच्चों का परीक्षण किया गया। इन सभी वर्षों में बच्चों के विभिन्न बैचों को दिए गए टेस्ट पेपर/कार्य समान थे।

क्या हर बच्चे ने सीखा?

हमारे निष्कर्ष

औसत अंक

तीसरी और पाँचवीं कक्षा के लगातार चार बैचों के अध्ययन से प्राप्त तुलनात्मक परिणाम नीचे दिए गए हैं।

गणित कक्षा III	औसत अंक - प्रतिशत में	विद्यार्थियों की संख्या
एंड-लाइन 2018-19	68%	158
एंड-लाइन 2017-18	53%	141
मिड-लाइन 2016-17	42%	161
बेस-लाइन 2015-16	33%	161

गणित कक्षा V	औसत अंक - प्रतिशत में	विद्यार्थियों की संख्या
एंड-लाइन 2018-19	45%	188
एंड-लाइन 2017-18	34%	165
मिड-लाइन 2016-17	31%	165
बेस-लाइन 2015-16	28%	152

भाषा कक्षा III	औसत अंक - प्रतिशत में	विद्यार्थियों की संख्या
एंड-लाइन 2018-19	38%	154
एंड-लाइन 2017-18	34%	136
मिड-लाइन 2016-17	30%	161
बेस-लाइन 2015-16	18%	151

भाषा कक्षा V	औसत अंक - प्रतिशत में	विद्यार्थियों की संख्या
एंड-लाइन 2018-19	59%	191
एंड-लाइन 2017-18	49.4%	162
मिड-लाइन 2016-17	49.2%	164
बेस-लाइन 2015-16	41.6%	141

बेस-लाइन (2016), मिड-लाइन (2017), एंड-लाइन-1 (2018) और एंड-लाइन-2 (2019) । यह दर्शाता है कि चार वर्षों के दौरान बच्चों के प्रदर्शन में सुधार हुआ क्योंकि औसत अंकों में वृद्धि हुई है।

शून्य अंक प्राप्त करने वाले बच्चे

हमने प्रत्येक टेस्ट पेपर में 0,1,2,3,4 अंक पाने वाले बच्चों के प्रतिशत को देखा। हमने देखा कि पाँचवीं कक्षा में, गणित विषय को छोड़कर, 0 अंक पाने वाले बच्चों का प्रतिशत चार वर्षों में सामान्यतः कम हुआ था लेकिन पाँचवीं कक्षा के भाषा विषय के नमूने में उतना कम नहीं हुआ था। उदाहरण के लिए, तीसरी कक्षा के हिन्दी के नमूने में, 2016 में शून्य अंक पाने वालों में 65% बच्चे, 2017 में 50%, 2018 में 45% और 2019 में 39% बच्चे थे। तीसरी कक्षा के बैचों में, शून्य अंक पाने वाले बच्चों का प्रतिशत चार सालों में 30, 27, 18 और 9 था। इस प्रकार कुल मिलाकर आँकड़ों से यह पता चला कि जैसे-जैसे परियोजना आगे बढ़ी, हर साल सीखने वाले बच्चों की संख्या बढ़ रही थी।

उन बच्चों के बारे में जानना जिन्होंने नहीं सीखा

मिड-लाइन अध्ययन के परिणामों की समीक्षा करने के बाद जब हमने पाया कि कई बच्चों को शून्य अंक मिले हैं तो हमने उनके बारे में अधिक जानने का फैसला किया। हमने उन बच्चों के साथ परीक्षण को दोहराने का फैसला किया, जिन्होंने 2016 में, बेसलाइन टेस्ट में शून्य अंक प्राप्त किए थे। यह बच्चे पाँचवीं और सातवीं कक्षा में पहुँच गए थे। तो उदाहरण के लिए, मार्च 2016 में किए गए बेसलाइन टेस्ट में तीसरी कक्षा के 90 बच्चे शून्य स्कोर में थे। नवम्बर 2017 तक, इनमें से 88 बच्चों की पुनः परीक्षा ली गई और परीक्षा के लिए वही पेपर दिया गया (वे तब पाँचवीं कक्षा में थे)। उनमें से 58 बच्चों के सीखने के स्तर में सुधार हुआ था और उन्हें बेहतर अंक मिले थे लेकिन उनमें से 30 ने फिर से शून्य स्कोर किया।

उपर्युक्त आँकड़ों के आधार पर, हमने उन विद्यार्थियों की एक सूची बनाई जो स्कूल और शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र में एक वर्ष से अधिक समय से जा रहे थे लेकिन वे किसी भी दक्षता को सीखने में सक्षम नहीं हो पाए थे। हमने स्कूल में उनकी

उपस्थिति पर भी नज़र रखी। ट्रैकिंग प्रणाली के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

नो-मूवमेंट लिस्ट (2016 और 2017 में 0 से 0 स्कोर)

2016 में 0 अंक प्राप्त विद्यार्थी	स्कूल में उपस्थिति 2015-16	शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र में उपस्थिति 2015-16	स्कूल में उपस्थिति 2016-17	शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र में उपस्थिति 2016-17	पुन: परीक्षण स्कोर 0 (अक्टूबर 2017)
अमिता	80%	75%	79%	82%	गणित
सोनम	68%	61%	59%	66%	गणित
अमृता	70%	63%	67%	64%	गणित
रानी	62%	55%	66%	74%	गणित
मनीष	73%	68%	56%	64%	गणित
जयकिशन	73%	67%	NA	NA	दोनों में

केस स्टडी

यह पता लगने के बाद हमने गाँव के बच्चों, उनकी देखभाल करने वालों और शिक्षकों के साथ बैठक की। इस प्रकार उन 30 बच्चों पर चर्चा की गई और घर, स्कूल और शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र की समग्र गतिविधियों में उनकी भागीदारी को दर्ज़ किया गया। टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस (TISS) के चार विद्यार्थी मार्च 2018 के अन्तिम सप्ताह में अपने रूरल प्रेक्टिकम के लिए हमारे साथ जुड़े, उन्होंने भी केस स्टडी में मदद की। नीचे कुछ उदाहरण दिए गए हैं।

केस स्टडी 1

लक्ष्मी के शिक्षक के अनुसार वह अपने बारे में कुछ बुनियादी जानकारी लिख सकती है, जैसे अपना नाम, अपने माता-पिता का नाम, अपने गाँव का नाम आदि। वह चित्रों की सही पहचान भी कर सकती है, लेकिन मात्रा वाले शब्द लिखने में उसे मुश्किल होती है। गणित में वह 100 तक गिन सकती है और बुनियादी जोड़ और घटाव कर सकती है। शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र के उसके शिक्षक ने हमें बताया कि वह कक्षा में नियमित रूप से आती है और उसकी उपस्थिति 82% है। उसकी माँ सोनम एकल अभिभावक हैं और परिवार की कमाने वाली एकमात्र सदस्य हैं। जब लक्ष्मी सिर्फ़ नौ महीने की थी तब उसके पिता का निधन हो गया था। सोनम कभी-कभी मौसमी मज़दूरी के लिए पास के शहर जैसे पिपरिया जाती हैं। इसके अलावा अपनी आय बढ़ाने के लिए वह सूखे महुआ भी बेचती हैं। महुआ इकट्ठा करने के लिए वह अपने बच्चों को साथ नहीं ले जातीं। जब सोनम काम पर जाती हैं तो लक्ष्मी और उसका बड़ा भाई, जो नौवीं कक्षा में पढ़ता है, घर पर अकेले रहते हैं और अपने लिए खाना ख़ुद बनाते हैं। माँ के अनुसार लक्ष्मी सुबह लगभग 5 बजे उठती है, दो घण्टे पढ़ती है और उसके बाद शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र और स्कूल जाती है। लक्ष्मी की माँ ने हमें बताया कि नौवीं कक्षा में पढ़ने वाला उनका बेटा भी पढ़ाई में काफ़ी कमज़ोर है और वह ठीक से पढ़ या लिख नहीं सकता। उन्होंने यह भी कहा कि प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक ज़रा लापरवाह हैं और वे अक्सर नशे में स्कूल आते हैं। लक्ष्मी अगर थोड़ा-बहुत जानती है तो वह सिर्फ़ इसलिए कि वह शिक्षा प्रोत्साहन केन्द्र में जा रही है और उसके अकादमिक प्रदर्शन में भी सुधार हुआ है।

केस स्टडी 2

सुनील स्कूल में नियमित रूप से नहीं आता। जब वह चौथी कक्षा में था, तब उसकी उपस्थिति बहुत ही कम थी और पाँचवीं कक्षा में तो और भी कम। भले ही सुनील अब पाँचवीं कक्षा में है, पर वह वर्णमाला और संख्याएँ पहचानने में असमर्थ है। वह अपनी परीक्षा की उत्तर-पुस्तिका में अपने माता-पिता का नाम और तारीख़ सही ढंग से नहीं लिख पाता। उसके शिक्षक का कहना है कि उसके सीखने का स्तर पहली कक्षा के विद्यार्थी के बराबर है। किन्तु वह ड्राइंग में बहुत अच्छा और रचनात्मक है। सुनील के माता-पिता का कहना है कि वे उसे स्कूल तक छोड़कर आते हैं, लेकिन वह बीच-बीच में अपने दोस्तों के साथ खेलने के लिए भाग जाता है और जब वे उसे स्कूल जाने के लिए मजबूर करते हैं तो उसका रवैया बहुत आक्रामक हो जाता है।

सुनील का सम्बन्ध अन्य पिछड़े वर्ग के यादव परिवारों से है, जो समुदाय के अधिकांश ग्रामवासियों की तुलना में आर्थिक रूप से बेहतर हैं। सुनील पक्के घर में रहता है। उसके परिवार के पास मवेशी हैं तथा उनकी आय का प्रमुख स्रोत दूध बेचना है। घर में सारा काम मिलकर किया जाता है - सुनील की माँ भैंसों का दूध दुहती हैं, वह और उसका भाई मवेशियों को चारा-दाना खिलाते हैं तथा उनके पिता दूध और दूध के उत्पाद बेचने के लिए पिपरिया जाते हैं। उसका परिवार प्रति माह

लगभग दस हज़ार रुपये कमाता है, जो उनके खेती-बाड़ी करने वाले पड़ोसियों की आय से लगभग दोगुना है। सुनील और उसका भाई जयराम महुआ, तेन्दू और इमली इकट्ठा करने के लिए जंगल में जाते हैं, जिसे वे बाजार में 30-40 रुपये किलो में बेचते हैं। इस परिवार के पास ज़मीन भी है और नियमित आय भी।

सुनील के दोस्तों का कहना है कि शिक्षा महत्त्वपूर्ण है, शिक्षक अच्छी तरह से पढ़ाते हैं और उन्हें मारते नहीं हैं, लेकिन वे सिर्फ़ इसलिए स्कूल नहीं आते हैं क्योंकि उन्हें पढ़ाई में कोई दिलचस्पी नहीं है। सुनील का बड़ा भाई सात किलोमीटर दूर एक मिडिल स्कूल में पढ़ने जाता है। जब 2016 में सुनील पाँचवीं कक्षा में था तो उसका स्कोर भी शून्य अंक था। 2017 के अन्त में, जब वह सातवीं कक्षा में था, तो उस समय किए गए पुनः परीक्षण में उसका स्कोर फिर से शून्य ही था।

अपने निष्कर्षों पर चिन्तन

तामिया एक वन्य और पहाड़ी ब्लॉक है, जिसमें ज़्यादातर गोंड और भारिया जनजाति के लोग रहते हैं। ऊपर दिए गए उदाहरणों में लक्ष्मी के परिवार जैसे कई परिवार मामूली से किसान हैं, जो मज़दूरी के लिए मौसमी प्रवास पर निर्भर रहते हैं। हम इस पृष्ठभूमि के बच्चों के प्रदर्शन की जाँच कर रहे हैं और उनमें से भी ऐसे बच्चों को लक्ष्य कर रहे हैं, जिनके अधिगम में सुधार नहीं हुआ, जबकि उसी सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि से आने वाले कई बच्चों में सुधार देखने को मिला।

दूसरी ओर हम उच्च सामाजिक स्थिति तथा अपेक्षाकृत बेहतर आर्थिक स्थिति वाले परिवारों से आने वाले बच्चों के सम्पर्क में भी आए (जैसे कि सुनील) जो बहुत निचली कक्षाओं की दक्षताओं को भी नहीं सीख पाए। कुछ मामलों में यह भी देखने को मिला कि उनके भाई-बहनों को भी चुनौतियों का सामना करना पड़ा था। हालाँकि कुछ ने सातवीं कक्षा में आते-आते अपने प्रदर्शन में सुधार करने में कामयाबी हासिल की, लेकिन कुछ अन्य बच्चों में बमुश्किल ही सुधार दिखाई दिया। कई मामलों में माता-पिता ने अपने बच्चों की स्कूली शिक्षा को गम्भीरता से लिया लेकिन उन्हें हताशा महसूस हुई। पर उन्होंने हमेशा ही शिक्षकों को दोष नहीं दिया; बल्कि कुछ शिक्षकों को उनके प्रयासों के लिए सराहा भी। इसके अलावा हमें ऐसे उदाहरण भी मिले जहाँ माता-पिता दोनों ने प्राथमिक स्तर की स्कूली शिक्षा प्राप्त की थी; वे व्यवसाय में कार्यरत थे या सरकारी नौकरी करते थे, लेकिन हमारी दो साल की शैक्षिक मदद के दौरान उनका बच्चा शून्य स्कोर की श्रेणी में ही था।

आँकड़ों और केस स्टडी का विश्लेषण करने से हमने यह जाना कि कोई ऐसा सरल कारण नज़र नहीं आ रहा था जिससे इस बात को समझा जा सके कि बच्चों में अधिगम कम क्यों हो रहा था। एक सम्भावना पर हमने विचार किया कि शायद बच्चों के उस समूह विशेष में अधिगम सम्बन्धी विशिष्ट अक्षमता रही हो। इस मुद्दे पर हमने जो कुछ पढ़ा, वह हमारे अवलोकन को पुष्ट कर रहा था। उदाहरण के लिए, सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि का विशिष्ट अधिगम अशक्तता(एसएलडी) के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। अन्य निष्कर्ष इस प्रकार थे :

- एक हद तक विशिष्ट अधिगम अशक्तता का कारण यह हो सकता है कि परिवार के सदस्यों को आनुवांशिक रूप से तंत्रिका सम्बन्धी समस्या हो।
- अधिगम की अशक्तता को अन्य विशेष आवश्यकताओं, जैसे अति-सक्रियता और ध्यान की कमी (अटेंशन डेफिसिट) के साथ जोड़ा जा सकता है।
- विशिष्ट अधिगम अशक्तता का बुद्धिमत्ता के स्तर से कोई सम्बन्ध नहीं है।
- हो सकता है कुछ बच्चों में विशिष्ट अधिगम अशक्तता पढ़ने-लिखने में कठिनाई के रूप में प्रकट हो, लेकिन संख्यात्मक कार्यों में नहीं, या इसका उल्टा हो सकता है या कुछ मामलों में दोनों ही प्रकार की कठिनाइयाँ एक साथ हो सकती हैं।

हमने यह भी महसूस किया कि जिन बच्चों ने सीखने में बहुत कम प्रगति दिखाई थी, उनमें से कुछ बच्चों की कक्षा में उपस्थिति ज़्यादा थी तो कुछ की कम।

अब एक चुनौतीपूर्ण सवाल यह था कि जो स्थिति हमारे सामने है और जिसे हम ज़्यादा नहीं समझ पा रहे हैं, उसमें हमारी भूमिका क्या हो। *एकलव्य* के क्षेत्र-स्तरीय शिक्षकों द्वारा किए गए प्रयासों पर माता-पिता ने ध्यान दिया था और सराहा भी था, लेकिन क्या इन प्रयासों को उन बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं को सम्बोधित करने के लिए अनुकूलित किया जा सकता है जो किन्ही ख़ास प्रकार की चुनौतियों का सामना कर रहे हैं? जैसे-जैसे हमने अधिगम की विशिष्ट कठिनाइयों के बारे में पढ़ा, वैसे-वैसे हम इस बात को जान गए कि यद्यपि इस अक्षमता की पुष्टि 8 वर्ष की आयु के बाद ही होती है, जब मस्तिष्क पूरी तरह से परिपक्व हो जाता है, लेकिन यदि इस परिपक्वता से पहले शैक्षणिक हस्तक्षेप उपलब्ध हो तो वह हस्तक्षेप सबसे अधिक फलदायी होता है और तंत्रिका तंत्र में उपयुक्त अनुकूलन को मज़बूत किया जा सकता है। एक बार परिपक्वता पूरी हो जाए तो प्रगति असम्भव तो नहीं लेकिन हाँ, धीमी और अधिक कठिन हो सकती है।

इन चिन्तनों के बाद हमें एहसास हुआ कि हमें अपनी ऊर्जा और अपना ध्यान शुरुआती वर्षों – यानी कक्षा I, II और III पर केन्द्रित करना चाहिए। अपने हस्तक्षेप के प्रभाव सम्बन्धी अध्ययन के आँकड़ों को देखने से भी हमें यही लगा कि शुरुआती हस्तक्षेप का महत्त्व बहुत अधिक है। इसने इस सम्भावना की ओर इशारा किया कि जिन लोगों को अपने

शुरुआती वर्षों में *एकलव्य* की शैक्षिक मदद का लाभ मिला, वे उन लोगों की तुलना में बेहतर थे, जिनकी उम्र 8 साल से अधिक थी और जो पहले से ही तीसरी, चौथी और पाँचवीं कक्षा में थे। साक्षरता प्राप्त करने में प्रभावी प्रारम्भिक हस्तक्षेप की महत्त्वपूर्ण भूमिका को सफल परियोजनाओं द्वारा भी बल मिला, उदाहरण के लिए राजस्थान में प्रारम्भिक साक्षरता संवर्धन संगठन (ऑरगनाइज़ेशन फॉर अर्ली लिट्रेसी प्रमोशन) द्वारा संचालित परियोजना।

अपने हस्तक्षेप में परिवर्तन करना

अपनी सीख का परीक्षण करने के लिए, हमने तामिया के 10 प्राथमिक स्कूलों में एक प्रायोगिक कार्यक्रम आयोजित किया जिसमें :

- फील्ड के 10 प्रमुख व्यक्तियों ने हर रोज़ केवल कक्षा I और II के बच्चों के साथ काम किया।
- यह कार्य एक संरचित साक्षरता दृष्टिकोण के साथ, शब्दों के एक सेट से दूसरे सेट में व्यवस्थित रूप से आगे बढ़ रहा था तथा कविताओं, कहानियों, चित्र-पुस्तकों, पोस्टर, फ्लैशकार्ड, मौखिक चर्चा, ड्राइंग आदि से समृद्ध था।
- फील्ड के लोगों ने गतिविधियों की सहायता से ध्वनिशास्त्र सम्बन्धी जागरूकता पर ध्यान केन्द्रित किया जिससे कि ध्वन्यात्मक रूप से ध्वनियों को लिखित प्रतीकों से जोड़ने से पहले मौखिक-श्रव्य स्तर पर ध्वनियों को संसाधित किया जा सके। गतिविधियाँ इस प्रकार की थीं कि बच्चों को एक शब्द देकर उनसे कहा जाता कि वे वैसे ही तुक वाले अन्य शब्दों के बारे में सोचें (आता, जाता, खाता, गाता...), और शब्द के हरेक अक्षर के साथ ताली बजाते चलें (आ-ताली-ता-ताली)।
- वर्कशीट्स डिज़ाइन करके कक्षा में उनका उपयोग किया गया और इनके माध्यम से बच्चों का आकलन किया गया।

छह महीने तक यह सब करने के बाद हमें अच्छे परिणाम मिलने लगे, ख़ासकर उन स्थानों पर जहाँ फील्ड के शिक्षक रणनीति को समझकर कुछ संगतता के साथ काम करने में सक्षम थे। हमें उम्मीद थी कि यदि कक्षा I और II के बच्चों के इस समूह का परीक्षण बाद में, उनकी तीसरी कक्षा के अन्त में किया जाए तो तीसरी कक्षा के 2019 के एंड-लाइन स्कोर में बहुत सुधार होगा। किन्तु मार्च 2019 में परियोजना के समापन के कारण, आगे की ऐसी कार्यवाही करना सम्भव नहीं था।

इस अल्पकालिक प्रयोग से हम यह देख पाए कि ध्वन्यात्मक जागरूकता सम्बन्धी गतिविधियों में भाग लेना हमारी टीम के सदस्यों के लिए एक चुनौती थी। काफ़ी अनिश्चितता और झिझक रही। इससे हमें यह एहसास हुआ कि ध्वन्यात्मक जागरूकता जो सभी बच्चों के लिए पढ़ना सीखने का आधार है, जिसे सर्वप्रमुख स्थान देना चाहिए, जिसका महत्व हमने पहले ठीक से नहीं समझा था। इसके अलावा विशिष्ट अधिगम अशक्तता वाले बच्चों की मदद करने में इसका बहुत महत्त्व है। यह एक ऐसा महत्त्वपूर्ण मुद्दा था जिसे सीखना और अपने प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा सामग्री विकास कार्यशालाओं में साझा करना ज़रूरी था।

सभी बच्चों को सीखने में मदद करने के लिए मध्यप्रदेश के अन्य ब्लॉकों में अपने सभी प्रयासों में हम तामिया के प्रयोग से मिली सीखों को ध्यान में रखते हैं। हमने अपनी टीम के सदस्यों को, सीखने की विशिष्ट ज़रूरतों के मुद्दों की ओर प्रवृत्त करना शुरू कर दिया है। अब उन्होंने कम उपस्थिति और पारिवारिक पृष्ठभूमि को बच्चों की कठिनाईयों के लिए उत्तरदायी ठहराने की पुरानी रूपरेखा के परे जाकर उन बच्चों के बारे में अपने अवलोकन पर चर्चाएँ शुरू कर दी हैं जिन्हें वे कक्षा में संघर्ष करते हुए और पिछड़ा हुआ देखते हैं। उन्होंने केस स्टडी बनाना और विशिष्ट बच्चों के साथ आगे बढ़ने के तरीक़े तलाशने शुरू कर दिए हैं। उदाहरण के लिए टीम के एक सदस्य ने बताया कि एक-दूसरे से सीखने की प्रक्रिया में बच्चे के दोस्तों को शामिल करने से सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। अब सरकारी स्कूल के शिक्षकों और अपनी फील्ड की टीमों के साथ हमारे काम में ध्वन्यात्मक जागरूकता और संरचित साक्षरता वाले सत्र महत्त्वपूर्ण हो गए हैं। हमें उम्मीद है कि यह प्रयास सफल होंगे और हर बच्चा वास्तव में सीख सकेगा।

** बच्चों की पहचान छिपाने के लिए नाम बदल दिए गए हैं।*

रश्मि पालीवाल ने 1983 से 2019 तक होशंगाबाद में एकलव्य के साथ काम किया और स्कूल के सामाजिक विज्ञान और शिक्षक-शिक्षा के पाठ्यचर्या विकास में योगदान दिया है। उन्होंने एकलव्य के प्रकाशन सम्बन्धी प्रयासों के साथ-साथ ग्रामीण और आदिवासी समुदायों में प्राथमिक शिक्षा को मज़बूत करने की परियोजनाओं में भी सहायता की है। उनसे paliwal_rashmi@yahoo.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

पूर्व-प्राथमिक कक्षा में भाषा -शिक्षण | पढ़ना और लिखना

रोशनी देवांगन

भाषा हमारे विचारों व भावनाओं को सम्प्रेषित करने, सामाजिक सम्पर्कों एवं सम्बन्धों को स्थापित करने, उन्हें बनाए रखने तथा समाज और संस्कृति को समझने में सहायक होती है। शुरू में बच्चे इन सभी के लिए भाषा का प्रयोग नहीं कर पाते हैं, लेकिन जैसे-जैसे वे बड़े होते जाते हैं उनके भाषाई कौशलों में सुधार आता जाता है और फिर बच्चे उपर्युक्त कार्यों के लिए भाषा का प्रयोग करने लगते हैं।

शाला-पूर्व वर्षों की लगभग सभी क्रियाओं में बातचीत शामिल होती है। खेलते समय भी बच्चे अपने द्वारा की जाने वाली क्रियाओं के बारे में अपने आप बोलते हुए टिप्पणी करते रहते हैं। शाला-पूर्व बच्चे अपने दिन-प्रतिदिन की क्रियाओं का ब्योरा देते हैं और अपने परिवार व खिलौनों के बारे में भी बातचीत करते हैं। इसी बातचीत के द्वारा नए लोगों के सम्पर्क में आते हैं, उनकी अन्य लोगों से जान-पहचान बढ़ती है। सक्रिय रूप से बोलने व सुनने के दौरान ही बच्चे भाषा का उपयोग करना सीखते हैं। जिन बच्चों को बोलने के लिए प्रेरित किया जाता है, उनकी बातचीत को ध्यान से सुना जाता है वे बच्चे बेहतर भाषायी योग्यताएँ प्रदर्शित करते हैं। बच्चों के भाषाई विकास को प्रोत्साहित करने के लिए यह आवश्यक है कि हमारी बातचीत बच्चों के अनुरूप हो। उन्हें हमारे साथ बोलने में मज़ा आए तभी वे भाषा सीखने में अभिरूचि दर्शाएँगे और उनका शब्द-भण्डार भी बढ़ेगा।

इन्हीं कुछ सैद्धान्तिक बातों को ध्यान में रखते हुए शाला-पूर्व की कक्षा में बच्चों के पढ़ने-लिखने के कौशल-विकास के लिए कार्य किया गया। भाषा सीखने के विभिन्न पहलुओं पर कक्षा में ध्यान दिया गया जिससे इस कक्षा-स्तर के बच्चों में रुचि, उत्साह, शब्द भण्डार-विकास तथा पढ़ने–लिखने के कौशलों में अप्रत्याशित सफलता देखने को मिली है। आइए जानते हैं कि भाषा-शिक्षण के अन्तर्गत कक्षा में किस प्रकार विभिन्न काम किए गए।

भाषा-शिक्षण

बच्चे जब सर्वप्रथम शाला में प्रवेश करते हैं तब उनके पास अपनी एक समृद्ध भाषा होती है। इस आयु वर्ग के बच्चे अपनी बातों को अपनी भाषा में बेहतर ढंग से व्यक्त कर लेते हैं। बच्चे अपनी मातृभाषा को बख़ूबी समझते हैं व अभिव्यक्त कर लेते हैं। कह सकते हैं कि वे अपने घर की भाषा पर पकड़ रखते हैं। अब बच्चों की भाषा को महत्त्व देते हुए, बच्चे को शाला की भाषा सीखने के लिए प्रेरित करना शिक्षक की ज़िम्मेदारी होती है।

कक्षा में इस पर बहुत महत्त्व दिया जाता है कि बच्चे अपनी बातों को अपनी भाषा में रखें। उनकी भाषा, उनके विचारों को बहुत ध्यान, सम्मानपूर्वक व धैर्य से सुना जाता है। इसी दौरान कोशिश होती है कि हम (शिक्षक) धीरे–धीरे उनकी भाषा, विचार को शाला की औपचारिक भाषा में बदलकर उनके सामने रखें। तब बच्चे धीरे–धीरे कक्षा व स्कूल से जुड़ने लगते हैं। विभिन्न कविता, कहानी सुनने–सुनाने के दौरान तथा अन्य गतिविधियों के दौरान भी बच्चों को बोलने–सुनने का मौका दिया जाता है।

पढ़ना सीखना

इस तरह सत्र-प्रारम्भ से लगभग 3 माह तक मौखिक बातचीत, कविता, कहानी पर ख़ूब अभ्यास किए गए। इसके बाद धीरे–धीरे पढ़ने–लिखने के कौशलों के विकास पर ध्यान दिया जाने लगा। इस प्रक्रिया की शुरुआत सबसे पहले एक कविता से हुई। बच्चे कविता से परिचित थे। कविता थी –

मछली जल की रानी है,

जीवन उसका पानी है।

हाथ लगाओ डर जाती है,

बाहर निकालो मर जाती है।

इस कविता को बच्चे, समुदाय में माता-पिता, मित्र आदि से, विद्यालय आने से पहले ही लगभग सीख चुके थे।

इस कविता को बच्चों के सामने हाव-भाव, लय व अभिनय के साथ सुनाया गया। साथ-ही-साथ बच्चे भी उत्साहपूर्वक दोहराते गए। इससे बच्चों को यह कविता अभिनय सहित याद हो गई। अब बच्चे स्वयं से ही कविता को हाव-भाव के साथ गा रहे थे। दो–तीन दिन बाद इस कविता को चार्ट पेपर पर लिखकर कक्षा में डिस्प्ले कर दिया गया जिससे बच्चे रोज़ ही उस कविता को देख सकें। कई दिनों तक शिक्षक द्वारा इस कविता के हर शब्द पर उँगली रखकर कविता को पढ़ाया गया। शब्दों पर उँगली रखकर बच्चों से बार-बार पूछा जाने लगा,

उन्हें शब्द पढ़ने को प्रेरित किया जाने लगा। जिससे बच्चे उन शब्दों को प्रिन्ट के रूप में पहचान सकें। पहले चित्रित किए जा सकने वाले शब्दों की पहचान की गई, जैसे– मछली, रानी, पानी, हाथ आदि। धीरे-धीरे बच्चों ने उन शब्दों को पहचानना शुरू किया। फिर उन शब्दों को भी पहचानने लगे जिनके चित्र नहीं बन सकते, जैसे- जाती है, उसका, बाहर आदि।

इसके पश्चात एक और कविता ली गई। इस कविता के लिए भी वही पद्धति अपनाई गई जो पहली कविता के लिए अपनाई थी। इसे भी डिस्प्ले किया गया ताकि बच्चे इसे पढ़कर इसके शब्दों को प्रिन्ट के रूप में पहचान सकें। धीरे-धीरे कुछ विशेष शब्दों को बच्चे पहचानने भी लगे। उसके पश्चात दोनों कविता के कुछ चुनिन्दा शब्दों को अलग से एक चार्ट पेपर पर लिखकर डिस्प्ले कर दिया, जिसे बच्चे पढ़ते रहते थे और शब्दों को पहचान भी गए थे।

आलू कचालू बेटा कहाँ गए थे,

सब्जी की टोकरी में सो रहे थे।

बैंगन ने लात मारी रो रहे थे,

मम्मी ने प्यार किया हँस रहे थे।

अब इन शब्दों में से ऐसे शब्द, जिनके चित्र बन सकते थे उनका फ्लैश-कार्ड बनाया गया। इन कार्डों को रोज़ एक बार पढ़ा जाता था। पढ़ने के लिए एक खेल तैयार किया गया था जिसमें सभी फ्लैश-कार्ड टीचर के हाथ में होते थे। टीचर फ्लैश-कार्ड के नाम वाले साइड को बच्चों के सामने रखती थी। उसे देखकर बच्चों को बताना होता था कि कार्ड में क्या लिखा है। जो भी बच्चा पहले बताता था, कुछ समय के लिए कार्ड उसका हो जाता था। ऐसा करते समय यह भी ध्यान रखा जाता था कि जो बच्चे कक्षा-स्तर से पीछे हैं उनके लिए सहजता से पहचाने जा सकने वाले कार्ड दिखाए जाएँ। और बाक़ी बच्चों से कहा जाता था कि इस कार्ड को सिर्फ़ वही बच्चे बताएँगे, ताकि उन बच्चों को भी कार्ड मिल सके।

कार्डों को पढ़ने की प्रक्रिया सतत चलती रही और बच्चे सभी कार्डों को पढ़ना भी सीख गए। कार्ड पढ़ने के बाद कार्ड के शब्दों को बच्चे बोर्ड पर लिखते थे। इसी प्रक्रिया से बच्चे लिखना भी सीखने लगे। इसी क्रम को आगे बढ़ाते हुए छोटी–छोटी कविताओं व कहानियों के द्वारा चुनिन्दा शब्दों को अलग करते हुए शब्द-पहचान की प्रक्रिया चलती रही। अब हमारे पास ऐसे बहुत सारे शब्द हो गए थे जिन्हें बच्चे पहचान चुके थे।

वर्णमाला से परिचय कराना

अब एक नई चुनौती आ रही थी कि बच्चे केवल पहले पढ़े गए शब्दों को ही पढ़ पा रहे थे, अपरिचित शब्दों को पढ़ने में बच्चे सक्षम नहीं थे। इस चुनौती को दूर करने के लिए हमने समग्र भाषा-शिक्षण पद्धति के साथ–साथ वर्ण-पहचान पर भी काम शुरू किया। जो शब्द बच्चे सीख चुके थे उन्हीं शब्दों को तोड़कर जैसे – मछली से – म छ ली, गमला से – ग म ला, अनार से – अ ना र, घर से – घ र आदि वर्णों की पहचान कराने लगे। शब्दों से ही वर्णमाला पहचान की प्रक्रिया शुरू की गई। वर्णमाला पहचान की प्रक्रिया में बच्चे उत्साह से भाग लेने लगे व शीघ्रता से वर्णमाला की पहचान करने लगे। कुछ ही दिनों में बच्चे लगभग 30-35 वर्णों को पहचानने लगे व नए शब्दों को हिज्जे करके व अनुमान लगाकर पढ़ने का प्रयास करने लगे।

मात्राओं से परिचय कराना

इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए एक चुनौती आई कि बच्चे वर्ण पहचान कर शब्द पढ़ पा रहे थे, परन्तु मात्रा वाले शब्दों को पढ़ने में परेशानी हो रही थी। कुछ शब्दों को अनुमान लगाकर पढ़ पा रहे थे पर कुछ शब्दों को नहीं पढ़ पा रहे थे, क्योंकि मात्राओं की पहचान नहीं हो पाई थी।

मात्राओं की पहचान के लिए विभिन्न रोचक व मज़ेदार गतिविधियाँ करवाईं। जैसे शुरू में *आ* की मात्रा बताने के लिए फेस एक्स्प्रेशन बहुत कारगर साबित हुआ। कुछ शब्दों जैसे मन, माना, मना को बोर्ड में लिखकर उच्चारणों पर चेहरे-मुँह की बनने वाले आकृति को बच्चे ध्यान से देखने लगे व स्वयं के उच्चारण के दौरान वैसे ही भाव बनाने का अभ्यास करते थे। वे बहुत बारीकी से जान गए कि *आ* की मात्रा को बोलते व सुनते समय चेहरे का भाव कैसा बनता है। कुछ ऐसे छोटे-छोटे शब्द लिए गए जिससे बच्चे परिचित थे जैसे- गमल व गमला बोलने से मात्रा व बिना मात्रा वाले शब्दों को समझने लगे थे। इस प्रकार अभ्यास करते हुए बच्चे *आ* की मात्रा वाले शब्दों को पढ़ना सीख गए। इसके अलावा इ, ई, उ, ऊ, ए तथा ओ की मात्रा के लिए बच्चों के नाम, उनके पालकों तथा शिक्षकों के नामों का सहारा लिया गया। जैसे खिलेश्वरी, कविता, परिधि, चित्रांशी, अनिल, विवेक, हेतल, केमन, सोहेल, रोशनी आदि। प्रायः सभी मात्राओं के लिए इन नामों में वर्ण व मात्रा मिल गए। नामों के द्वारा बच्चे बहुत जल्दी उच्चारणों से सम्बन्ध बना लेते थे, उन उच्चारणों से सम्बन्धित अन्य शब्द भी वे सोचकर बता पाते थे। कुछ शब्दों जैसे दादा के बाद दादी, चाचा के बाद चाची लिखने पर बच्चे बनावट के आधार पर शब्दों के उच्चारण का अनुमान लगाकर स्वयं पढ़ लेते थे। मात्राओं की बारंबारता के आधार पर कुछ कहानी भी बनाई गईं, जिसमें उन मात्रा की पुनरावृत्ति होती थी।

जैसे– *मोना और रोमा दो बहनें थीं। एक दिन दोनों डोड़की बाज़ार गईं। बाज़ार में दोनों समोसा खरीदीं। समोसा को झोले में रखा।*

इसी प्रकार उ की मात्रा के लिए *लालू-पीलू* की कहानी को सुनाया गया। इन कहानियों को चार्ट में लिखकर कक्षा में लगा दिया गया। जिसे बच्चे दिन भर देखते-पढ़ते रहते।

इस प्रकार से पूर्व-प्राथमिक कक्षा-स्तर के बच्चों को खेल-खेल व गतिविधियों के माध्यम से बहुत ही मज़ेदार ढंग से हिन्दी भाषा पढ़ने व लिखने के कौशलों का विकास करने का प्रयास किया गया। उम्मीद है सत्र के अन्त तक 10 बच्चों में से लगभग 9 बच्चे हिन्दी भाषा के शब्दों/वाक्यों को पढ़ना व लिखना सीख जाएँगे। इस दौरान अनेक चुनौतियाँ भी आईं जिसे हमने शिक्षकों के साथ बातचीत करके व बच्चों से राय लेकर दूर भी किया। सीखने के प्रति बच्चों के उत्साह व रुचि के सामने हमें चुनौतियों का क़द काफ़ी बौना-सा लगा।

रोशनी देवांगन ने हिन्दी साहित्य से एमए तथा प्रारम्भिक बाल्यावस्था देखभाल एवं शिक्षा (ईसीसीई)में डिप्लोमा किया है। वे 2017 से अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़ में पूर्व-प्राथमिक कक्षाओं में शिक्षण कर रही हैं। उन्हें छोटे बच्चों के साथ रहना, उनसे बातचीत करना एवं उनके साथ खेलना बेहद पसन्द है। अपने ख़ाली वक़्त में वे कहानियों की एवं शिक्षण सम्बन्धी क़िताबें पढ़ना और संगीत सुनना पसन्द करती हैं। उनसे Roshni.dewangan@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

अक्सर बच्चे ऐसी गतिविधियाँ करते हैं जो बड़ों को निरर्थक लगती हैं। आमतौर बड़े इस तरह की टिप्पणी करते हैं कि, 'ओह, वह तो ख़्याली पुलाव पका रहा है', 'खेल रहा है' या 'बस, समय बर्बाद कर रहा है।' हमें लग सकता है बच्चा उपर्युक्त स्थितियों में भला क्या सीख रहा होगा? जब हम सीखने के बारे में बात करते हैं तो हमारे मन में ख़ुद-ब-ख़ुद ऐसे बच्चे का चित्र बन जाता है जो किताबों के साथ गम्भीरता से बैठा हुआ हो, गृहकार्य कर रहा हो, किसी वयस्क की बात सुन रहा हो या याद किए हुए किसी अंश को दोहरा रहा हो। लेकिन कभी-कभी ख़ुद को यह याद दिलाना ज़रूरी है कि सीखना एक सतत प्रक्रिया है, न कि केवल एक परिणाम।

- रितिका गुप्ता, 'यह समझना कि बच्चे कब और कैसे सीखते हैं', पेज 21

प्रारम्भिक भाषा का शिक्षण और साक्षरता | प्रासंगिकता का प्रश्न

शैलजा मेनन

भारतीय कक्षाओं में एक पेचीदा समस्या यह है कि साल-दर-साल जिज्ञासु, सतर्क और सामाजिक रूप से सक्षम बच्चे हमारी कक्षाओं में आते हैं और पता नहीं हम उन्हें किस तरह से पढ़ाते हैं कि उनमें से कई प्रतिशत बच्चे स्कूली शिक्षा के शुरुआती तीन वर्षों के भीतर ही सीखने में रुचि खो देते हैं। तो फिर इसमें आश्चर्य की क्या बात है कि हमारे देश में पिछले कई सालों में बड़े पैमाने पर जितने भी आकलन किए गए, उनसे यह पता चलता है कि कई बच्चे बुनियादी स्तर पर पढ़ या लिख भी नहीं सकते हैं, भले ही वे ऊँची कक्षाओं में चले गए हों? प्रख्यात मनोभाषाविज्ञानी, जिम जी(Jim Gee), ने इस विसंगति की ओर ध्यान दिलाया है जो अमरीकी कक्षाओं में भी नियमित रूप से होती है : जो बच्चे अँग्रेज़ी वर्णमाला के छब्बीस वर्णों का (और उन्हें पढ़ने के लिए लागू करने के नियमों का) पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करने के लिए संघर्ष करते हुए सालों बिताते हैं, वही बच्चे उस समय बड़े चमत्कारी रूप से सैकड़ों अमूर्त प्रतीकों और नियमों को कुछ ही हफ़्तों में सीख लेते हैं जब आप उन्हें खेलने के लिए वीडियो गेम देते हैं!

इस बात से मुझे 9 साल की गीता[i] की याद आती है जिससे हम भारतीय भाषाओं के साक्षरता अनुसन्धान (Literacy Research in Indian Languages (LiRIL) study)[ii] का संचालन करते समय मिले थे। गीता वरली जनजाति की है और महाराष्ट्र के एक आदिवासी इलाके में रहती है। जब हम उससे मिले, उस समय वह गाँव के स्कूल में चौथी कक्षा में पढ़ती थी और बुनियादी मराठी भाषा को समझ और बोल सकती थी, जो उसके स्कूल की भाषा भी थी। होनहार, सतर्क और सक्षम गीता ने अपने घर और दो छोटे भाई-बहनों की ज़िम्मेदारी सम्भाल ली थी क्योंकि उसके माता-पिता काम पर जाते थे। वह जिज्ञासु और कुतूहली थी, शोधकर्ता से कई सवाल पूछ रही थी और बहुत सारी चीज़ें समझा रही थी - कौन कहाँ रहता है, कहीं जाने के लिए कौन-सा रास्ता सबसे छोटा है, भोजन न मिले तो कौन-से फल और जड़ें खाने के लिए सुरक्षित हैं, पानी को छानकर कैसे पीने के लायक बनाना चाहिए आदि! वह सवालों और सूचनाओं का भण्डार थी, एक उत्सुक प्रेक्षक, कड़ी मेहनत करने वाली, अपनी माँ को खाना बनाने, साफ़-सफ़ाई करने, कपड़े धोने आदि में मदद करने वाली लड़की। वह आलसी नहीं थी। विरक्त नहीं थी। मन्दबुद्धि नहीं थी। फिर भी साढ़े तीन साल की औपचारिक पढ़ाई के बाद भी गीता अच्छी तरह से पढ़ या लिख नहीं सकती थी।

मैं देश भर में विभिन्न कक्षाओं के साथ काम करती हूँ और अपने काम के दौरान गीता जैसी कई लड़कियों-लड़कों से मिलती हूँ - ऐसा क्यों हो रहा है?

हम क्या ग़लत कर रहे हैं?

यह स्पष्ट है कि हम उस प्राकृतिक बुद्धिमत्ता, जिज्ञासा और जुड़ाव से अलग हो रहे हैं, जिसे लेकर छोटे बच्चे हमारी कक्षाओं में प्रवेश करते हैं और साथ ही अधिगम को उनके लिए बहुत प्रासंगिक या सुलभ नहीं बना रहे हैं। गीता जैसे बच्चों को अपने सामूहिक ध्यान के केन्द्र में रखते हुए मैं इस लेख में तीन ऐसी ठोस चीज़ों का प्रस्ताव रख रही हूँ जिन्हें हम प्रारम्भिक भाषा कक्षाओं में अलग तरीक़े से कर सकते हैं :

1. एक बहुभाषी वातावरण बनाएँ
2. बच्चों के भाषा सीखने के शुरुआती प्रयासों को प्रोत्साहित करें
3. भाषा की कक्षा में अर्थ-निर्माण को सर्वप्रमुख मानें

एक बहुभाषी वातावरण बनाएँ

छोटे बच्चे भाषा की कक्षा के लिए अपने साथ एक अद्भुत संसाधन लेकर स्कूल में आते हैं, जो है उनके घर की भाषा। यह वही भाषा है जिसमें वे स्कूल आने से पहले सोचना, तर्क करना, खोज करना, बहस करना, वर्णन करना और बातचीत आदि करते रहे हैं। यह उनके रिश्तों की भाषा है, उनकी भावनाओं की भाषा है। वे इस भाषा के मूल व्याकरण को जानते हैं और इसमें उनका शब्द-भण्डार भी काफ़ी विकसित होता है।

लेकिन फिर भी, कई मामलों में ऐसा होता है कि जब वे स्कूल आते हैं तो हम उनसे कहते हैं कि अपनी चप्पलों के साथ-साथ अपने घर की भाषा को भी कक्षा के बाहर छोड़ आएँ! आदर्श रूप से देखा जाए तो बच्चे की मातृभाषा ही उसकी शिक्षा का माध्यम होनी चाहिए (Cummins, 2001)। इससे उसे न केवल यह समझने में मदद मिलेगी कि क्या पढ़ाया जा रहा है बल्कि अपने विचारों को सम्प्रेषित करने और अपनी सांस्कृतिक पहचान और विरासत पर गर्व करने का मौका भी मिलेगा। मातृभाषा में पढ़ाने का मतलब यह नहीं है कि बच्चों को अपनी मातृभाषा तक ही सीमित रखा जाए! बच्चे के घर की भाषा को स्वीकार करते हुए भी उसे अन्य भाषाओं जैसे स्कूल की भाषा, अँग्रेज़ी और परिवेश की अन्य प्रासंगिक

भाषाओं से भी परिचित कराया जा सकता है।

लेकिन कई कारणों से पूरे भारत के अनेक स्कूलों में बच्चों को उनकी मातृभाषा में नहीं पढ़ाया जाता है। झींगरन (2009) ने अनुमान लगाया है कि भारतीय स्कूलों में चार में से एक बच्चे को घर और स्कूल की भाषाओं के बीच मेल न होने के कारण सीखने की, सामान्य से लेकर गम्भीर समस्या का सामना करना पड़ता है। शिक्षा के माध्यम के बारे में निर्णय लेने का अधिकार हर शिक्षक के हाथ में नहीं होता और एक ही कक्षा के भीतर कई मातृभाषाओं का उपयोग किया जाता है। जिस स्कूल में विद्यार्थी कई ऐसी भाषाएँ बोलते हैं जो शिक्षा के आधिकारिक माध्यम से अलग हैं, वहाँ पर भी ऐसे सरल तरीक़े अपनाए जा सकते हैं जिनसे वे ख़ुद को सहज महसूस करें। कुछ तरीक़े यहाँ सूचीबद्ध किए गए हैं।[iii]

कक्षा में बहुभाषी प्रिंट सामग्री का उपयोग करें

यह सुनिश्चित करें कि कक्षा में कई भाषाओं में प्रिंट सामग्री प्रदर्शित की गई है। इस सामग्री में कक्षा के विभिन्न हिस्सों के नाम के लेबल, क़िताबों, कहानियों, कविताओं आदि को शामिल किया जा सकता है। इससे बच्चों को बेहतर तरीक़े से समझने में तो मदद मिलेगी ही, साथ ही उन्हें यह भी महसूस होगा कि उनकी भाषा को कक्षा में स्वीकार किया गया है और उसे महत्त्व दिया गया है। यदि स्थानीय भाषा की कोई लिपि नहीं है, तो घर की भाषा में उपलब्ध कहानियों, गीतों और कविताओं को शिक्षक के सामने बोलकर व्यक्त किया जा सकता है जिसे वे क्षेत्रीय भाषा (शिक्षण का माध्यम) की लिपि में लिखकर कक्षा में प्रदर्शित कर सकते हैं।

घर की भाषा में बोलने और अभिव्यक्ति को प्रोत्साहित करें

यदि बच्चों को अपने घर की भाषाओं में बोलने की अनुमति दी जाए तो उनका जुड़ाव बढ़ेगा और वे कहीं अधिक बातें करेंगे। यदि शिक्षक बच्चे के घर की भाषा समझते हैं तो वे उस भाषा में बच्चे को जवाब दे सकते हैं; यदि नहीं, तो किसी भाषा मध्यस्थ की पहचान की जा सकती है (जैसे कोई बड़ा विद्यार्थी, समुदाय का कोई सदस्य या सहपाठी) जो शिक्षक को बच्चे के साथ बातचीत करने में मदद कर सके।

बच्चों को बोलने और लिखने में भाषाओं का मिश्रण करने की अनुमति दें

इससे उन्हें अपनी जानी-पहचानी शब्दावली और व्याकरण का उपयोग करते हुए अपनी सोच को पूरी तरह से व्यक्त करने में मदद मिलेगी, और साथ में वे नई भाषाओं के कुछ शब्दों या वाक्य-रचना को मिलाने के प्रयोग भी कर सकते हैं। गार्सिया और वेई (Garcia & Wei, 2014) ने तर्क दिया है कि अधिकांश द्विभाषी और बहुभाषी लोग भाषाओं का मिश्रण करते हैं और धाराप्रवाह रूप से भाषा का उपयोग करते हैं; इसी तरीक़े की सहायता से छोटे बच्चों को नई भाषा सिखाई जा सकती है।

अन्त में दिए चित्र में दिखाया गया है कि कैसे चौथी कक्षा की एक बच्ची ने अपनी मातृभाषा मराठी के ज्ञान का उपयोग नई स्कूली भाषा यानी अँग्रेज़ी सीखने के लिए किया।[iv]

बच्चों के पढ़ने और लिखने के शुरुआती प्रयासों को प्रोत्साहित करें [v]

जब गीता जैसे छोटे बच्चे स्कूल आते हैं तो उन्हें अपने घर की भाषाओं से स्कूल की भाषाओं में तालमेल बनाने के अलावा पढ़ना और लिखना भी सीखना होता है। कई स्कूल छोटे बच्चों को पहले अक्षर (वर्णमाला) पढ़ना-लिखना सिखाते हैं, फिर शब्द, फिर वाक्य और अन्त में अनुच्छेद पढ़ना सिखाते हैं। सामान्यतः मौखिक गतिविधियाँ, कविता वाचन तक सीमित होती हैं। स्कूलों में बच्चों को भाषा से परिचित कराने के यह तरीक़े अनुत्पादक हैं क्योंकि वे बोलने, सुनने, सोचने और अभिव्यक्त करने की उन क्षमताओं का उपयोग नहीं करते जिन्हें बच्चे अपने साथ कक्षा में लाते हैं।

तो फिर बच्चों को हम कौन-से अलग तरीक़े से भाषा सिखा सकते हैं?

जो मायने रखता है उससे जोड़ना

कई दशकों का संचित ज्ञान हमें बताता है कि बच्चे ऐसे सन्दर्भों में अवलोकन, प्रयोग और प्रयत्न-त्रुटि के माध्यम से भाषा सीखते हैं जो उन्हें सार्थक और दिलचस्प लगती हैं। इसलिए वे कुछ ही हफ़्तों में वीडियो गेम में महारत हासिल कर लेते हैं, लेकिन सालों तक वर्णमाला के अक्षर नहीं सीख पाते! भाषा की कक्षा में हमें बच्चों को उन चीज़ों के साथ जोड़ना चाहिए जो उनके लिए मायने रखती हैं। शिक्षक ऐसा कैसे कर सकते हैं?

मौखिक अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करें

साझा-समय के दौरान बच्चों से कहा जा सकता है वे कुछ ऐसा साझा करें जिसमें उन्हें दिलचस्पी हो। उनके सामने कहानी पढ़ी या सुनाई जा सकती है और उसके बाद उस पर चर्चा की जा सकती है। उन्हें किसी फील्ड ट्रिप पर ले जाया जा सकता है, जिसके बाद उस पर चर्चा हो सकती है या समुदाय के किसी व्यक्ति को बच्चों से बात करने के लिए कक्षा में आमंत्रित किया जा सकता है। इन सभी अभ्यासों का लक्ष्य यह होना चाहिए कि बच्चे सोचें, संवाद करें, एक-दूसरे को सुनें और ख़ुद को अभिव्यक्त करें। जैसा कि पहले बताया गया है, बच्चों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए कि वे अपनी घर की भाषाओं में बोलें या भाषाओं को मिलाकर बोलें। इससे संज्ञानात्मक क्षमता, शब्दावली विकास और नई भाषाओं के साथ-साथ उनके आस-पास की दुनिया के बारे में ज्ञान बढ़ाने में भी मदद मिलेगी। बच्चों से यह पूछना चाहिए कि वे चीज़ों के बारे में कैसा महसूस करते हैं – फिर चाहे वह कोई पुस्तक हो,

कहानी हो या कोई अनुभव – इससे शिक्षक को उन बिन्दुओं को समझने में मदद मिलेगी जिनके चलते जुड़ाव नहीं बन पा रहा है और साथ ही बच्चों को अपने विचार और भावनाओं दोनों को व्यक्त करने का अवसर मिलेगा।

पढ़ने और लिखने के साथ प्रयोग करने के अवसर प्रदान करें

यदि बच्चों को प्रतिदिन चित्र-पुस्तकों के पन्ने पलटने दिए जाएँ तो भले ही वे सभी अक्षर या शब्द न पढ़ पाते हों, फिर भी वे पृष्ठ पलटेंगे, चित्र देखेंगे, एक-दूसरे के साथ चर्चा करेंगे (यदि यह गतिविधि जोड़े में की जाए तो) और अर्थ निर्माण का प्रयास करेंगे। कुछ बच्चे पुस्तक 'पढ़ने का नाटक' कर सकते हैं या पुस्तक में कुछ शब्द पहचानने में सक्षम भी हो सकते हैं। समय के साथ, धीरे-धीरे उनका पठन अधिक सटीक होता जाएगा।

इसी तरह अगर कक्षा में बच्चों को उन विषयों पर लिखने या चित्र बनाने के मौके दिए जाएँ जिन पर कक्षा में चर्चा की जाती है तो वे लेखन के साथ प्रयोग करना शुरू कर देंगे। वे कोई चित्र बना सकते हैं या कुछ ऐसे अक्षर या शब्द लिख सकते हैं जिन्हें वे जानते हैं और यदि आप उनसे पूछें कि उन्होंने क्या लिखा है तो शायद वे आपके सामने उसकी विस्तृत और सुन्दर-सी व्याख्या प्रस्तुत कर दें! इस बिन्दु पर, उनकी वर्तनी को सुधारने के बजाय, उन्होंने जो कहा है उसे उनके लेखन के नीचे लिखा जा सकता है और उसे पुनः पढ़कर उन्हें सुनाया जा सकता है। पूरी कक्षा में बच्चों के लेखन को प्रदर्शित करें और उन्हें एक-दूसरे के काम को साझा करने और उसकी प्रशंसा करने का समय दें।

कक्षा को प्रिंट से समृद्ध बनाएँ

एक प्रिंट-समृद्ध कक्षा वह है जो सार्थक प्रिंट से भरपूर हो; बच्चों के लिए हो और उन्हीं के द्वारा रचित हो।[vi] बच्चों ने लेखन या ड्राइंग के जो प्रयास किए हैं, उन्हें भी कक्षा में रखा जा सकता है और कक्षा के विभिन्न स्थानों को कई भाषाओं में लेबल किया जा सकता है। शब्द, कविताएँ और अन्य जानकारी जो बच्चों के लिए रुचिकर हो या शिक्षण के लिए प्रासंगिक हो, उन सभी को प्रदर्शित करके पाठ और गतिविधियों के दौरान उनका उपयोग किया जा सकता है।

अर्थ-निर्माण : भाषा की कक्षा का हृदय

इस पूरे लेख में इस बात पर ज़ोर दिया गया है कि बच्चे स्वाभाविक अर्थ-निर्माता हैं। जब हम उन्हें इस तरह से सिखाते हैं कि उन्हें अर्थ निर्माण में मदद मिले तो वे स्वाभाविक रूप से और आसानी से सीखते हैं। जब हम उबाऊ या असम्बद्ध तरीके से सिखाते हैं तो बच्चे या तो रुचि खो बैठते हैं या उन चीज़ों को सीखने के लिए काफ़ी संघर्ष करते हैं जो अन्यथा काफ़ी जल्दी सीखे जा सकते थे।

पिछले भागों में मैंने इस बात पर चर्चा की है कि बच्चों को अपने घर की भाषाओं में ख़ुद को व्यक्त करने, विचारों पर चर्चा करने और शुरुआती पढ़ने व लिखने में स्वतंत्र रूप से प्रयोग करने देने का कितना महत्त्व है। इन सभी से उन्हें भाषा सीखना सार्थक लगेगा। इसके अतिरिक्त बच्चों के साथ बातचीत करते समय अर्थ-निर्माण को केन्द्र में रखने के लिए हम कुछ और चीज़ें भी कर सकते हैं जैसे कि :

सहजता से विचार व्यक्त करना

जब बच्चे भाषा सीखने की प्रक्रिया के साथ सहज होने की कोशिश कर रहे होते हैं, उस समय हमारा ध्यान उन्हें अर्थ-निर्माण करने में मदद देना होना चाहिए। इसलिए जब वे जवाब दें तो पाठ्यपुस्तक की भाषा का ज्यों-का-त्यों उपयोग करना आवश्यक नहीं। उदाहरण के लिए छोटी बच्ची गीता, जिसका परिचय लेख की शुरुआत में करवाया गया था, बालभारती पाठ्यपुस्तक (महाराष्ट्र) से पढ़ी जा रही कविता पाऊस (वर्षा) सुन रही थी। कविता को सस्वर पढ़ने के बाद शिक्षक ने इसके बारे में सवाल पूछने शुरू किए। गीता स्वयं पाठ नहीं पढ़ सकती थी, लेकिन वह कक्षा की गतिविधि में ध्यान से भाग ले रही थी और कविता सुनकर अर्थ-निर्माण की कोशिश कर रही थी। हमने देखा कि गीता ने कई बार वार्तालाप में भाग लेने का प्रयास किया लेकिन शिक्षक ने उसे अनदेखा कर दिया क्योंकि वह पाठ की भाषा का प्रयोग नहीं कर रही थी। उदाहरण [vii] के लिए :

शिक्षक : जब बारिश होती है तो आकाश में क्या होता है?

गीता : (बड़े जोश के साथ सबसे पहले उत्तर देती है): चकन चमकता (चमकती रेखाएँ)

अन्य बच्चे : वीज (बिजली के लिए कविता में दिया गया शब्द)

शिक्षक : सही उत्तर, वीज!

गीता ख़ुद को रचनात्मक और सौन्दर्यपूर्ण रूप से व्यक्त कर रही थी और बताना चाह रही थी कि वह समझ गई है कि किस बात पर चर्चा की जा रही है, लेकिन गीता के पास मराठी बोलने वाले स्थानीय बच्चों की तरह के शब्द शायद नहीं थे। बार-बार शिक्षक (और अपने सहपाठियों) द्वारा नज़रअन्दाज़ किए जाने से गीता जैसे बच्चों को लग सकता है कि उनकी सोच ग़लत है, उपयुक्त नहीं है और फिर समय बीतने के साथ-साथ वे स्कूल की शिक्षा के साथ एक अलगाव सा महसूस करने लगते हैं।

बच्चों को उन शब्दों को पढ़ने और लिखने देना जो उनके लिए सार्थक हैं

हम छोटे बच्चों को एक विशेष क्रम में अक्षर पढ़ना और लिखना सिखाने पर इतना अधिक ध्यान देते हैं कि हम उन्हें उनके बोलचाल के शब्दों से दूर कर देते हैं क्योंकि इनमें से कई शब्दों में मात्राएँ और संयुक्त व्यंजन होते हैं। उदाहरण के लिए, बच्चा *पानी* शब्द को जानता होगा, लेकिन उसकी हिन्दी

की पाठ्यपुस्तक में *जल* शब्द को पढ़ाए जाने की सम्भावना अधिक है क्योंकि इसमें कोई मात्रा नहीं है। LiRIL अध्ययन के दौरान हमने कर्नाटक में पाठों के एक सेट का अवलोकन किया, जहाँ बच्चों ने : राजा *(अरसा)*, आरा *(गरगसा)*, माला *(सरा)*, गड़गड़ ध्वनि *(गरगरा)* और एक त्यौहार (दशहरा) – जैसे शब्द सीखे क्योंकि इन शब्दों में समान अक्षर-समूह थे। फिर इन शब्दों को कृत्रिम रूप से एक साथ पिरो कर एक अनुच्छेद बनाया गया था जिसमें अधिकांश बच्चे बिल्कुल दिलचस्पी नहीं ले रहे थे क्योंकि इन शब्दों के बीच या शब्दों और बच्चों के जीवन एवं उनकी दिलचस्पी के बीच कोई मूलभूत सम्बन्ध नहीं था।

न्यूज़ीलैंड में माओरी बच्चों के साथ काम करने वाली प्रख्यात शिक्षक सिल्विया एश्टन-वार्नर (Sylvia Ashton-Warner, 1963) ने तर्क दिया कि अगर बच्चों को ऐसे शब्द दिए जाते हैं जिन्हें सीखने में उन्हें रुचि हो तो उन्हें पढ़ना और लिखना ज़्यादा जल्दी आता है। वे शब्दों को प्रस्तुत करने के लिए किसी विशेष क्रम की चिन्ता किए बिना बच्चे की ही रुचि के शब्द चुनकर, प्रत्येक बच्चे के लिए मुख्य शब्दावली बनाया करती थीं। एश्टन-वार्नर के इस विचार को अपनाते हुए, अलग-अलग बच्चों के लिए मुख्य शब्दावली शब्द कार्ड पर, और यदि कुछ शब्द कक्षा की सामान्य रुचि के हैं तो उन्हें कक्षा के चार्ट पर लिखा जा सकता है। बच्चों को अपने पढ़ने और लिखने में इन शब्दों का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। इस तरह वे अपनी रुचि का कुछ पढ़ेंगे, और लिखेंगे भी उन चीज़ों के बारे में जो उनके लिए मायने रखती हैं।

प्रतिदिन ज़ोर से पढ़ना

केवल पाठ्यपुस्तक पर निर्भर होने की बजाय, समृद्ध व दिलचस्प बाल-साहित्य कक्षा में लाएँ और उन्हें बच्चों को ज़ोर से पढ़कर सुनाएँ। आप बच्चों के सामने कहानी की क़िताबें या कविताएँ पढ़ सकते हैं और ऐसे विषयों पर कथेतर साहित्य भी पढ़ सकते हैं जिनके बारे में बच्चों के मन में जिज्ञासा है। बच्चों के साथ, उनमें आए विचारों पर चर्चा करें और उनकी प्रतिक्रियाओं का स्वागत करें। उनकी सोच और रुचियों में उनका साथ दें। इस प्रक्रिया के माध्यम से बच्चे, बिना अपने विचारों और रुचियों को छोड़े, धीरे-धीरे क़िताबों और विचारों की दुनिया से परिचित होंगे। इस प्रकार वे अपने स्वयं के अनुभव से परे जाकर नई सोच, नए विचार, नई शब्दावली और ख़ुद को व्यक्त करने के नए तरीक़े सीखेंगे।

लेखन को पाठ्यक्रम का सबसे महत्त्वपूर्ण हिस्सा बनाएँ

जैसा कि पहले भी कहा गया है, भले ही बच्चे अक्षर या वर्तनी को सही ढंग से नहीं लिख पाते हों, लेकिन उन्हें अपने उभरते लेखन प्रयासों के माध्यम से ख़ुद को व्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।[viii] आप कई तरीक़ों से उनके प्रयासों का समर्थन कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, किसी फील्ड-विज़िट के बाद आप उस पर गहन चर्चा कर सकते हैं और फिर बच्चों से कह सकते हैं कि वे उस भ्रमण के बारे में कुछ पंक्तियाँ लिखने में आपकी मदद करें। आप उनके लिए एक नमूना बना सकते हैं कि उन पंक्तियों को कैसे लिखें और बाद में उसे चार्ट पर लिखकर कक्षा में लगा सकते हैं ताकि बच्चे उसे बाद में दोबारा पढ़ सकें।

या आप बच्चों से कह सकते हैं कि आपने जो कहानी उन्हें पढ़कर सुनाई है, वे उसके पसन्दीदा हिस्से के बारे में बताएँ या लिखें। आप उनके किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति को पत्र लिखने में

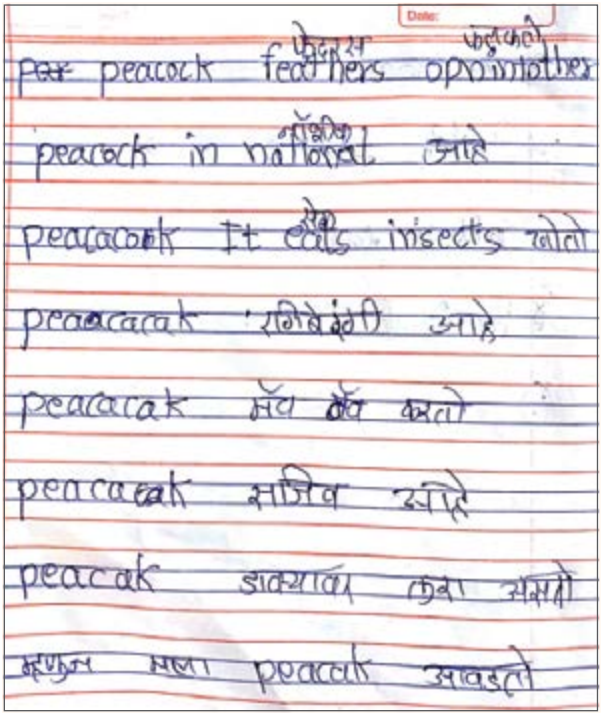

उनकी मदद कर सकते हैं जैसे - किसी दोस्त या माता-पिता को जो दूसरे शहर में जा बसे हैं, दादा-दादी को जो किसी दूसरे गाँव में रहते हैं या कोई और जिसके साथ वे जुड़े रहना चाहते हैं। आप उन्हें उनके समुदाय की किसी मौखिक कहानी या गीत को लिखने में भी मदद कर सकते हैं। समय के साथ-साथ, आप धीरे-धीरे उन्हें विभिन्न प्रकार के लेखन से परिचित करा सकते हैं जिसमें उन्हें आनन्द आए (कविताएँ, कहानियाँ इत्यादि)। इस प्रकार के लेखन आमतौर पर स्कूल में करवाए जाने वाले लेखन कार्य से बहुत अलग होते हैं!

मैंने इस पेचीदा समस्या के साथ इस लेख को शुरू किया था कि गीता जैसे बेहद बुद्धिमान और सक्षम बच्चे प्रारम्भिक भाषा की कक्षाओं में सीखने में असफल क्यों होते हैं? हो सकता है कि इस प्रश्न का उत्तर, इस छोटे से लेख में बताए गए उत्तर की तुलना में कहीं अधिक जटिल हो, लेकिन मुझे लगता है कि अगर छोटे बच्चों के लिए अधिगम को अधिक प्रासंगिक बनाया जाए तो यह समस्या काफ़ी हद तक हल हो सकती है। अगर कल्पनाशील तरीक़ों से पढ़ाया जाए तो प्रत्येक बच्चा सीख सकता है - और सीखेगा भी! मैंने ऐसा करने के लिए केवल तीन प्रमुख विचारों का सुझाव दिया है - बच्चों के घर की भाषाओं का स्वागत करना, भाषा सीखने के उनके उभरते हुए प्रयासों को प्रोत्साहित करना और अर्थ-निर्माण को भाषा की कक्षा के केन्द्र में बनाए रखना। मुझे यकीन है कि ज्यों-ज्यों शिक्षक, शिक्षार्थियों के लिए प्रासंगिकता बनाने की कोशिश करने की दिशा में आगे बढ़ेंगे, त्यों-त्यों वे अन्य नए विचारों और योजनाओं के बारे में भी सोच पाएँगे!

टिप्पणियाँ

[i] पहचान की रक्षा के लिए नाम बदल दिया गया है।

[ii] The Literacy Research in Indian Languages was a longitudinal research project that tracked over 700 students in Palghar district, Maharashtra, and Yadgir district, Karnataka as they moved from Grades 1-3. See Menon, S. et al. (2017). *Literacy research in Indian languages (LiRIL): Report of a three year longitudinal study on early reading and writing in Marathi and Kannada. Bangalore: Azim Premji University and New Delhi: Tata Trusts.*

[iii] For more ideas, please refer to Sinha, S. (2018). Creating spaces for the child's language within classrooms. Retrieved from: http://eli.tiss.edu/wp-content/uploads/2017/08/ELI-Handout-2-Multilingualism-.pdf; and to Menon, S., Sinha, S., Das, H., & Pydah, A. (Eds.) (2019). *Multilingual education in India*. Hyderabad: Early Literacy Initiative, Tata Institute of Social Sciences.

[iv] See, Parikh, R., & Menon, S. (2019). Using mother tongue to facilitate English language learning in low exposure setting. Retrieved from: http://eli.tiss.edu/wp-content/uploads/2017/08/ELI-Practitioner-Brief-18_Using-MT-to-Support-English-Language.pdf

[v] For a more complete discussion of this topic, see Sinha, S., Pydah, A., & Menon, S. (2019). Emergent liter-acy. Retrieved from: http://eli.tiss.edu/wp-content/uploads/2017/08/ELI_Practitioner-Brief-16_Emergent-Literacy.pdf

[vi] More ideas about creating a print-rich classroom can be found at: Pydah, A. (2019). Creating a print-rich environment in the classroom. Retrieved: http://eli.tiss.edu/wp-content/uploads/2017/08/ELI_Practioner_Brief_8_Print-rich-Environment-in-Classroom-1.pdf

[vii] From: Noronha, S. (2016). *Failing Meena* (Unpublished M.Phil dissertation). Hyderabad: Tata Institute of Social Sciences.

[viii] For more ideas on supporting children's writing, see Sinha, S., & Menon, S. (2019). Supporting children's writing in early grades. Retrieved: http://eli.tiss.edu/wp-content/uploads/2017/08/Supporting-Childrens-Writing-in-Early-Grades_Practitioner-Brief_11.pdf; and Pydah, A. (2019). Children's writing: Creating books in the classroom. Retrieved: http://eli.tiss.edu/wp-content/uploads/2017/08/Creating_Books_in_the_Classroom_ELI_Handout_7.pdf

References

Ashton-Warner, S. (1963/1986). Teacher. New York: Simon and Schuster.

Cummins, J. (2001). *Bilingual children's mother tongue: Why is it important to education?* 15-20.

Gee, J. (2003). *What videogames have to teach us about language and literacy*. New York: Palgrave, Macmillan.

Jhingran, D. (2009). Hundreds of home languages in the country and many in most classrooms – Coping with diversity in primary education in India. In T., Skutnabb- Kangas, R., Phillipson, A. K., Mohanty & M., Panda (Eds.), *Social justice through multilingual education*, (pp. 250–267). Bristol: Multilingual Matters.

शैलजा मेनन अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय में भाषा, साक्षरता और बाल-साहित्य की फैकल्टी सदस्य के रूप में काम करती हैं। इससे पहले उन्होंने टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेस, हैदराबाद में प्रारम्भिक साक्षरता पहल और महाराष्ट्र और कर्नाटक में एक अनुदैर्ध्य परियोजना, भारतीय भाषाओं में साक्षरता अनुसन्धान (LiRIL) का नेतृत्व किया है। शैलजा द्विभाषी बच्चों के साहित्य उत्सव, कथावना की संस्थापिका-एंकर हैं। उन्होंने हिन्दू लिटरेचर फॉर लाइफ अवार्ड्स फॉर चिल्ड्रेन लिटरेचर (2016-2018), और सर रतन टाटा ट्रस्ट के बिग लिटिल बुक अवार्ड (2016-2018) के लिए जूरी में काम किया है। शैलजा ने मिशिगन विश्वविद्यालय में अपनी पीएचडी पूरी की और कोलोराडो विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया। उनके लेख अन्तर्राष्ट्रीय और भारतीय पत्रिकाओं में छपे हैं। वे बच्चों, शिक्षकों और शिक्षक-प्रशिक्षकों में भाषा, साहित्य और साक्षरता के प्रति लगाव उत्पन्न करने में रुचि रखती हैं। उनसे shailaja.menon@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

होमवर्क बनाम हाउसवर्क | कुछ बच्चे दोनों को कैसे सम्भालते हैं

शान्ता के.

हर बच्चा सीख सकता है – इस विषय को दिसम्बर 2019 में तय किया गया था। उस समय चर्चा में भाग लेते हुए मेरे दिमाग़ में जो बच्ची आई थी उसे मैं हर सुबह देखती हूँ। तब मुझे लगा कि मैं पत्रिका के इस अंक में अपना योगदान दे सकती हूँ।

मैं जहाँ रहती हूँ, वह एक नया परिसर है जिसमें बहुत सारे घर निर्माणाधीन हैं। हर सुबह अपनी रसोई में काम करते हुए मैं इस परिवार को देखती हूँ, जो भवन-निर्माण मज़दूरों के समूह का हिस्सा है। परिवार एक छोटे से अस्थायी शेड में रहता है। उनका जीवन काफ़ी व्यस्त है जो सुबह छह बजे शुरू होता है और रात में नौ बजे तक समाप्त होता है। *जल्दी सोना और जल्दी उठना* – इस परिवार का नियम है। परिवार की मुखिया एक महिला है जो निर्माण-स्थल पर एक मज़दूर के रूप में काम करती है। उसे दैनिक मज़दूरी मिलती है। उसके तीन बच्चे हैं, दो लड़के और एक लड़की। लड़की का नाम रेखा है। महिला का भाई भी निर्माण-स्थल पर ही चौकीदार का काम करता है और अपने परिवार के साथ पड़ोस में ही रहता है। उसकी भी तीन लड़कियाँ हैं, उनमें से सबसे बड़ी लड़की रेखा के साथ स्कूल जाती है और दोनों कक्षा एक में हैं।

मैं, एकल माँ की इस सबसे छोटी बच्ची रेखा की दिनचर्या से काफ़ी प्रभावित हूँ। वह सुबह क़रीब छह बजे उठती है, नहाती है, अपने स्कूल की यूनिफ़ॉर्म पहनती है, बर्तन और कपड़े धोने में अपनी माँ की मदद करती है, कपड़े सूखने के लिए बाहर डालती है और फिर नाश्ता करके स्कूल जाने के लिए उसी परिसर के अपने अन्य दोस्तों का इन्तज़ार करती है। पाँच बच्चे आते हैं और वे सब एक साथ स्कूल जाते हैं। स्कूल में मध्यान्ह भोजन दिया जाता है, इसलिए दोपहर के भोजन को लेकर कोई चिन्ता नहीं है; फिर वह शाम को चार बजे तक उसी ऊर्जा के साथ घर लौटती है। उनका नहाने, धोने और खाना बनाने का सारा काम एक खुली जगह में होता है, जो कि मेरी रसोई की खिड़की से दिखाई देती है।

मैंने सप्ताहांत में रेखा से बात की। मैंने यह जानने की कोशिश की कि उसकी पढ़ाई की क्या दिनचर्या है, अपने स्कूल के काम वह कैसे निपटाती है, होमवर्क करने में उसकी मदद कौन करता है आदि। मुझे जो जानकारियाँ मिलीं, वे इस प्रकार हैं।

रेखा लगभग 8 साल की है और मरसूर, अनेकल के सरकारी स्कूल में पढ़ती है। वहाँ शिक्षण का माध्यम द्विभाषी है, कन्नड़ा और अँग्रेज़ी दोनों का उपयोग कक्षा में किया जाता है। कक्षा में उसके विषय कन्नड़ा, अँग्रेज़ी, पर्यावरण अध्ययन और गणित हैं। उसके पसन्दीदा विषय पर्यावरण अध्ययन और गणित हैं। जब मैंने उससे पूछा कि वह वर्तमान में पर्यावरण अध्ययन का कौन-सा पाठ पढ़ रही है तो उसका जवाब था 'सजीव प्राणी क्या हैं?'

सामान्यतः हमारी यह धारणा होती है कि लड़के गणित में अच्छे होते हैं और लड़कियाँ सामाजिक अध्ययन और भाषाओं में, लेकिन रेखा इस रूढ़िबद्ध धारणा को झूठा साबित करती है; उसे गणित विषय बहुत आसान लगता है, जबकि उसकी कक्षा के कुछ लड़कों को यह कठिन लगता है। वह होमवर्क में अपने बड़े भाई की मदद लेती है, लेकिन ज़्यादातर ऐसा होता है कि भाई का अपना होमवर्क ही बहुत होता है, तो इसके लिए रेखा ने एक व्यावहारिक विकल्प ढूँढ़ निकाला है - सुबह जल्दी स्कूल जाना और अपनी सहेली की नोटबुक से नकल करना। होमवर्क हर दिन दिया जाता है और वह अपने घर के कामों के कारण इसे पूरा नहीं कर पाती है। इसलिए वह दोस्त की नोटबुक से नकल करने के लिए मजबूर है ताकि कक्षा में सज़ा से बच सके। उसके दोस्त के जवाब कितने सही होते हैं, यह तो शिक्षक ही जानें!

कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्न

प्रवासी मज़दूर समय-समय पर एक जगह से दूसरी जगह जाते रहते हैं, उनके बच्चे सुबह-शाम घर के कामों में व्यस्त रहते हैं, इस सबके बीच स्कूल भी जाते हैं। यह सब देखकर मैं सोचने लगी : वे *सीखने* और अपना होमवर्क करने के लिए समय कैसे और कब निकालते हैं? डिजिटल इण्डिया के इस युग में, जब इंटरनेट पर सब कुछ उपलब्ध है, धनी परिवारों के बच्चों को अपनी पढ़ाई में अपने माता-पिता से किसी भी तरह की सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ती। लेकिन पहले से ही वंचित बच्चे, समाधान के लिए कहाँ जाएँगे, ज्ञान की अपनी भूख को कैसे तुष्ट करेंगे? स्मार्टफोन पर उपलब्ध सभी ऐप्स को इंटरनेट कनेक्टिविटी की आवश्यकता होती है, लेकिन फोन और इंटरनेट के लिए पैसे कौन भरेगा?

जिन स्कूलों में बच्चों की पढ़ाई और उससे जुड़े कार्यों जैसे कि होमवर्क आदि में परिवार वाले कोई सहायता नहीं कर सकते, वहाँ के शिक्षकों को इन बच्चों के प्रति संवेदनशील होना

चाहिए, कक्षा के दौरान पर्याप्त सहायता प्रदान करनी चाहिए, कक्षा-कार्य अधिक करवाना चाहिए और होमवर्क पर इतना ज़ोर देने की बजाय उसे हटा देना चाहिए।

दिलचस्प बात यह है कि इन सभी बाधाओं के बावजूद रेखा जैसे बच्चे स्कूल जाते हैं, सीखते हैं और मेरी तरह काम करने की आकांक्षा रखते हैं। उसने कहा कि वह एक कार्यालय में काम करना चाहती है न कि अपनी माँ की तरह ईंटें ढोना। उसकी माँ की भी यही इच्छा है, जो हमेशा कहती है, 'मैं चाहती हूँ कि मेरे तीनों बच्चे शिक्षा पाएँ और *ऑफिस* में काम करें।'

रेखा इसी उत्साह और आकांक्षा के साथ प्रतिदिन स्कूल में पढ़ने जाती है। हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि शिक्षक और समुदाय ऐसा माहौल बनाएँ जहाँ रेखा जैसे बच्चों को सीखने और ज्ञान प्राप्त करने का और बाद में आजीविका हासिल करने का अवसर मिले। तब हम दृढ़तापूर्वक यह कह सकते हैं कि *हर बच्चा सीखना चाहता है* और अगर अवसर दिया जाए तो *हर बच्चा सीख सकता है* ।

शान्ता के. पिछले आठ साल से अज़ीम प्रेमजी फ़ाउण्डेशन के साथ कार्यरत हैं और वर्तमान में 'अनुवाद पहल एवं प्रकाशन' का कार्यभार सम्भाल रही हैं। वे मानव संसाधन प्रबन्धन में स्नातक हैं और सामाजिक विज्ञान के नज़रिए से अपने चारों ओर के जीवन का अवलोकन करने में रुचि रखती हैं।
उनसे shantha.k@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

अच्छा पढ़ाना सीखने का एक बड़ा हिस्सा है यह पहचानना शुरू करना कि कौन-से प्रतीकों या संकेतों को विद्यार्थी समझते हैं और फिर उनमें से सबसे प्रभावशाली प्रतीकों का चुनाव कर, उनका इस्तेमाल करना। जब विद्यार्थी मेरी कक्षा में दिलचस्पी लेते हुए प्रतिक्रिया देने लगते हैं (या मैं ऐसे प्रतीक या संकेत देखने लगता हूँ जो मेरे ख़याल में दिलचस्पी का प्रतिनिधित्व करते हैं) तो वह मेरे स्वत्व को आकार देने लगता है। मैं स्वयं को एक क़ाबिल और गर्वित शिक्षक के रूप में देखने लगता हूँ। हम हमेशा संकेतों या प्रतीकों के माध्यम से अन्तःक्रिया करते रहते हैं और इस प्रक्रिया का अध्ययन सीखने-सिखाने के लिए महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टियाँ प्रदान करता है।

- अमन मदान, 'आदिवासी स्कूली शिक्षा में स्वत्व और पहचान का पुनर्निर्माण', पेज 3

प्रत्येक बच्चे को स्कूल में लाना

शिवानी तनेजा

जब मैंने 1997 में काम करना शुरू किया तो सपना था कि सभी बच्चों को स्कूल में होना चाहिए, क्योंकि मेरा मानना था कि यह विचार एक समतापूर्ण दुनिया के विज़न से सीधे जुड़ा हुआ है। मुझे यक़ीन है कि हममें से कई लोगों ने इस दिशा में काम किया है। चाहे वह राज्य हों, समुदाय हों या माता-पिता हों, हम सभी इस बात पर विश्वास करते हैं और इस आधार पर कार्य करते हैं कि स्कूली शिक्षा आवश्यक होने के साथ-साथ उत्पादक भी है। लेकिन जैसे-जैसे हम एक सरल अल्पवयस्क से एक समीक्षात्मक चिन्तन करने वाले वयस्क (हमारी अपनी स्कूल शिक्षा के माध्यम से तो ऐसा बनने की सम्भावना नहीं है!) के रूप में बड़े होते हैं तो एहसास होता है कि यह बात तो सच्चाई से बहुत दूर है। कुछ सवाल उठते हैं जिनका परीक्षण करने के लिए कक्षा से परे जाना पड़ सकता है : क्या शिक्षा केवल औद्योगिक दुनिया और आधुनिक सभ्यता के लिए एक उपकरण मात्र है? क्या हम सभी लिंग, धर्म, जाति और वर्ग में समानता की बात सीखते हैं और संवैधानिक मूल्य विकसित करते हैं, या वास्तव में इसका उल्टा होता है और इस व्यवस्था के माध्यम से मज़बूत होता है? क्या यह शिक्षा एक टिकाऊ दुनिया का निर्माण करेगी?

जब हम देखते हैं कि इस व्यवस्था के *उत्पाद* क्या करने में सक्षम हैं; या जब हम तथाकथित सभ्य दुनिया के कामकाज के तरीक़े को देखते हैं तो यह प्रश्न, यह शंकाएँ बनी रहती हैं। लेकिन इस स्थिति में भी, कक्षा में काम करने वाले शिक्षकों के रूप में अपनी सीमित भूमिका में, हम अपने बच्चों के लिए व्यवस्था में बदलाव की अपार सम्भावनाएँ देख सकते हैं।

कुछ आवश्यक बातें

प्रेम और स्नेह

दो इन्सानों के बीच की अन्तःक्रिया एक सकारात्मक और सक्षम करने वाला अनुभव तभी हो सकती है जब दोनों के बीच स्नेह हो। हाशिए पर रहने वाले बच्चों को शायद केवल अपने परिवार और समुदाय के लोगों के एक छोटे से दायरे में ही प्यार किया जाता है, उनकी ओर देखकर मुस्कराया जाता है। दुकानों में या सड़कों पर उन्हें देखकर कोई नहीं मुस्कराता। उनका रंग, उनका वर्ग, उनका धर्म या समुदाय, उनका रूप – उनके साथ भेदभाव करने के लिए पर्याप्त है। इसलिए, एक शिक्षक के रूप में जब आप बच्चों का मुस्कराकर या गले लगाकर स्वागत करते हैं तो वे महसूस करते हैं कि आप उनकी परवाह करते हैं, उन्हें लगता है कि उन्हें अपने सामाजिक समूह के *बाहर* भी स्वीकृति मिल रही है।

यह प्रयास केवल एक रणनीति नहीं है, बल्कि जब हम उन बच्चों से प्यार करते हैं जिनके साथ हम काम करते हैं तो यह एक सहज प्रतिक्रिया होती है। औपचारिक *गुड मॉर्निंग, मैडम* के स्थान पर स्नेह के सरल संकेत, चाहे वह एक मुस्कान हो या शुभकामनाएँ, चमत्कार कर जाती हैं। बच्चे यह महसूस करने लगते हैं कि दुनिया उनकी वजह से एक ख़ूबसूरत स्थान है। स्कूल एक ऐसा स्थान बन जाता है जहाँ वे जैसे हैं वैसे ही उन्हें अपनाया जाता है।

सम्मान और गरिमा

मुख्यधारा की संस्कृति में, हाशिए पर रहने वाले बच्चे की भाषा और जीवन को वह दर्जा नहीं दिया जाता है जिसके वे योग्य हैं। हो सकता है कि इसका कारण वह कार्य हो जो बच्चे के माता-पिता करते हैं या वह जहाँ रहता है या वह जो खेल खेलता है – इन सभी को मुख्यधारा की आकाँक्षाओं से कमतर माना जाता है। बच्चे को अपने हाशिए की स्थिति और उसके कारण अपने साथ किए जाने वाले व्यवहार को सहना पड़ता है। उनकी भाषा को भी जॉब-मार्केट के लिए सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता। इसके विपरीत, यह अन्तर अक्सर उस सामान्य क्षमता की कमी के चिह्नक या सामाजिक रूप से समझे जाने वाले शॉर्टहैंड होते हैं जिन्हें कई लघु और दीर्घकालिक भौतिक लाभों का संकेतक माना जाता है। इस प्रकार के दृष्टिकोण सम्मान और गरिमा से सम्बन्धित कई मनोवैज्ञानिक परिणामों को जन्म देते हैं।

सम्मान और गरिमा के विभिन्न रूप हैं; इसका सबसे सरल रूप है दूसरे व्यक्ति की भाषा, संस्कृति, जीवन-शैली, पहचान और ज्ञान को समृद्ध और विशिष्ट मानना। बहुभाषी शिक्षणशास्त्र के कई सारे मज़बूत पक्ष हैं जिनका उल्लेख करना यहाँ सम्भव नहीं, लेकिन बच्चे की स्थिति से बातचीत शुरू करना महत्त्वपूर्ण है।

एक ऐसे शिक्षक के रूप में (जो बच्चे की प्रथम भाषा में सहज नहीं है),जब मैं बच्चे की भाषा में एक वाक्य भी बोलती हूँ तो बच्चा मुझे एक अलग ही दृष्टि से देखता है। मानो वह कह रहा हो, 'आप मुझे महत्त्व देती हैं, आप मुझसे बात करना चाहती हैं, आप मेरे साथ जुड़ने की कोशिश कर रही हैं, आप मेरे जीवन का हिस्सा हैं।' मुझे नहीं पता कि बच्चे के दिमाग़ में क्या चल रहा होता है, लेकिन वह मुझे अलग तरह से स्वीकार करता है। इन उदाहरणों में, मैं केवल बच्चे के साथ बात करने की कोशिश कर रही होती हूँ या शायद थोड़ा हँसी-मज़ाक कर रही होती हूँ, लेकिन बच्चा मेरे साथ बातचीत करता है, मुझे

स्वीकार करता है क्योंकि मैंने उसे स्वीकार कर लिया है। कई बार मैं वाक्य का अनुवाद बच्चे की प्रथम भाषा में करके उसे लिख लेती हूँ और जब मैं उसे 'पढ़ती', 'बोलती' हूँ तो बच्चे की आँखों की चमक और उसका मुझे सीधे देखना कि यह क्या हो रहा है– एक बहुत सुन्दर अनुभव होता है।

दूसरे के जीवन को घटिया या श्रेष्ठ माने बिना उसे स्वीकार करने से गरिमा प्राप्त होती है। इसका मतलब बच्चों को अपने जीवन के बारे में जानकारी साझा करने की *अनुमति देना* या *सहन करना* नहीं है बल्कि ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करना है। एक स्पष्ट सन्देश यह होना चाहिए कि उनके जीवन को बातचीत, लेखन और अन्य प्रकार के आदान-प्रदान के माध्यम से कक्षाओं में लाया जा सकता है और लाया जाना चाहिए तथा कोई भी उस पर हँस नहीं सकता। आजकल *मुस्कान*[1] में हमारे शिक्षकों ने रसोई सम्बन्धी प्रयोगों के माध्यम से बच्चों को अँग्रेज़ी शब्दावली सिखाना शुरू कर दिया है। उनके पारम्परिक खाद्य पदार्थों को कक्षा में पकाया जा रहा है।

एक ओर जब हम हाशिए के बच्चे को स्वीकार करते हैं, तो वहीं दूसरी ओर हमें उस महत्ता को कम करना होगा जो पारम्परिक रूप से सवर्णों या उच्च वर्गों को दी गई है और जिसमें से अधिकांश शिक्षक आते हैं। सामान्य मान्यताओं और दृष्टिकोणों को बदलने की ज़रूरत है। उदाहरण के लिए, यह महसूस करना कि मुझे अक्षमता के बिन्दु तक सुरक्षित किया गया है और पैसे न होने पर मैं उसी शहर में दूसरी जगह पहुँचने में असमर्थ हूँ या यह स्वीकार करना कि मध्यमवर्गीय घरों में उतनी ही हिंसा होती है जितनी कि श्रमिक वर्ग के परिवारों में होती है, लेकिन बड़े घर की दीवारें यह सुनिश्चित करती हैं कि पड़ोसियों को पता न चले - तो यह कुछ ऐसे नज़रिए हैं जिन्हें समाज को बदलना चाहिए। फिर, हम कैसे दिखते हैं, इसके बारे में भी पूर्व-कल्पित धारणाएँ हैं। यदि अमीरों के घरों में लगातार पानी न आता होता तो उनके बच्चे शायद उतने साफ़-सुथरे नहीं दिखते जितने वे दिखते हैं और समय पर स्कूल नहीं पहुँच पाते।

यह ऐसी बातें हैं जो मैं अक्सर तब कहती हूँ जब बच्चे अपने अनुभव साझा करते हैं और परिणामस्वरूप ख़ुद की ही उपेक्षा करते हैं। कुछ लोकप्रिय मान्यताएँ जैसे कि पारम्परिक चिकित्सा के बारे में समझे बिना एलोपैथिक चिकित्सा के चमत्कार की श्रेष्ठता को मानना और पारम्परिक चिकित्सा को अन्धविश्वास और पिछड़ा मानकर खारिज करना यह दिखाता है कि ज्ञान को भी आर्थिक वर्ग और सामाजिक समूह के अनुसार वर्गीकृत किया गया है। सभी मनुष्यों की समानता का विचार हमारी बातचीत के माध्यम से उजागर होना चाहिए।

सीखने की भावना

सीखना मानव मन के लिए ऐसा ही है जैसे एड्रेनलिन का इंजेक्शन लेना। हममें से जिस किसी को भी कुछ सीखने का अवसर मिला है और जो इसके प्रति सचेत है, वह समझ गया होगा कि मैं किस बारे में बात कर रही हूँ। एक संस्था के रूप में स्कूल सीखने का एक स्थान है। फिर भी ज़्यादातर बच्चे वहाँ निष्क्रियता का अनुभव करते हैं।

बच्चे स्वाभाविक रूप से रचनात्मक, बुद्धिमान, समीक्षात्मक और सीखने के लिए तैयार होते हैं, लेकिन स्कूल में उन्हें अक्सर, सार्थक अन्तःक्रिया और सीखने के मौके नहीं मिलते हैं। कक्षा में घण्टों बैठना बहुत अरुचिकर हो जाता है और कक्षा में जो कुछ भी हो रहा है उसे न समझ पाने की भावना से मन में असफलता की भावना आ जाती है, जबकि एक सचेतन बच्चा यह समझने लगता है कि सीखने-सिखाने की प्रक्रिया, जिस पर अधिकांश कक्षाओं में ज़ोर दिया जाता है, में कोई समस्या है। मुझे आशा है कि शिक्षकों के रूप में हमें यह एहसास होगा कि हालाँकि परीक्षा में सफल होना महत्त्वपूर्ण है और इससे समझौता नहीं करना चाहिए, लेकिन अंक इतने महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। *सीखना* ही मायने रखता है।

सीखने की यह भावना किसी कौशल या किसी अवधारणा को सीखने या एक नई सोच प्राप्त करने से सम्बन्धित हो सकती है। इस प्रकार, सार्थक रूप से किसी सवाल को हल करने में सक्षम होना, या यह समझना कि जो चीज़ उनके लिए बस एक डिज़ाइन या एक पैटर्न थी, वह वास्तव में एक लिपि है जिसे वे बना सकते हैं या डिकोड कर सकते हैं या यह बात कि वे अँग्रेज़ी में एक पूर्ण वाक्य बोल सकते हैं - यह सारे अनुभव बच्चे को यह समझने में मदद करते हैं कि औपचारिक स्कूल उनके लिए एक अच्छी जगह हो सकती है।

केवल पुस्तकों और ब्लैकबोर्ड पर निर्भर होने की बजाय औपचारिक ज्ञान में सामुदायिक ज्ञान को भी लाने और चीज़ों को करने से बच्चा सीखने की प्रक्रिया में अधिक वास्तविक तरीक़े से शामिल होगा। बीज के अंकुरण की प्रक्रिया को देखना, अपने आसपास के क्षेत्र के पेड़ों को समझना आदि कुछ ऐसे विषय हैं जो जीवन की वास्तविक विषय-सामग्री का निर्माण करते हैं और जिन्हें पारम्परिक शिक्षकों को भी अपनी कक्षा में लाना चाहिए; ज़रूरी नहीं कि बीएड की डिग्री प्राप्त शिक्षक ही ऐसा करें। हमारे स्कूलों का उद्देश्य भी यही वास्तविक अधिगम है जो बच्चे को भी आश्वस्त करता है और यह तय करता है कि उसे यह स्थान अपने लिए ठीक लगता है या नहीं।

बातचीत और संवाद

यथास्थिति पर सवाल उठाने और स्वतंत्र एवं समीक्षात्मक चिन्तन को बढ़ाने की आवश्यकता बहुत महत्त्वपूर्ण है और यही चीज़ मुख्यधारा की स्कूली शिक्षा में कहीं खो गई है। इसलिए हमारे लिए यह बात बहुत महत्त्वपूर्ण है कि हम बच्चों को बोलने के अवसर दें ताकि वे साझा कर सकें कि वे अपने भीतर, अपने आसपास और दुनिया की विभिन्न चीज़ों के

बारे में क्या महसूस करते हैं। स्थितियों तथा अपने कार्य करने के तरीक़ों का विश्लेषण करने से हमें चिन्तन करने का मौका मिलता है। इसके लिए शिक्षक को प्रश्न पूछना और सुझाव देना चाहिए। वैसे तो इसे किसी भी अवधारणा को पढ़ाते समय अपने शिक्षण में शामिल किया जा सकता है, लेकिन अपने आप में भी यह महत्त्वपूर्ण है। साप्ताहिक रूप से अपने विचारों को साझा करने की व्यवस्था की जा सकती है जिसमें सामाजिक मानदण्डों और व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं पर चर्चा की जाए। ऐसा करने से केवल स्वीकार करने और तालमेल बैठाने की बजाय सोचने और मूल्यांकन करने के बाद कार्य करने की संस्कृति विकसित हो पाएगी।

मुझे ध्यान आती है अपनी एक कक्षा जहाँ हम चर्चा कर रहे थे कि हाशिए के समुदायों के बच्चों के लिए स्कूली शिक्षा क्यों महत्त्वपूर्ण है और उन्हें इसे क्यों नहीं छोड़ना चाहिए। बच्चों ने कुछ बड़ा हासिल करने की इच्छा के दृष्टिकोण से बातचीत शुरू की और फिर वे हाशिए के समुदायों की गरिमा को फिर से हासिल करने और सवर्ण लोगों को यह दिखाने की बात करने लगे कि किसी विशिष्ट समुदाय का बच्चा क्या कुछ करने में सक्षम है। इसके बाद यह विचार सामने आया कि हममें से हर एक अद्वितीय है और हम उन अलग-अलग रास्तों पर अपने जीवन को चलाने की कोशिश कर सकते हैं जो हमारे लिए व्यक्तिगत रूप से ठीक बैठें और शिक्षा के माध्यम से हमारे लिए अधिक विकल्प खुलेंगे।

महिलाओं का काम और स्थिति, जाति-पदानुक्रम, क्रोध और दर्द की भावनाएँ - ऐसा कुछ भी नहीं है जिसका अवलोकन

बच्चे नहीं करते हैं और जिसे वे समझ नहीं सकते। वे लगातार राय बनाते रहते हैं और अनजाने में इन रायों को व्यवहार में परिवर्तित करते रहते हैं। हमें नैतिक शास्त्र के पाठ नहीं चाहिए; हमें तो केवल ग़ैर-निर्णायक और खुले विचार-विमर्श की आवश्यकता है।

अभिव्यक्ति

सभी मनुष्य अनुभवों, यादों और भावनाओं का पुलिन्दा हैं। यही सब है जो हमें इन्सान बनाते हैं। ऐसा कुछ भी नहीं है जो आपके जीवन में होता है और आपके साथ रहता है जिसे व्यक्त नहीं किया जा सकता है। वह मृत्यु, दुर्व्यवहार, दर्द, प्रेम कुछ भी हो सकता है। वयस्कों के रूप में हम ऐसे भड़काऊ/तनावपूर्ण विषयों या शब्दावली को सामने लाने में संकोच करते हैं जो अपमानजनक हैं। लेकिन हमें कक्षा में इन्हें सक्रिय रूप से लाने का प्रयास करना चाहिए क्योंकि यह बच्चे के मन और स्मृति का हिस्सा हैं। हमें उनके साथ इन विषयों पर इस तरह से चर्चा करनी चाहिए जो अहिंसक और ग़ैर-अपमानजनक हों। बच्चे के शैक्षिक स्तर या जिस विषय को हम पढ़ा रहे हैं, उसके आधार पर, हम उस रूप को भी संशोधित कर सकते हैं जिसमें अभिव्यक्ति अपेक्षित है। ड्राइंग, लेखन, बोलना, अभिनय के माध्यम से साझा करना आदि अभिव्यक्ति के रूप हैं, जिन्हें सभी स्थितियों में प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यह असंरचित हो सकता है या इस प्रकार के सवालों से शुरू किया जा सकता है कि 'कल रात आपने क्या किया? ऐसा क्या है जिससे आपको डर लगता है? आपने नया दोस्त कैसे बनाया?' अभिव्यक्ति और चर्चा, व्यक्त करने वाले और सुनने वाले के लिए विभिन्न तरह से कार्य करती है।

कक्षा के बाहर कदम रखना

परिचित चीज़ों की खोज करना

जब हम निरीक्षण करने, चर्चा करने और सीखने के लिए एक समूह के रूप में कक्षा से बाहर किसी परिचित या नई जगह में कदम रखते हैं तो ऐसी स्थिति हमें सीखने के लिए सक्षम बनाती है। यह अफसोस की बात है कि अब अधिकांश अन्तःक्रिया कंप्यूटर और फोन द्वारा हो रही है, लेकिन फिर भी हमारे द्वारा बनाए गए अवसर हमें अपने स्वयं के नज़रिए से लोगों और प्रकृति को समझने में मदद करेंगे।

कई बार मैं अपनी कक्षा की लड़कियों को फोन के बिल का भुगतान करने या पत्र पोस्ट करने के लिए साथ ले जाती हूँ। इस तरह से सार्वजनिक स्थान में अपने शिक्षक के साथ घूमने वाले बच्चों के लिए और शिक्षक के लिए भी, उनका अनुभव नई अन्तर्दृष्टि लेकर आता है। बच्चों के इलाकों और मोहल्लों में घूमना और उनसे वहाँ की जगहों के बारे में बताने या उनका परिचय करवाने के लिए कहने से हमें स्थान के बारे में नई अन्तर्दृष्टि और परिप्रेक्ष्य मिलता है। इस प्रयास में समुदाय के बुजुर्गों को भी प्रोत्साहित किया जा सकता है।

हम यह भी सीखते हैं कि चाहे जंगल हो या सड़क, बच्चों को बन्द कमरे की तुलना में वास्तविक दुनिया में अपने ज्ञान और समझ के तरीक़ों को साझा करना अधिक प्रामाणिक लगता है।

कहानियों और कहानी की किताबों के माध्यम से सांस्कृतिक सीमाओं को पार करना

हमारी अधिकांश पाठ्यपुस्तकों में अभी भी दिलचस्प कहानियों का अभाव है जो हमें भारत और/या दुनिया के लोगों की विविध संस्कृतियों को समझने और उनके साथ जुड़ने में मदद कर सकें। चूँकि पाठ्यपुस्तकों में 'पाठ' केवल उन सवालों को ध्यान में रखते हुए पढ़ाए जाते हैं जो अध्याय के बाद पूछे जाते हैं और अक्सर जीवन-मूल्य पर आधारित होते हैं; वे विशेषाधिकार प्राप्त बच्चे के अनुभवों का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनमें बचपन की मध्यमवर्गीय धारणाओं को ध्यान में रखा जाता है; इसलिए हाशिए के युवाओं के जीवन का प्रतिनिधित्व और सम्मान करने वाली विभिन्न कहानियों का महत्त्व और प्रासंगिकता पूरी तरह से खो गई है। शिक्षाविद् कृष्ण कुमार का नुस्ख़ा है – प्रतिदिन एक कहानी। हम ख़ुद यह पता लगा सकते हैं कि हमारे स्कूल के लिए सबसे अच्छी बात कौन-सी रहेगी।

बच्चों की वास्तविकताओं की पुष्टि करने वाली कहानियाँ उतनी ही महत्त्वपूर्ण हैं जितनी कि वे कहानियाँ जो हमें एक अलग प्रकार की वास्तविकता वाले जीवन में झाँकने में मदद करती हैं। जब भी हम कोई ऐसी कहानी सामने रखते हैं जिसमें भीड़ की वजह से किसी बच्चे को चोट लगी हो या अधिकारों के उल्लंघन के बारे में कोई बात हो तो पाठक हमेशा उस व्यक्ति को समझने की कोशिश करता है। जब हम 8 साल के बच्चे को पाकिस्तान के ख़िलाफ़ बोलते हुए सुनते हैं (इस देश के लिए, जिसे वे 'पश्चिम छोर पर दुश्मन' कहते हैं, बच्चों द्वारा महसूस की जाने वाली दुश्मनी, उनके साथ बातचीत में साफ़ दिखाई देती है), तो मन में यह सवाल उठता है कि क्या यह नफ़रत गहरी होती या ख़त्म होती अगर दुश्मनी या इतिहास के विकृत संस्करणों पर पाठ पढ़ने की बजाय सीमाओं पर रहने वाले बच्चों के बारे में कहानियाँ पढ़ी गई होतीं। *मुस्कान* के पुस्तकालयों में हम सचेत रूप से उन पुस्तकों को रखने की कोशिश कर रहे हैं जो विभिन्न वास्तविकताओं को प्रस्तुत करती हैं और साथ ही उन पुस्तकों को प्रकाशित भी करते हैं जो हमारे बच्चों की वास्तविकताओं को व्यक्त करती हैं।

विभिन्न भावनात्मक ज़रूरतों को पहचानना

हम यह देख सकते हैं कि हाशियाकृत पृष्ठभूमि के बच्चों के लिए 12 साल की औपचारिक शिक्षा प्राप्त करना एक कठिन काम है। यदि प्रयास की गणना की जा सकती हो तो शायद हाशिए के बच्चे को अपने जीवन-प्रवाह को बदलने के लिए एक विशेषाधिकार प्राप्त पृष्ठभूमि के बच्चे की तुलना में कम से कम 50 गुना अधिक प्रयास करने की आवश्यकता होती है, उस बच्चे की तुलना में जिसकी दिशा पहले से ही उसके जन्म के कारण निर्धारित है। हम अक्सर सुनते हैं कि एक दृढ़ संकल्पी बच्चा सभी बाधाओं को पार कर सकता है, लेकिन मैं यह मानना पसन्द करती हूँ कि यह हमारा दृढ़ संकल्प और लचीलापन है न कि बच्चे का, जिसका परीक्षण किया जा रहा है।

सीखने में शिक्षकों की भूमिका

हालाँकि उपर्युक्त प्रयासों के द्वारा कुछ परिस्थितियों को हल किया जा सकता है, लेकिन हो सकता है कि हमारे प्रयास और संवेदनशीलता में कमी की वजह से बच्चा अपनी पढ़ाई जारी न रखे। यूँ तो अधिकांश बच्चों के लिए शिक्षक के साथ एक भावनात्मक बन्धन और विश्वास महत्त्वपूर्ण होता है, लेकिन कुछ के लिए, यह सबसे महत्त्वपूर्ण कारक बन सकता है। ऐसे बच्चों को कुछ लक्षणों के माध्यम से पहचाना जा सकता है: वे कक्षा में दूसरों के साथ घुलते-मिलते नहीं; चर्चा में भाग लेने से बचते हैं; हो सकता है कि वे घर में किन्हीं मुश्किलों से गुज़र रहे हों; या कक्षा के प्रमुख समूह द्वारा बहिष्कृत महसूस कर रहे हों।

यह एक व्यक्तिगत अपेक्षा है और इसके लिए बहुत सारी मेहनत करनी होगी; लेकिन मेरे अनुसार यह हमारे उस काम का हिस्सा है जिसे हमने शिक्षकों के रूप में ख़ुद चुना है। विशेष रूप से उन बच्चों के शिक्षक के रूप में जिनके भाग्य में कोई परामर्शदाता (काउंसलर) या ऐसी माँ नहीं होती जो अपना काम छोड़ सके या मातृत्व अवकाश का लाभ उठाकर उनकी देखभाल कर सके या ऐसा परिवार नहीं होता जो छुट्टियों में उनके साथ गुणवत्तापूर्ण समय बिताए। मैं यह नहीं कह रही हूँ कि बच्चे प्यार से वंचित हैं, लेकिन कमज़ोर वर्ग के परिवार जीवन में नए और कठिन रास्तों पर चलने के साथ-साथ अपने बच्चों को भावनात्मक शक्ति नहीं प्रदान कर पाते। इन परिवारों और समुदायों के लिए औपचारिक शिक्षा एक ऐसा मार्ग है जिस पर वे कभी चले ही नहीं। अगर मैं हाशिए के बच्चे के साथ काम करना चुनती हूँ, तो मुझे यह भी समझना होगा कि उस बच्चे को मुझसे समर्थन चाहिए।

वास्तविक जीवन की कहानियाँ

धर्मेन्द्र एक ओझा गोंड बच्चा है जिसके छह भाई-बहन हैं। उनकी माँ उनसे प्यार करती है, उनका ध्यान रखती है। वे सड़क के किनारे रहती हैं और उनका जीवन अपनी मूल आदिवासी जड़ों से इस कदर विस्थापित है कि उसकी कल्पना ही की जा सकती है। धर्मेन्द्र ने आठवीं कक्षा तक बड़ी मेहनत से पढ़ाई की और फिर वह सड़कों पर रद्दी-कूड़ा चुनने के काम में लग गया क्योंकि यही उसके परिवार की आय का एकमात्र स्रोत था। मेरा मानना है कि अगर मैं उसकी मौसी की तरह हो सकती तो उसके जीवन की दिशा अलग ही होती। लेकिन मैं शायद ज़्यादा-से-ज़्यादा एक सहानुभूतिपूर्ण शिक्षिका थी।

पारधी लड़की अंजलि का भी यही हाल था। वह अपने लिए

एक अलग से जीवन का सपना देखती थी और हमेशा घर से दूर भागती रहती, लेकिन एक बीमारी के कारण वह सिर्फ़ 8 साल की उम्र में चल बसी। मुझे लगता है कि मैं एक वयस्क के रूप में वहाँ थी तो सही, लेकिन उतनी नहीं जितने की उसे ज़रूरत थी। बच्चों की ज़रूरतें और व्यक्तित्व अलग-अलग होते हैं, कुछ पर ज़्यादा ध्यान देने की ज़रूरत होती है, कुछ पर कम। वयस्कों के रूप में, हमें उन बच्चों तक पहुँचना होगा जिन्हें हम अपने जीवन में अपनी मर्ज़ी से लाते हैं, जन्म से नहीं।

हाशिए के समुदायों का हिस्सा होने के नाते, अपमानजनक स्थितियों में रहना और/या भेदभाव का जीवन जीना अधिगम में वाकई बाधा हो सकती है। 12 साल की स्कूली शिक्षा के रास्ते से गुज़रना, फिर उच्च शिक्षा के संस्थानों तक पहुँचने से पहले 3 + साल की स्नातक स्तर की पढ़ाई, यह सब बच्चों की हिम्मत की निरन्तर परीक्षा लेते हैं। संस्थागत रूप से उनके अलगाव और उनके प्रति होने वाले भेदभाव आदि बताते हैं कि हमें इस बात पर तत्काल ग़ौर करना होगा कि हमारे संस्थानों द्वारा किस प्रकार सक्रिय रूप से भेदभाव किया जाता है ।

प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों के रूप में, हमारा व्यवहार बच्चों को बाहर धकेलता है या उन्हें भीतर खींच लाता है – इस बारे में हम सचेत हो सकते हैं और ख़ुद को बदल सकते हैं। यदि हम इस सोच को बदलते हैं कि हमारे स्कूल और सीखने के स्थान तटस्थ हैं, बाक़ी समाज से कटे हुए हैं, जाति और वर्ग के प्रति जागरूक नहीं हैं, योग्यता उन्मुख हैं। साथ ही यदि हम इस बात को स्वीकार करते हैं कि स्कूल अक्सर उन सामाजिक-सांस्कृतिक सन्दर्भों को सक्रिय रूप से दोहराते हैं, जिनमें वे स्थित हैं, तो इसका मतलब यह होगा कि हमें अपनी स्कूली शिक्षा के प्रचलित तरीकों (schooling practices) की प्रासंगिकता पर पुनर्विचार करने और विभिन्न प्रकार की समर्थन-प्रणालियों (support systems) की कल्पना करने की ज़रूरत है ताकि एक ऐसे लोकतांत्रिक स्थान का विकास किया जा सके जो विविध प्रकार की वास्तविकताओं को सम्मिलित करे जिससे कि वास्तव में हर बच्चा सीखने में सक्षम हो पाए।

Going to School Alone; Author: Simran Uikey, Illustrator: Kruttika Susarla; Muskaan (2019)

Munnu: A boy from Kashmir; Graphic Novel by Malik Sajad; Fourth Estate (2015)

[1]मुस्कान एक ग़ैर-लाभकारी, ग़ैर-सरकारी संगठन है जो भोपाल, मध्य प्रदेश में हाशिए पर रहने वाले समुदायों के साथ काम कर रहा है।

शिवानी तनेजा 1997 से मुस्कान के माध्यम से शहरी क्षेत्रों में बच्चों और हाशिए के समुदायों के साथ काम कर रही हैं। मुस्कान का मानना है कि शिक्षा को बच्चों के जीवन और वास्तविकताओं से अलग नहीं किया जा सकता है। बच्चों के साथ बातचीत ने कक्षाओं के अन्दर उनके काम और विमुक्त जनजातियों के मुद्दों के बारे में मार्गदर्शन किया है। वे देश में यौन हिंसा और राज्य द्वारा दमन के मुद्दों पर होने वाली प्रतिक्रिया में महिला समूहों के साथ सक्रिय रहती हैं। उनसे muskaan.office@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

पाठ्यचर्या सम्बन्धी हस्तक्षेप के माध्यम से सामाजिक दूरी को पाटना

शुभ्रा चटर्जी

मैं इस लेख की शुरुआत कोलकाता शहर के दक्षिण-पश्चिमी किनारों में स्थित कुछ स्कूलों के साथ किए गए काम के उदाहरण के साथ करूँगी। इस इलाके के आसपास की अनौपचारिक अर्थव्यवस्था काफ़ी मज़बूत है क्योंकि यहाँ पतंग बनाने का काम, ज़री का काम, कढ़ाई इत्यादि की जाती है। बच्चे अक्सर अपनी पारिवारिक आय बढ़ाने के लिए इन कार्यों में लगे रहते हैं। इन परिवारों को प्रतिदिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जिसके कारण शिक्षा को कम प्राथमिकता दी जाती है। बच्चे भी उन स्कूलों में जाने के लिए अनिच्छुक होते हैं जहाँ वे ठीक से तालमेल नहीं बैठा पाते हैं।

सीखने का माहौल बनाना

शिक्षकों का दृष्टिकोण

अगर हम चाहते हैं कि हर बच्चे को सीखने के अवसरों का लाभ मिले तो उसके लिए हमें एक ऐसे स्थान की ज़रूरत होती है जो सीखने में सहायक और उत्साहजनक हो। विशेष रूप से उन बच्चों के लिए जो कई प्रकार की बाधाओं का सामना करते हैं, जैसे कि उन स्कूलों के बच्चे जिनके बारे में मैं बात कर रही हूँ। चूँकि वे प्रवासी परिवारों के बच्चे हैं, इसलिए उनके ठीक से न सीख पाने का मुख्य कारण सामाजिक-भाषाई अवरोध है, क्योंकि स्कूलों में दी जाने वाली शिक्षा का माध्यम बंगाली है। निःसन्देह, घर और स्कूल की भाषा के बीच की खाई सीखने के लिए एक बड़ी बाधा है। लेकिन बच्चों के साथ शिक्षकों की सामाजिक दूरी और विद्यार्थियों की विशिष्ट एवं विभेदित सीखने की ज़रूरतों को प्रभावी ढंग से सम्बोधित न कर पाने की उनकी असमर्थता मुख्य रूप से बच्चों में प्रेरणा के निम्न स्तर के लिए ज़िम्मेदार है।

कक्षा के एक मुख्य घटक के रूप में शिक्षक ही कक्षा के समग्र वातावरण के लिए ज़िम्मेदार होते हैं एवं शिक्षक के व्यक्तित्व के इर्द-गिर्द ही बच्चों का प्राथमिक समाजीकरण और अधिगम होना चाहिए। लेकिन इन स्कूलों में यह बात दिखाई नहीं दी। हम इन बच्चों के सामाजिक सन्दर्भ से परिचित थे। हम इस क्षेत्र में काफ़ी समय से शहर की पुलिस के सहयोग से एक दिलचस्प परियोजना में काम कर रहे थे, जिसमें पुलिस स्टेशनों के अन्दर शिक्षा-केन्द्र स्थापित किए गए हैं। विडम्बना यह है कि पुलिस स्टेशनों के *भीतर* के यह सुरक्षित स्थान बच्चों को एक भयमुक्त और सुरक्षित वातावरण प्रदान करने में सक्षम हो पाए क्योंकि वयस्कों और सम्बन्धित बच्चों के बीच भावनात्मक जुड़ाव और मेलभाव था। इन केन्द्रों में रखे गए हमारे संगठन के शिक्षकों ने देख-रेख करने वालों की भूमिका भी निभाई।

सुरक्षित स्थान

इन केन्द्रों में शिक्षकों ने इस बात का विशेष ध्यान रखा कि बच्चों के मन में अपनत्व का भाव जागे। उनके माता-पिता को लगे कि स्कूल में उनका स्वागत है और वे स्कूल के साथ जुड़ाव महसूस करें। इनमें से अधिकांश बच्चे अपनी भाषाई और/या धार्मिक पृष्ठभूमि के कारण सामाजिक बहिष्करण के सूक्ष्म या प्रत्यक्ष रूपों का सामना करते हैं। उनकी पारिवारिक परिस्थितियों के कारण उनके साथ 'सम्भावित अपराधिता' का कलंक भी जुड़ा हुआ है, क्योंकि शहर के इस हिस्से में अपराध की दर अधिक है। वैसे यहाँ आने वाले बच्चे सीखने के लिए उत्सुक रहते हैं और शायद ही कभी अनुपस्थित होते हैं।

इन इलाकों में बच्चों के साथ अपने काम के माध्यम से हमें यह महसूस हुआ कि अगर अधिगम को प्रभावी बनाना है तो सबसे ज़्यादा ज़रूरी है, चिन्ता-मुक्त व भावनात्मक रूप से सुरक्षित स्थान, जिसकी प्रकृति समावेशी हो। एक ऐसी जगह जहाँ बच्चे बिना किसी डर या झिझक के ख़ुद को अभिव्यक्त कर सकें। इसलिए जब सरकार ने आस-पास के प्राथमिक विद्यालयों को समान प्रकार की सहायता प्रदान करने के लिए हमसे सम्पर्क किया तो हमें बहुत प्रसन्नता हुई।

शिक्षक जानते थे कि इस काम में कई जटिलताएँ पेश आएँगी। हमारी पहली चर्चा में शिक्षकों ने इन जटिलताओं को सम्भालने में अपनी असमर्थता व्यक्त की। वे जानते थे कि भाषा की बाधा के कारण पाठ्यपुस्तक पढ़ाना सही तरीक़ा नहीं था, लेकिन वे यह नहीं जानते थे इसके जाल से कैसे निकला जाए। उन्होंने कहा कि जिस स्तर पर उनके बच्चे हैं, उसकी तुलना में पाठ्यपुस्तकों का स्तर बहुत ऊँचा है। उन्होंने स्वीकार किया कि वे एक ऐसी व्यवस्था का हिस्सा हैं जो बच्चों के *अधिगम* से अधिक *पाठ्यक्रम पूरा* करने को प्राथमिकता देती है। यह स्पष्ट था कि वे ख़ुद को गौण महसूस करते थे जहाँ चीज़ें उनके नियंत्रण में नहीं थीं। स्वायत्तता की कमी और इस वजह से अपने शिक्षकीय दायित्व को न निभा पाने का प्रभाव उन बच्चों पर पड़ा, क्योंकि उनको अपर्याप्त और अयोग्य महसूस कराया जाता था। कक्षाएँ अनालंकृत, अनाकर्षक और बदहाल थीं। अनुपस्थिति बहुत अधिक थी और अनुशासन लागू करना कठिन था।

परिवर्तन करना

कक्षा का परिवर्तन

चूँकि अधिगम की पूर्वशर्त है एक स्नेहिल और सहायक वातावरण, इसलिए यह निर्णय लिया गया कि शिक्षकों की परिवर्तनकारी यात्रा की शुरुआत इसी तरह के स्थान के निर्माण से शुरू की जानी चाहिए। पहला क़दम शिक्षकों और बच्चों द्वारा संयुक्त रूप से कक्षा की सफ़ाई करना था। फिर वे कक्षा की दीवारों को सुन्दर बनाने के लिए कुछ चार्ट और पोस्टर तैयार करने में जुटे। प्रत्येक समूह को एक कार्य सौंपा गया था - एक समूह ने कक्षा के नियमों पर कार्य किया, दूसरे समूह ने एक भावना-मानचित्रण चार्ट तैयार किया, जबकि तीसरे ने एक संख्या-ग्राफ तैयार किया। बच्चों ने काग़ज़ की प्लेटों पर अपने चित्र बनाए और उनके नीचे अपनी पसन्द-नापसन्द व्यक्त करने वाले छोटे-छोटे नोट लिखे। जल्द ही उनकी कक्षा आकर्षक और रंगीन लगने लगी : दीवार पर ख़ुद के किए कार्य देखकर बच्चों को गर्व और अपनेपन का एहसास हुआ।

इसके अलावा ऐसा पहली बार हुआ था कि वे एक साथ बैठकर अपने शिक्षकों के साथ समूह में काम कर रहे थे। अपने चार्ट और पोस्टरों पर काम करते हुए उन्होंने अनौपचारिक रूप से एक-दूसरे के साथ और शिक्षकों के साथ भी बातचीत की। शारीरिक और भावनात्मक रूप से अपने शिक्षकों के क़रीब आने से बच्चों का तनाव कम हुआ और उन्हें सहज रूप से खुलकर बोलने में मदद मिली। वे सक्रिय और उत्साहित थे, फिर भी अनुशासन की कोई कमी नहीं थी जिसका कि शिक्षकों को डर था। हालाँकि इस अनुभव के बाद वे पुनः अपने सामान्य तरीक़े यानी पंक्तियों में बैठने लगे और औपचारिक रूप से बातचीत करने लगे, किन्तु यह छोटा-सा अभ्यास कक्षा के वातावरण में एक सूक्ष्म बदलाव ले आया।

बातचीत के माध्यम से अन्तःक्रिया

अच्छी शुरुआत को बनाए रखने के लिए अब एक ऐसी गतिविधि शुरू करना आवश्यक था जो सम्प्रेषण की बाधाओं को तोड़ सके। चूँकि स्कूल रूढ़िवादी स्थान होते हैं, इसलिए गतिविधि ऐसी होनी चाहिए जो उनके नियमित शिक्षण का हिस्सा हो। हमने महसूस किया कि इसके लिए एक आसान प्रवेश बिन्दु है : *मौखिक भाषा का विकास* - जो पाठ्यचर्या में उल्लिखित एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है लेकिन हमारे स्कूलों में शिक्षक शायद ही कभी इसका पालन करते हैं।

यद्यपि यह सार्वभौमिक रूप से स्वीकार किया जाता है कि अपने विचारों को सही तरह से व्यक्त करने की मौखिक क्षमता (Oracy) साक्षरता की नींव है, लेकिन प्राथमिक विद्यालयों में ध्यान केन्द्रित किया जाता है लिखना एकदम अलग-थलग करके सिखाने पर मानो कि बोलचाल की भाषा से इनका कोई लेना-देना नहीं है।

वार्तालाप भाषा के विकास के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण है - सोच और विचारों का आदान-प्रदान, दूसरों को सुनना कि वे कैसा महसूस करते हैं, क्या अनुभव करते हैं – यह सब सामाजिक और भावनात्मक रूप से समृद्ध करने वाली प्रक्रियाएँ भी हैं। बातचीत के माध्यम से, बच्चों और शिक्षकों दोनों को एक-दूसरे को बेहतर ढंग से समझने में मदद मिलती है। लेकिन शिक्षक को इस तरह की वास्तविक बातचीत करने के लिए अभ्यास करना पड़ता है जिसमें झिझक टूटे और बच्चे केवल सवालों के जवाब देने की बजाय, सही मायनों में बात करें। बात करना अधिगम के प्रमुख कारकों में से एक है लेकिन फिर भी अभी तक शिक्षण के पारम्परिक उपदेशात्मक (didactic) तरीक़े में, कक्षा की बातचीत में शिक्षक ही प्रधान भूमिका निभाते हैं। बच्चों को समवेत स्वरों में या एक शब्द में जवाब देने के अलावा शायद ही कभी अपनी बात व्यक्त करने का मौका दिया जाता है। इसके कारण बच्चे अधिगम के एक निष्क्रिय माहौल के आदी होते जाते हैं, जिसका उनकी प्रेरणा और उपलब्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

वास्तविक जीवन के उदाहरण

केस स्टडी 1

हम जिन शिक्षकों के साथ काम कर रहे थे, उनमें से नन्दिता नामक एक शिक्षिका ने अपनी तीसरी कक्षा के बच्चों के साथ बातचीत शुरू करने का फैसला किया। शुरू में उन्हें अपनी 'शिक्षिका' वाली आवाज़ को छोड़कर बोलचाल के लहजे में बच्चों से बात करने में दिक्क़त हुई। फिर उन्होंने एक सरल-सी गतिविधि के बारे में सोचा।

नन्दिता ने कुछ पर्चियाँ बनाईं, जिनमें बातचीत के कुछ अनिर्दिष्ट से विषय लिखे जैसे – कंकड़, दुकान, मिठाइयाँ, गली वगैरह और बच्चों से जोड़े में आकर पर्ची उठाने के लिए कहा। फिर उनसे कहा कि वे अपने साथी के साथ इस विषय पर चर्चा करें और फिर कक्षा को उसके बारे में बताएँ। प्रारम्भ में बच्चों को भी अपना लहजा बदलने में समस्या हुई। वे अजीब-सा महसूस कर रहे थे और कक्षा की बातचीत में इस्तेमाल की जाने वाली अस्वाभाविक भाषा का उपयोग करने की कोशिश कर रहे थे। लेकिन जब एक बच्चे ने इस शैली से हटकर कहा

कि उसके चाचा की आलू-चाट की दुकान है तो जैसे सारी रुकावटें अचानक टूट गईं और सभी ने सहजता से जवाब देना और बातचीत करना शुरू कर दिया और शिक्षक भी निर्बाध रूप से बातचीत में शामिल हो गए।

कक्षा के वातावरण में जो परिवर्तन आया वह स्पष्ट रूप से नज़र आ रहा था। बच्चे वास्तव में गतिविधि में तल्लीन हो गए थे तथा रुकना नहीं चाहते थे। जानकारी का प्रवाह एक तरफा नहीं रहा। बच्चों ने भी अपने अनुभवों के आधार पर बातें साझा कीं। बाद में नन्दिता ने बताया कि इस साधारण-सी गतिविधि के माध्यम से उन्हें बच्चों के निजी जीवन के बारे में बहुत कुछ पता चला, जिसके बारे में उन्हें महीनों तक उनके साथ रहने के बावजूद नहीं पता था। इस प्रकार *वास्तविक बातचीत* केवल भाषा-विकास के लिए ही नहीं बल्कि शिक्षकों के लिए भी एक ऐसा आधार है जिसकी सहायता से वे बच्चों की रुचियों और उनके सामाजिक सन्दर्भों के बारे में बेहतर रूप से समझ सकते हैं।

केस स्टडी 2

चूँकि पढ़ने और लिखने पर ज़ोर देना अनिवार्य है, इसलिए नन्दिता ने लेखन के लिए एक अलग दृष्टिकोण आज़माने का फैसला किया। बच्चों को अपनी ड्राइंग के विस्तार के रूप में चीज़ों के बारे में लिखने के लिए कहना। पहले बच्चों से कहा गया कि वे अपनी मर्ज़ी से कोई भी चित्र बनाएँ। जब उन्होंने चित्र बना लिया तो उनसे अपने चित्र के बारे में और उस विषय या थीम को चुनने का कारण बताने के लिए कहा। अब तो बच्चे वास्तव में सोचने लगे और नन्दिता ने सवाल पूछकर इस प्रक्रिया में उनकी मदद की और इसे आगे बढ़ाया।

उसके बाद उन्होंने बच्चों से कहा कि वे अपनी चर्चा के बारे में लिखें। साँचे को तोड़ना मुश्किल था क्योंकि अधिकांश बच्चे वही सामान्य से चित्र बनाने लग गए जैसे - एक घर जिसके पीछे पहाड़ थे और आसमान में सूरज। लेकिन कुछ ने मौलिकता दिखाई। एक बच्चे ने एक झरने की तस्वीर बनाई थी और शिक्षक को बताया था कि कैसे उसके पिता उसे एक झरना दिखाने ले गए थे। एक अन्य बच्चे ने एक उल्लू का चित्र बनाया और कहा कि उसे लगता है कि यह सबसे सुन्दर पक्षी है। दूसरे बच्चे ने गाय का चित्र बनाया जिसे एक व्यक्ति खींचकर ले जा रहा था, उसने कहा कि यह दृश्य उसने अपने घर के पास देखा था।

इसके पहले सभी बच्चे स्कूल की भाषा के साथ जूझ रहे थे। नन्दिता इस बात से हैरान थीं कि इस सरल गतिविधि ने कैसे इतनी भाषा का निर्माण किया और सभी बच्चों को अपने डर और झिझक को दूर कर लिखना शुरू करने के लिए प्रेरित किया। वे ऐसा कर सके क्योंकि उन्हें अपने लेखन से जुड़ाव महसूस हुआ क्योंकि यह उनकी आन्तरिक भावनाओं और अनुभवों से निकला था।

अँग्रेज़ी सीखने के डर पर काबू पाना

अँग्रेज़ी पढ़ाना शिक्षकों के लिए एक अन्य चुनौतीपूर्ण कार्य था, ख़ासकर इन बच्चों को पढ़ाना। एक तो अँग्रेज़ी भाषा का उपयोग करने में ख़ुद शिक्षकों में आत्म-विश्वास की कमी थी, दूसरे बच्चों का इस भाषा के साथ अधिक सम्पर्क नहीं था; अतः उन्हें पाठ पढ़ाने में बहुत दिक्क़त पेश आई क्योंकि पाठों का स्तर बच्चों की क्षमता की तुलना में बहुत ऊँचा था। यह चौड़ी खाई उनके मन में धीरे-धीरे अँग्रेज़ी का डर पैदा कर रही थी, लेकिन फिर भी वे इसे सीखना चाहते थे क्योंकि यह उनकी 'आकांक्षा भाषा' है।

हमें लगा कि इस डर को दूर करने के लिए एक रणनीति के रूप में संगीत और कविताएँ ठीक रहेंगी। संगीत किसी नई भाषा को सीखने-सिखाने का एक आनन्दप्रद तरीक़ा है क्योंकि इसमें भाषा की कोई बाधा नहीं है। जब हमने अँग्रेज़ी की कविताओं जैसे *When you're happy and you know it, clap your hands or In the morning, in the morning, I brush my teeth everyday* – को अभिनय के साथ करवाया तो एक सुरक्षित, परिचित और सुखद वातावरण का निर्माण करने में मदद मिली। कविताएँ गाते-गाते *समग्र शारीरिक अनुक्रिया (टोटल फिज़िकल रिस्पान्स – टीपीआर)* तकनीक का उपयोग करने से बच्चों को बिना सचेत प्रयास के नए शब्दों के साथ-साथ भाषा की कुछ संरचनाओं को सीखने में मदद मिली। किसी अनुवाद या स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं थी। बच्चों ने अभिनय से अर्थ का अनुमान लगा लिया था और जो कुछ भी कहा जा रहा था वे उसके साथ आसानी से जुड़ सके। शिक्षकों को यह देखकर ख़ुशी हुई कि उनके विद्यार्थियों ने सीधे रूप में पढ़ाए बिना अनायास ही काफ़ी अँग्रेज़ी शब्दावली का अधिग्रहण कर लिया था।

किसी भी नए अधिगम को आत्म-सात करने के लिए सुदृढ़ीकरण महत्त्वपूर्ण है। इसलिए हमने कुछ खेल और संरचित बातचीत सत्र आयोजित किए, जिनमें इन नए शब्दों और संरचनाओं का उपयोग किया गया था। उदाहरण के लिए, *Simon Says* खेल में *clap your hands*, *stamp your feet, shake your leg* जैसे शब्दांश इस्तेमाल किए गए। बातचीत के लिए, What *do you do in the morn-*

ing? वाक्य संरचना का इस्तेमाल किया गया था - और बच्चे कविता की उन पंक्तियों का उपयोग करके आसानी से जवाब दे पाए जो उन्होंने तभी सीखी थी जैसे *I brush my teeth, I comb my hair, I take my bath* आदि।

कविताओं के *दोहराव* वाले पैटर्न, जिसमें संरचना को बरकरार रखते हुए प्रत्येक पंक्ति में कुछ नए शब्दों से परिचित करवाया जाता है, के कारण बच्चों को आत्म-विश्वास के साथ और बिना किसी झिझक के भाषा का उपयोग करने में आसानी हुई। शिक्षकों ने देखा कि कविताओं को दोहराने से बच्चों को भाषा के अवरोधों को दूर करने में मदद मिली। फिर दृष्टि-शब्दावली विकसित करने के लिए कुछ शब्दों को 'शब्द दीवार' पर लिखा गया जैसे *hands, feet, teeth, hair* इत्यादि। कविताओं और खेल ने बच्चों को भाषा की ध्वनियों से परिचित कराने और शब्दों के उच्चारण में मदद की; इससे वे *अक्षर-ध्वनि सम्बन्ध* स्थापित करने के लिए तैयार हो पाए जो कि उनके अधिगम का अगला क़दम था।

इस प्रकार किसी नई भाषा को सीखने के सभी तीन प्रमुख तत्वों यानी - नए शब्द सीखना, नई संरचनाएँ सीखना और अक्षर-ध्वनि सम्बन्ध सीखना को सम्भव बनाने के लिए ऐसे तरीक़ों का उपयोग किया गया जिसमें बच्चों को बेहद आनन्द आया। भय और चिन्ता को दूर करके भावात्मक फिल्टर(affective filter) को कम करने से अनुकूल अधिगम सजगता के निर्माण में मदद मिली।

अधिगम के क़दम

यह एक ऐसी पहल का उदाहरण है जिसे अभी शुरू किया गया है। यह इस आधार पर डिज़ाइन किया गया है कि अगर अधिगम को बच्चों के जीवन के लिए प्रासंगिक बनाया जाए; अगर उसे समानुभूति और समझ के साथ पेश किया जाए; और अगर पूरी प्रक्रिया में शिक्षक की भागीदारी हो तो सभी बच्चे सीख *सकते* हैं और *सीखेंगे*।

कक्षा की अन्तःक्रिया में बदलाव लाने के लिए जिन संज्ञानात्मक रणनीतियों का इस्तेमाल किया गया, वे हमें पिछले तीस वर्षों में विविध भौगोलिक और सामाजिक सन्दर्भों में, हाशिए के बच्चों के साथ पूरक शिक्षा केन्द्रों या समुदाय-आधारित शिक्षा शिविरों या सरकारी स्कूलों में कक्षाओं की औपचारिक संरचना के भीतर काम करने के अपने अनुभव से प्राप्त हुई हैं। इन रणनीतियों की विशेषताएँ इस प्रकार हैं :

- भाषा के विकास और उच्चतर संज्ञानात्मक कौशल, सामाजिक और भावनात्मक विकास के लिए कक्षा की चर्चाओं को एक महत्त्वपूर्ण उपकरण के रूप में बढ़ावा देना।
- स्वामित्व निर्माण और एक स्नेहिल एवं अनुकूल वातावरण बनाने के लिए बच्चों और शिक्षकों द्वारा संयुक्त रूप से तैयार की गई कलाकृतियों को प्रदर्शित करना।
- संगीत, खेल, कहानियों और कविताओं के द्वारा अधिगम के बहु-संवेदी चैनलों को सक्षम करना।
- यह गतिविधियाँ सीखने के वांछित परिणामों को प्राप्त करने में सहायक होती हैं और साथ ही बच्चों और शिक्षकों, दोनों ही के लिए बहुत मज़ेदार होती हैं। वे भय और चिन्ता को दूर करने और विद्यार्थियों में सीखने की सजगता के निर्माण में भी सहायक हैं।

एक व्यापक योजना के तहत उठाए गए इन सरल और छोटे कदमों से शिक्षकों और बच्चों के लिए दो बहुत महत्त्वपूर्ण परिणाम सामने आए। एक, शिक्षकों ने महसूस किया कि *पाठ्यपुस्तकों के बिना* भी अधिगम के वांछित परिणामों को प्राप्त करना सम्भव है। जब उन्होंने अधिगम के कुछ परिणामों का मिलान अपनी उन शैक्षणिक प्रक्रियाओं के साथ किया जिन्हें उन्होंने हाल ही में आज़माया था तो वह उनके लिए एक नवीन अंतर्दृष्टि प्रदान करने वाला 'अहा' क्षण था। दूसरा, और शायद अधिक महत्त्वपूर्ण परिणाम वह बदलाव था जो इस तरह की गतिविधियों से उनकी कक्षा के वातावरण में आया था - भावनात्मक मौसम में एक निश्चित रूप से बदलाव आया था। निःसन्देह, यह सिर्फ़ एक छोटी-सी शुरुआत थी और जब तक पूरी व्यवस्था की सच्चाई अपरिवर्तित रहती है, तब तक नन्दिता जैसे शिक्षकों को एक लम्बा रास्ता तय करना होगा। लेकिन यह भी सच है कि हज़ारों मील की यात्रा पहले क़दम के साथ ही शुरू होती है - वह क़दम जो नन्दिता ले चुकी हैं।

शुभ्रा चटर्जी 1986 से स्कूली शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं। उन्होंने एक शिक्षक, करिकुलम डेवलपर, प्री-स्कूल इनक्यूबेशन विशेषज्ञ, शिक्षक-प्रशिक्षक और शिक्षक तैयारी कार्यक्रमों के डिज़ाइनर के रूप में कार्य किया है। उन्होंने विभिन्न सामाजिक-आर्थिक क्षेत्रों में कार्य किया है। वे विक्रमशिला की संस्थापक-निदेशक हैं, जो एक ऐसा संगठन है, जो देश भर में शैक्षिक गुणवत्ता और समता के मुद्दों पर काम करता है। इस संगठन की यात्रा *ग्रामीण* एनजीओ द्वारा संचालित प्री-स्कूल को शिक्षक सहायता प्रदान करने से शुरू हुई। यह संगठन जिन बच्चों के लिए कार्य करता है उनके विकास के साथ-साथ इसका ख़ुद का भी विकास हुआ है और अब यह भारत के कई राज्यों में K-10 स्तर पर काम करता है। हाल ही में शुभ्रा चटर्जी ने पश्चिम बंगाल, जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश एवं असम में ICDS प्रणाली के लिए ECE पाठ्यक्रम को फिर से लिखने में तकनीकी विशेषज्ञता प्रदान की है। उनकी रुचि के क्षेत्रों में से एक है 'प्रारम्भिक वर्षों में भाषा अधिगम'। उनसे shubhra.chatterji@vikramshila.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

लड़कियों की शिक्षा में मिशनों की भूमिका

श्रीजिता चक्रवर्ती

सरकार ने सभी के लिए स्कूली शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए दृढ़ प्रयास किए हैं लेकिन इसके बावजूद, छह से तेरह साल की उम्र के 119 लाख बच्चे स्कूल नहीं जाते हैं। इनमें से ज़्यादातर हाशिए के समुदायों से हैं। प्रतिबन्धित भौगोलिक गतिशीलता के कारण मुस्लिम समुदाय में अधिकांश लड़कियों को शिक्षा के पर्याप्त अवसर नहीं मिले हैं, हालाँकि अब यह स्थिति माता-पिता के रवैये में बदलाव के कारण परिवर्तित हो रही है। अब माता-पिता को शिक्षा के लाभों का एहसास हो रहा है जैसे लड़कियों के लिए शादी की बेहतर सम्भावनाएँ और अगली पीढ़ी के भी शिक्षित होने की सम्भावना; इसलिए माता-पिता अब गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए पैसा ख़र्च करने को तैयार हैं। सार्वजनिक शिक्षा की ख़राब गुणवत्ता ने एक निजी बाज़ार को जन्म दिया है जहाँ आवासीय संस्थान (जिन्हें *मिशन* कहा जाता है) लड़कियों की आवाजाही से जुड़ी चुनौतियों का समाधान प्रदान करते हैं।

खदीजतुल कुबरा गर्ल्स मिशन (केकेजीएम) एक ऐसा संस्थान है जो विशेष रूप से लड़कियों की आवश्यकताओं का ध्यान रखता है, अन्यथा शायद कई लड़कियाँ स्कूल छोड़ चुकी होतीं। जैसा कि छात्राएँ बताती हैं, केकेजीएम में एक ही स्थान पर सब कुछ उपलब्ध कराया जाता है और यही बात इसे अन्य संस्थानों से अलग बनाती है। एक मामूली-से मासिक शुल्क में ट्यूशन, भोजन और आवास की व्यवस्था की जाती है। नियमित पाठ्यक्रम के अलावा केकेजीएम में डिजिटल प्रौद्योगिकी का उपयोग करके छात्राओं के अनुभव को बढ़ाने का भी प्रयास किया जाता है। एक ग़ैर-लाभकारी संगठन, ऐन फाउण्डेशन के साथ साझेदारी करते हुए यह स्काइप पर अँग्रेज़ी की वर्चुअल कक्षाओं की सुविधा भी उपलब्ध कराता है। फाउण्डेशन के स्वयंसेवी शिक्षकगण लड़कियों की रोज़गार क्षमता को बेहतर बनाने के लिए पढ़ने, लिखने और संवादात्मक अभ्यासों से सम्बन्धित बहुत सारी कक्षाएँ आयोजित करते हैं। शिक्षकों के साथ नियमित रूप से बातचीत करने से लड़कियों को बाहरी दुनिया की जानकारी मिलती है, जिससे उनके ज्ञान के क्षितिज का विस्तार होता है।

निजी मिशन इतने लोकप्रिय क्यों हैं?

शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम के कारण स्कूल न जाने वाले बच्चों की संख्या में काफ़ी कमी आई है, विशेषकर 14 वर्ष तक के बच्चों की संख्या में। 2014 में प्राथमिक विद्यालय-आयु-वर्ग के बच्चों में से 6.4% और निम्न माध्यमिक विद्यालय-आयु-वर्ग के बच्चों में से 5.7% बच्चे स्कूल से बाहर थे। *सभी के लिए स्कूली शिक्षा* प्राप्त करने के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति के बावजूद, वृहद जनसंख्या के कारण, 119 लाख बच्चे (उम्र 6 से 13) स्कूल से बाहर हैं।[i]

मुस्लिम बच्चों में स्कूल का बहिष्करण काफ़ी अधिक है और दोनों आयु समूहों में बहिष्करण की दर, अन्य धर्मों के बच्चों की तुलना में कहीं अधिक है। निम्न माध्यमिक आयु के बच्चों में बहिष्करण दर 9.1% है, जो राष्ट्रीय औसत से कहीं अधिक है। इसमें वित्तीय बोझ की प्राथमिक भूमिका है - अक्सर शिक्षा की लागत और काम करने के अवसर गंवाने की लागत मिलकर इन बच्चों को स्कूल से बाहर कर देती है।

ऐतिहासिक रूप से, लड़कों की तुलना में लड़कियों के स्कूल छोड़ने की दर अधिक है, जो प्राथमिक स्तर के बाद बढ़ जाती है। वित्तीय बोझ के अलावा, कुछ अन्य कारक लड़कियों को बहुत प्रभावित करते हैं। दूसरे क्षेत्रों की तुलना में मुस्लिम इलाक़ों में कम स्कूल हैं। लड़के अपनी इच्छा के अनुसार शिक्षा प्राप्त करने के लिए दूर तक यात्रा कर सकते हैं, लेकिन लड़कियाँ ऐसा करने में असमर्थ हैं। अगर स्कूल सुलभ होते भी हैं, तो ख़राब बुनियादी ढाँचा अक्सर एक बाधा बन जाता है - एक तिहाई ग्रामीण स्कूलों में लड़कियों के लिए शौचालय नहीं हैं, जबकि एक चौथाई से अधिक में किसी भी प्रकार के उपयोग में लाने योग्य शौचालयों का अभाव है।[ii]

समस्या सिर्फ स्कूलों तक पहुँच की नहीं बल्कि उससे कहीं ज़्यादा है। जो छात्राएँ निजी ट्यूशन के पैसे दे सकती हैं, वे अपने स्कूली शिक्षण की भरपाई करने के लिए ट्यूशन की कक्षाओं में जाती हैं। जिस कारण से मुस्लिम बहुल इलाक़ों में स्कूलों की कमी होती है, उसी कारण से इन क्षेत्रों में निजी ट्यूटर्स की भी कमी है - समुदाय में साधारणतया निम्न शिक्षा-स्तर। मुस्लिम लड़के ट्यूटर से पढ़ने के लिए बहुत दूर के इलाक़ों तक भी जा सकते हैं, लेकिन लड़कियों को इस प्रकार से आने-जाने का अवसर बहुत कम मिलता है।

लेकिन अब माता-पिता के बदलते रवैये के कारण लिंग सम्बन्धी अन्तर कम हो रहा है। वे अब अपनी लड़कियों को शिक्षित करने के लिए उत्सुक हैं क्योंकि इससे उनकी शादी की सम्भावनाएँ बेहतर हो जाती हैं, भविष्य की पीढ़ियों को शिक्षा प्रदान करने की सम्भावनाएँ बढ़ती हैं और विधवा होने की

स्थिति में आत्म-निर्भरता की भावना पैदा करती है।[iii] माता-पिता गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए पैसा ख़र्च करने को तैयार हैं और जहाँ सार्वजनिक स्कूलों की कमी है, वहाँ एक निजी बाज़ार उभरता है। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल में मुफ़्त शिक्षा प्रदान करने के बेहतरीन सरकारी प्रयासों के बावजूद कई ऐसे निजी संस्थान या मिशन खुल गए हैं जो महँगी शिक्षा प्रदान करते हैं और उनमें सरकारी स्कूलों की तुलना में कम योग्यता प्राप्त शिक्षक हैं। यह संस्थान किसी भी शैक्षिक बोर्ड के साथ पंजीकृत नहीं हैं और इसलिए परीक्षा आयोजित नहीं कर सकते हैं। छात्राओं का नामांकन भले ही पड़ोस के किसी पंजीकृत स्कूल में किया गया हो लेकिन वे मिशन में ही रहती हैं, वहीं की कक्षाओं में पढ़ती हैं और केवल परीक्षा देने के लिए पंजीकृत स्कूल जाती हैं।

इनमें से कुछ मिशन, जैसे केकेजीएम, विशेष रूप से मुस्लिम लड़कियों की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हैं अन्यथा शायद इनमें से कई लड़कियाँ स्कूल छोड़ चुकी होतीं।

हमारा अनुभव

पश्चिम बंगाल में हावड़ा ज़िले के बैनन गाँव में स्थित केकेजीएम की स्थापना 2014 में हुई थी और इसे मुख्य रूप से खदीजतुल कुबरा एजुकेशन ट्रस्ट द्वारा फंड किया गया है। स्कूल में कक्षा 6 से 12 में क़रीब 500 छात्राएँ हैं, जिनमें से अधिकांश निम्न आय वाले परिवारों से हैं। कुछ अनाथ हैं। यह छात्राएँ पश्चिम बंगाल के विभिन्न ज़िलों से आती हैं और उन्हें प्रवेश-परीक्षा के माध्यम से दाखिला दिया जाता है; परीक्षा में उनके प्रदर्शन और उनकी वित्तीय स्थिति के आधार पर उनके स्कूल की फ़ीस तय की जाती है। जो छात्राएँ फ़ीस दे सकती हैं, वे 4000 रु. का मासिक शुल्क देती हैं, जिसमें ट्यूशन, भोजन और आवास शामिल हैं। ज़रूरतमन्द छात्राओं के लिए, जिनकी संख्या काफ़ी है, इस शुल्क पर राहत या छूट दी जाती है। कुछ शिक्षाविदों, परोपकारी और अन्य शुभचिन्तकों से मिले दान से यह सम्भव हो पाता है।

स्कूल में शिक्षा का माध्यम बंगाली है और यहाँ धार्मिक अध्ययन के साथ-साथ माध्यमिक और मदरसा पाठ्यक्रम दोनों का अनुसरण किया जाता है। नियमित कक्षाओं के अलावा केकेजीएम में उन छात्राओं के लिए उपचारात्मक कक्षाएँ भी आयोजित की जाती हैं जिन्हें पढ़ाई में किसी प्रकार की दिक्क़त पेश आ रही हो। दसवीं कक्षा की बोर्ड परीक्षाओं के बाद यह स्कूल अपनी छात्राओं को संस्थान में माध्यमिक स्तर का अध्ययन जारी रखने के लिए प्रोत्साहित करता है और इस तरह काफ़ी प्रभावी रूप से माध्यमिक स्तर पर ड्रॉप-आउट दरों पर अंकुश लगाता है।

यह स्कूल किसी भी अन्य स्कूल के समान ही अच्छे साधनों से लैस है, जिसमें कक्षाएँ, विज्ञान और कंप्यूटर प्रयोगशालाएँ, पुस्तकालय, प्रार्थना कक्ष और खेल के लिए एक छोटा-सा मैदान है। रहने के कमरे काफ़ी बड़े हैं, और एक कमरे में क़रीब तीस लड़कियाँ रहती हैं। दिन में चार बार भोजन दिया जाता है। दिन में पाँच बार नमाज़ अदा की जाती है। परिवार के लोग हफ़्ते में एक बार लड़कियों से मिलने आते हैं। परिसर में मोबाइल फोन रखने की अनुमति नहीं है।

यह संस्थान इतने लोकप्रिय इसलिए हैं क्योंकि यहाँ आवासीय सुविधा है जिससे लड़कियों की प्रतिबन्धित आवाजाही से उत्पन्न कई समस्याएँ दूर हो जाती हैं। इन स्कूलों में महिला शिक्षकों का अनुपात भी अधिक है, जिससे वातावरण लड़कियों के अनुकूल हो जाता है। एक इलाक़े से दूसरे इलाक़े में महिलाओं की आवाजाही पर रोक और शिक्षा व स्वास्थ्य के अलावा अन्य व्यवसायों को अपनाने पर प्रतिबन्धों के कारण उन स्थानों में स्थानीय शिक्षित महिलाओं के एक समूह का निर्माण होता है जहाँ पर लड़कियों के माध्यमिक स्तर के स्कूल हैं (अंद्राबी, दास और ख्वाजा, 2013)।

यहाँ भी यही सिद्धान्त लागू होता है। कुछ महिला शिक्षिकाएँ परिसर में ही रहती हैं और अन्य आस-पास के इलाक़ों से आती हैं। अतः यहाँ शिक्षकों की अनुपस्थिति शून्य है, जबकि सार्वजनिक स्कूलों में शिक्षा की ख़राब गुणवत्ता का एक महत्त्वपूर्ण कारण शिक्षकों की अनुपस्थिति है। केकेजीएम की अधिकांश छात्राएँ शिक्षक बनने की इच्छा रखती हैं, जिसकी वजह से हम आशा करते हैं कि मुस्लिम समुदायों में और अधिक निजी स्कूलों की स्थापना होगी।

अन्य विशेषताएँ

पाठ्येतर मदद

अपनी छात्राओं को सीखने का समग्र अनुभव प्रदान करने के लिए, केकेजीएम में पाठ्यक्रम के साथ-साथ और भी विभिन्न गतिविधियाँ शामिल की गई हैं। कंप्यूटर की कक्षाओं में टाइपिंग करने, पावरपॉइंट प्रेज़ेंटेशन बनाने और ईमेल करने जैसे बुनियादी कार्यों में लड़कियों को प्रशिक्षित किया जाता है। शारीरिक प्रशिक्षण कक्षाएँ भी नियमित रूप से आयोजित की जाती हैं, जिसमें लड़कियाँ बैडमिंटन या कबड्डी खेलती हैं या योग सीखती हैं। संस्थान में वार्षिक खेल-दिवस भी मनाया जाता है जिसमें विभिन्न प्रकार की दौड़ें और खेल आयोजित किए जाते हैं। कला और शिल्प को प्रोत्साहित किया जाता है, लड़कियों की रुचि के हिसाब से चित्रकला, सिलाई और क्रोशिया की कक्षाएँ चलाई जाती हैं। कभी-कभी यह स्कूल स्थानीय स्वास्थ्यकर्मियों को आमंत्रित करता है जो प्राथमिक चिकित्सा और बुनियादी नर्सिंग कौशल में लड़कियों को प्रशिक्षित करते हैं।

इनमें से कुछ गतिविधियाँ कक्षाओं की समाप्ति के बाद शाम को छात्राओं को व्यस्त रखती हैं। पुस्तकालय हर समय खुला रहता है, जिसमें 1500 से अधिक क़िताबें हैं। इन पुस्तकों में पाठ्यपुस्तकें और उपन्यास या कहानियों की पुस्तकें हैं और यह अधिकतर बंगाली में हैं। इनमें से लगभग 200 पुस्तकें अँग्रेज़ी में भी हैं। टीवी, मोबाइल और अन्य किसी प्रकार की व्यस्तताओं के न होने के कारण छात्राएँ शाम को या अपने ख़ाली समय में अक्सर पढ़ने या अध्ययन का कार्य करती हैं।

भारत में शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के लिए डिजिटल तकनीक की सम्भावानओं पर काफ़ी ध्यान दिया जा रहा है; केकेजीएम भी इस दिशा में बहुत पीछे नहीं है। अपने सादे बुनियादी ढाँचे के बावजूद, केकेजीएम वर्चुअल अँग्रेज़ी कक्षाओं के माध्यम से अपने नियमित पाठ्यक्रम के संवर्धन का प्रयास करता है। हालाँकि स्कूल में अँग्रेज़ी द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाई जाती है, लेकिन छात्राएँ इसका उपयोग करने में सहज नहीं हैं। उन शिक्षिकाओं और शिक्षित स्थानीय महिलाओं की भूमिका यहाँ महत्त्वपूर्ण हो जाती है जिन्होंने ख़ुद अँग्रेज़ी रटकर सीखी थी।

ऐन फाउण्डेशन

केकेजीएम ने अपने स्कूल में मौजूद इस कमी को स्वीकारा और रोज़गार के लिए अँग्रेज़ी भाषा के महत्त्व को पहचानते हुए एक ग़ैर-लाभकारी संगठन, ऐन फाउण्डेशन के साथ भागीदारी की ताकि इस अन्तर को पाटा जा सके। यह फाउण्डेशन वैश्विक स्तर पर, स्कूलों और अनाथालयों के वंचित बच्चों और युवाओं के लिए अँग्रेज़ी और कंप्यूटर की ऑनलाइन कक्षाएँ संचालित करता है। सफल युवा पेशेवर, धीरे-धीरे इस बात के प्रति जागरूक हो रहे हैं कि समाज से उन्हें जो कुछ मिला है उसे चुकाने में वे क्या भूमिका निभा सकते हैं। लेकिन अक्सर समय या भौगोलिक बाधाओं के कारण ऐसा कर पाने में मुश्किलें पेश आती हैं। ऐन फाउण्डेशन ने इन बाधाओं को प्रभावी ढंग से दूर किया। यह दुनिया में कहीं भी रह रहे किसी उत्साही स्वैच्छिक कार्यकर्ता या वालंटियर को ढूँढ़ता है और उसका सम्पर्क अपने किसी भागीदार संस्थान से करा देता है।

केकेजीएम में फाउण्डेशन द्वारा विभिन्न कक्षाओं के लिए हर दिन एक घण्टे की कक्षाएँ चलाई जाती हैं। केकेजीएम में एक कक्षा में लगभग 50 छात्राएँ हैं; प्रत्येक कक्षा को 10-12 छात्राओं के छोटे समूहों में विभाजित किया जाता है और उनके लिए एक वालंटियर निर्धारित किया जाता है। अधिकतर वालंटियर महिलाएँ हैं जो बंगाली भाषा की अच्छी जानकार हैं और वे अमरीका, ब्रिटेन, जर्मनी, कनाडा और बांग्लादेश सहित दुनिया के कई देशों में रहती हैं। प्रत्येक समूह को सप्ताह में लगातार दो दिन एक घंटे के लिए पढ़ाया जाता है, जिसमें सप्ताहान्त भी शामिल है। कक्षाएँ शाम को आयोजित की जाती हैं ताकि उनके नियमित अध्ययन में बाधा न पड़े। कक्षाएँ स्काइप पर आयोजित की जाती हैं, जिसमें केकेजीएम की एक दर्जन लड़कियों के सामने एक लैपटॉप रखा हुआ होता है। केकेजीएम की ओर से एक शिक्षक कक्षा को सहायता प्रदान करता है। यदि कोई ट्यूटर कक्षा लेने के लिए उपलब्ध न हो तो यह शिक्षक ऐन फाउण्डेशन के कार्यक्रम समन्वयक को सूचित करते हैं ताकि वे किसी दूसरे ट्यूटर की व्यवस्था कर सकें। जब विकल्प भी उपलब्ध न हो तो ऐसी स्थिति से निपटने के लिए ट्यूटर अपने पास वृत्तचित्रों या लघु फिल्मों का संग्रह तैयार रखते हैं और केकेजीएम के सुगमकर्ता के साथ वीडियो के लिंक साझा करते हैं ताकि वे इन्हें कक्षा में दिखा सकें।

इन कक्षाओं में पढ़ने, लिखने और संवाद सम्बन्धी कई अभ्यास करवाए जाते हैं जिन्हें ट्यूटर पहले से ही तैयार करके रखते हैं। अनुभव से पता चला है कि लड़कियाँ पढ़ने और लिखने में तो काफ़ी अच्छा प्रदर्शन करती हैं, लेकिन धाराप्रवाह बोलने में उन्हें दिक्क़त होती है। प्रारम्भिक बाधा तो उनकी झिझक है, जिसका कारण है अँग्रेज़ी बोलने में आत्म-विश्वास की कमी। इसे दूर करने के लिए, उनके जोड़े बनाए जाते हैं और मिलकर बोलने के लिए कहा जाता है। जब ट्यूटर प्रत्येक छात्रा की क्षमताओं का आकलन करने के लिए कक्षा के साथ पर्याप्त समय बिता लेते हैं तो वे कमज़ोर छात्राओं के साथ बेहतर प्रदर्शन करने वाली छात्राओं के जोड़े बनाती हैं। प्रमाणों से पता चला है कि ऐसा करने से कमज़ोर छात्रा में काफ़ी सुधार आता है और मजबूत छात्रा का अच्छा प्रदर्शन जारी रहता है।

उनके आत्म-विश्वास को और अधिक बढ़ावा देने के लिए ट्यूटर उन्हें सामान्य, रोज़मर्रा की बातचीत के माध्यम से सहज बनाने की कोशिश करते हैं, जैसे कि किसी नए व्यक्ति को अपना परिचय देना या अपनी रुचियों पर चर्चा करना। वे परिदृश्य-आधारित बातचीत का भी अभ्यास करती हैं, जैसे कि जब वे किसी दुकान में जाती हैं तब ख़ुद को व्यक्त करना या पुलिस से अपराध की रिपोर्ट करना। स्पष्ट संवाद करते हुए लोगों के वीडियो देखना भी फलदायी साबित हुआ है। जब अभ्यासों को खेल के रूप में करवाया जाता है या जब उन्हें नियमित रूप से ग्रेड दिए जाते हैं और उत्तम प्रयासों की सराहना की जाती है तो प्रदर्शन बेहतर होता है।

वास्तव में लड़कियों के लिए इन कक्षाओं की अहमियत केवल अँग्रेज़ी सीखने से कहीं ज़्यादा है। इन कक्षाओं के कारण इन लड़कियों को हर हफ़्ते, कुछ घण्टे इन प्रतिबन्धित और सख़्त परिस्थितियों से बाहर निकलने का मौका मिलता है। यह कक्षाएँ उन्हें बाहरी दुनिया में झाँकने का अवसर देती हैं, वह भी ऐसी जो उनकी दुनिया से बहुत अलग है। यह ट्यूटर - सफल युवा महिलाएँ - लड़कियों में आशा की भावना जगाती हैं, एक

ऐसी आशा जो उन्हें तमाम विपरीत परिस्थितियों के बावजूद नई ऊँचाइयों पर पहुँचने की आकांक्षा रखने में मदद करती है।

यहाँ का वातावरण कई लोगों को घुटनभरा लग सकता है, लेकिन केकेजीएम में छात्राएँ काफ़ी आनन्दपूर्वक रहती हैं। भले ही उन्हें अपने परिवारों से दूर रहना पड़ता है और अपने सभी काम ख़ुद करने पड़ते हैं, पर वे अपनी सहेलियों के साथ रहने का आनन्द लेती हैं - एक ऐसी साधारण-सी ख़ुशी जिससे शायद वे वंचित रह जातीं, यदि घर पर ही रहतीं।

भविष्य पर एक नज़र

2016 से, केकेजीएम से पढ़कर निकली छात्राएँ अधिक संख्या में उच्च शिक्षा प्राप्त कर रही हैं। स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में बहुत-सी लड़कियाँ दाख़िला लेती हैं - कुछ कोलकाता और बेंगलूरु में नर्सिंग का कोर्स करती हैं, कुछ फार्मेसी का और कुछ-एक लड़कियाँ एमबीबीएस की पढ़ाई भी करती हैं। अन्य लोकप्रिय पाठ्यक्रमों में क़ानून, इंजीनियरिंग, प्रबन्धन और विज्ञान एवं मानविकी में विभिन्न स्नातक पाठ्यक्रम शामिल हैं। केकेजीएम के निदेशक श्री जनाब अली मोल्लाह के अनुसार, वर्तमान में, संस्थान से पढ़कर निकली छात्राओं में से लगभग 35% छात्राएँ कॉलेज में दाख़िला लेने में असमर्थ हैं क्योंकि उनके पास या तो संसाधनों की कमी है या उनकी शादी कर दी जाती है। उच्च माध्यमिक स्तर की पढ़ाई के दौरान लगभग 5% छात्राएँ ड्रॉप-आउट हो जाती हैं। इन बाधाओं को देखते हुए केकेजीएम ने कंप्यूटर अध्ययन और सिलाई जैसी व्यावसायिक कक्षाएँ शुरू की हैं ताकि जो लड़कियाँ उच्च अध्ययन जारी रखने में असमर्थ हैं, उन्हें भी आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर होने में मदद मिल सके।

2020 में केकेजीएम ने खदीजतुल कुबरा गर्ल्स एकेडमी नामक अपना दूसरा उपक्रम शुरू किया, ताकि छात्राओं को स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद मदद दी जा सके। अकादमी का उद्देश्य यह है कि व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के साथ-साथ सिविल सेवा परीक्षा, कर्मचारी चयन आयोग परीक्षा, संयुक्त विधि प्रवेश परीक्षा और संयुक्त प्रवेश परीक्षा जैसी अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने के इच्छुक लोगों के लिए कोचिंग क्लासेस की व्यवस्था की जाए। अभी यह एक शुरुआती अवस्था में है और भविष्य में अधिक लड़कियों के लिए सुरक्षित भविष्य सुनिश्चित करने के लिए अकादमी ने एक स्पांसरशिप कार्यक्रम शुरू करने का सोचा है।

केकेजीएम का समग्रतात्मक दृष्टिकोण इस विश्वास को पुष्ट करता है कि उचित परिस्थितियाँ मिलने पर हर बच्चा सीख सकता है। आवासीय सुविधाएँ लड़कियों को स्कूल की ओर आकर्षित करने और उन्हें स्कूल में बनाए रखने में मदद करती हैं और उपचारात्मक कक्षाएँ यह सुनिश्चित करती हैं कि अत्यन्त कमज़ोर छात्रा भी हार न माने। अकादमी द्वारा आयोजित अतिरिक्त कोचिंग कक्षाओं से छात्राओं की वे बाधाएँ कम हुईं जिनका सामना शायद उन्हें कहीं और प्रशिक्षण प्राप्त करने में करना पड़ सकता था। यह कक्षाएँ छात्राओं को बाहरी दुनिया के लिए तैयार भी करती हैं। छात्राओं के अँग्रेज़ी कौशल में सुधार करने का इसका भविष्यवादी दृष्टिकोण भी अभिभावकों को अपनी ओर खींचता है।

वित्तीय परिस्थितियाँ अक्सर छात्राओं की शिक्षा पर रोक लगा देती हैं। केवल स्कूल- स्तर पर ही नहीं बल्कि उच्च अध्ययन में भी केकेजीएम की वित्तीय सहायता यह सुनिश्चित करती है कि उन लड़कियों को भी अपनी शिक्षा को आगे बढ़ाने का मौका मिले जो अन्यथा शायद पढ़ाई छोड़ देतीं।

इस बात को स्वीकार करते हुए कि आर्थिक सहायता के बावजूद कुछ लड़कियाँ ऐसी होंगी जो आगे की पढ़ाई जारी नहीं रख पाएँगी, उनकी मदद के लिए स्कूल में व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है ताकि लड़कियाँ अपने घरों के भीतर से ही आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर हो सकें। और यह दृष्टिकोण इस धारणा को मज़बूत करता है कि अधिगम का मतलब केवल ऊँची-ऊँची डिग्रियाँ प्राप्त करना नहीं है; केकेजीएम में प्रत्येक छात्रा को कोई-न-कोई कौशल सीखने में मदद करके उन्हें उज्ज्वल भविष्य के लिए तैयार किया जाता है।

References

[i] United Nations International Children's Emergency Fund (UNICEF), *All Children in School by 2015: Global Initiative on Out-of-School Children*. UNESCO Institute for Statistics, New Delhi, 2014

[ii] ASER 2018, *Annual Status of Education Report (Rural): 'Young Children'*, ASER Centre, 2020

[iii] The Print, *Muslim girls less likely to drop out of school than boys at higher education level*, 22 October 2018

श्रीजिता चक्रवर्ती युवा लड़कियों को वर्चुअल रूप से अँग्रेज़ी सिखाने के लिए ऐन फाउण्डेशन के साथ वॉलंटियर के रूप में जुड़ी हुई हैं। वे वर्तमान में गार्टनर के साथ एक वरिष्ठ अनुसन्धान विशेषज्ञ के रूप में कार्य करती हैं। उनसे srijitac@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

हमें अनुक्रियाशील स्कूलों की आवश्यकता क्यों है !

सुबीर शुक्ला

'नहीं, सर, वे जवाब नहीं देंगे, सर।'

यह 1990 के दशक की बात है। मैं केरल में कामकाजी बच्चों के एक ग़ैर-औपचारिक शिक्षा केन्द्र (उन दिनों में ये हुआ करते थे) में था। 8-12 साल तक के बच्चों ने पूरे दिन काम किया था और रात को इस केन्द्र में आए थे। उनके अध्यापक उन्हें बुनियादी साक्षरता कौशल सिखाने की कोशिश कर रहे थे। पर उन्हें यह काम मुश्किल लग रहा था क्योंकि बच्चे थके हुए थे और बिल्कुल रुचि नहीं दिखा रहे थे। मैंने उपयोग में लाए जाने वाले प्राइमर को देखा - ऐसा लगता था कि उसका बच्चों के जीवन के साथ कोई वास्ता नहीं है! इस बिन्दु पर आकर जब मैंने पूछा कि क्या हम किसी दुभाषिए की मदद से बच्चों के साथ बातचीत कर सकते हैं और तब मुझे जवाब मिला कि वे कोई जवाब नहीं देंगे।

ख़ैर, हम आगे बढ़े। मैंने बच्चों से पूछा कि क्या वे उन सभी औज़ारों के नाम बता सकते हैं जिनका उपयोग उन्होंने पूरे दिन में किया हो। शुरुआत में तो वे थोड़ा झिझके, लेकिन फिर जल्द ही उन्होंने इतनी तेज़ी से औज़ारों के नामों की बौछार कर दी कि अध्यापक के लिए उन्हें ब्लैकबोर्ड पर लिखना मुश्किल हो रहा था। फिर हमने चर्चा की कि प्रत्येक औज़ार का उपयोग किस काम के लिए किया जाता था, उसका विकल्प क्या था आदि। जैसे-जैसे बोर्ड बच्चों द्वारा इस्तेमाल किए जाने वाले शब्दों से भरने लगा, वह 'शिक्षार्थी-जनित पाठ्य' बन गया, जिसमें पर्याप्त पुनरावृत्ति और पैटर्न थे और जिनका उपयोग हम पठन सिखाने के लिए सामग्री के रूप में कर सके।

बरसों बाद, झारखण्ड के एक दूरदराज़ गाँव में एक लड़के से बातचीत हुई जिसने स्कूल में देर से दाख़िला लिया था (वह बकरियाँ चराया करता था)। मैंने उससे पूछा कि सारी बकरियाँ तो एक जैसी दिखती हैं तो वह अपनी बकरियों को कैसे पहचानता है। उसने मुझे आश्चर्य से देखा, 'क्यों? जब आप अपने बच्चों को देखते हैं तो क्या उन्हें नहीं पहचान पाते?' और फिर हमने बकरियों के चराने की पेचीदगियों पर चर्चा की जैसे - झुण्ड को एक साथ रखना, विभिन्न मौसमों में झुण्ड को वापस लाने के बारे में जानना और यदि कोई बकरी अस्वस्थ हो तो जड़ी-बूटियों का उपयोग करना आदि। स्कूल में देर से दाख़िला लेने के कारण इस लड़के को 'विशेष प्रशिक्षण' दिया जा रहा था; अन्य विद्यार्थी उसके साथ अधिक बातचीत नहीं करते थे और शिक्षक को यकीन नहीं था कि वह कभी कुछ सीख भी पाएगा या नहीं, क्योंकि वह कक्षा में कभी बात नहीं करता था। फिर भी, यहाँ वह अपने क्षेत्र का विशेषज्ञ था और उसे अपने सहपाठियों की प्रशंसा मिल रही थी।

अभी हाल ही में, मुम्बई में धारावी की झुग्गी-बस्ती के स्कूल में, चौथी कक्षा के कथित रूप से 'पिछड़े' विद्यार्थियों के साथ बातचीत करते हुए मैंने उनसे पूछा कि उन्होंने पूरे दिन क्या किया और क्या खाया। मुझे पता चला कि उनमें से कइयों ने बिरयानी का आनन्द लिया। यह पूछने पर कि क्या वे इसे बनाना जानते हैं, क़रीब पन्द्रह बच्चों ने हाथ उठाया। मैंने एक लड़के से कहा कि वह कक्षा में बिरयानी बनाने की विधि बताए। उसने बताना शुरू किया लेकिन बीच में ही उसे एक लड़की ने रोक दिया और कहा कि उसका तरीक़ा 'सही' नहीं था। उन दोनों के बीच बिरयानी बनाने की बारीकियों पर बख़ूबी बहस हुई!

सभी जगहों की तरह यहाँ पर भी शिक्षक बच्चों की मुखरता से काफ़ी आश्चर्यचकित थे क्योंकि उन्होंने कभी इन बच्चों को बोलते हुए नहीं सुना था। कुछ मिनटों बाद बच्चों ने ख़ुलासा किया कि एक स्थानीय बिरयानीवाला था, जो उन्हें पसन्द था। तब मैंने उनसे पूछा कि उन्हें क्या लगता है कि वह हर दिन कितना मुनाफ़ा कमाता होगा। इस पर बच्चों ने तुरन्त उसके खर्चों और आय की विस्तार से गणना करके अपने शिक्षकों को चौंका दिया। 'लेकिन, वे गणित में हमेशा से इतने कमज़ोर रहे हैं और बिल्कुल रुचि नहीं दिखाते हैं!' उनके शिक्षकों का कहना था।

बदले हुए परिदृश्य में शिक्षण

मुझे इस बात पर हमेशा आश्चर्य होता है जब शिक्षकों और अन्य वयस्कों को यह पता चलता है कि जो बच्चे कथित रूप से मन्द हैं वे वैसे बिल्कुल नहीं हैं तो वे कितने अचम्भित हो जाते हैं! किसी न किसी कारण से हम उस समृद्ध ज्ञान को देखने में असमर्थ हैं जो वे स्कूल के बाहर के अपने जीवन से प्राप्त करते हैं। उन्हें अक्सर अपने पर्यावरण की गहरी समझ होती है, उदाहरण के लिए आदिवासी बच्चों; कचरा चुनने वालों की सामग्री; खाना बनाने वालों; बच्चे का ध्यान रखने वालों; और ऐसे ही कई अन्य आयामों के बारे में सोचिए जिन्हें 'ज्ञान' के रूप में नहीं देखा जाता और हमारी पाठ्यपुस्तकों या कक्षा की

प्रक्रियाओं में उन्हें शामिल नहीं किया जाता।

वास्तव में इसमें शिक्षकों की ग़लती नहीं है क्योंकि उन्होंने किसी और समय और सन्दर्भ में बनाई गई व्यवस्था में क़दम रखा है। जब 1980 के दशक में मैंने शिक्षा के क्षेत्र में काम करना शुरू किया तब केवल 40% बच्चे स्कूल में थे और पाँचवीं कक्षा पूरी करने से पहले बहुत से बच्चे स्कूल छोड़ देते थे। व्यवस्था भी उन लोगों के अनुसार तैयार की गई थी जो स्कूल का खर्चा उठा सकते थे, हर दिन स्कूल में उपस्थित हो सकते थे, जिन्हें घर पर समर्थन मिलता था और जो स्कूल की भाषा का प्रयोग करने में सहज थे। सिर्फ़ दो दशक बाद, 90% से अधिक बच्चे स्कूल में आ गए। इसका मतलब था कि अब स्कूल में *अधिकांश* बच्चे ऐसे समूहों के थे जो पारम्परिक रूप से कभी स्कूल नहीं गए थे। वे पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी नहीं थे – चूँकि सभी पीढ़ियों ने काफ़ी कुछ सीखा हुआ था – वे बस पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वाले थे।

बच्चों को स्कूल में लाने में हमारी सफलता का एक बड़ा परिणाम यह हुआ है कि विद्यार्थी का प्रोफ़ाइल बदल गया है। अधिकांश सरकारी स्कूलों और कम शुल्क वाले निजी स्कूलों में अब हमारे पास ऐसे विद्यार्थी हैं जिनके पास वह मध्यमवर्गीय पृष्ठभूमि या सांस्कृतिक पूँजी नहीं है जिन्हें हमारी पाठ्यचर्या, पाठ्यपुस्तकें और प्रक्रियाएँ मान कर चलती हैं कि उनके पास होगी। जो लोग ग़रीब हैं, उनके लिए कई कारणों से स्कूल में हर दिन उपस्थित होना मुश्किल हो सकता है। न ही उनके परिवार में ऐसे वयस्क होंगे जो बच्चे की पढ़ाई में उसकी मदद कर सकें। हो सकता है कि एक बड़ी संख्या में बच्चे स्कूल की भाषा को अच्छी तरह से न जानते हों। उदाहरण के लिए दिल्ली की किसी झुग्गी-बस्ती वाले स्कूल में प्रवासन और शहरीकरण के कारण एक कक्षा में आसानी से दस से अधिक भाषाएँ बोलने वाले बच्चे हो सकते हैं। सम्भव है कि इन कक्षाओं में पंजाबी और ओड़िया बोलने वाले विद्यार्थी एक-दूसरे की बगल में बैठे हों। ऐसे में आप उस कक्षा में कैसे पढ़ाएँगे?

'विफल होने के लिए डिज़ाइन की गई' स्थिति

अपने देश की विविधता के चलते हमारे विद्यार्थियों में हमेशा भिन्नता रही है। जैसे-जैसे हम सफलतापूर्वक सार्वभौमिकता की ओर बढ़े, यह विविधता 'अति-विविधता' में बदल गई - फिर भी विद्यार्थियों के अधिगम के प्रति हमारा दृष्टिकोण कमोबेश वैसा ही रहा जैसा पहले हुआ करता था। हम अभी भी अपने शिक्षकों से यही अपेक्षा करते हैं कि वे सभी बच्चों को एक ही समय में एक ही विधि से एक ही बात सिखाएँ और एक ही परिणाम प्राप्त करें। यह एक ऐसा विचार है जो 'विफल होने के लिए डिज़ाइन' किया गया है क्योंकि यह इस बात को सुनिश्चित करता है कि अधिकांश बच्चे, जो अन्यथा तीव्रबुद्धि और सक्षम हैं, वे किसी न किसी कारण से अधिगम की प्रक्रिया से बाहर रह जाएँ। 'सभी के लिए एक-जैसी व्यवस्था' बनाकर हमने 'अधिकतर को अधिगम प्रक्रिया से बाहर' कर देने वाली स्थिति बना दी है जिसमें अधिकांश बच्चे (और उनके परिवार) व्यवस्था की बुनियादी अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर पाते। इस व्यवस्था की 'बाहर रखने' की प्रकृति के परिणामस्वरूप कई बातें सामने आती हैं जैसे शिक्षकों के सामने आने वाली कठिनाइयाँ, अधिगम के निम्न स्तर और प्रेरणा की कमी।

अनुक्रियाशील दृष्टिकोण अपनाना

'विफल होने के लिए डिज़ाइन' की गई इस स्थिति निपटने के लिए हम क्या कर सकते हैं? शुरुआत करने के लिए, ख़ासकर कि यदि आप एक शिक्षक हैं तो, बच्चों के *ज्ञान कोष* से शुरू करें। यह वह ज्ञान है जो बच्चे कक्षा के बाहर की अपनी दुनिया से अपने साथ लाते हैं। हर बच्चा किसी न किसी चीज़ का विशेषज्ञ होता है। उदाहरण के लिए बौद्धिक अक्षमता वाला बच्चा आपको अपनी इस विशेषता से आश्चर्यचकित कर सकता है कि वह अपनी देखभाल करने वाले के मूड को कितनी अच्छी तरह जानता है।

बच्चे की इस विशेषज्ञता और ज्ञान को हम कैसे बाहर लाएँ, उसे साझा करें, उस पर चर्चा करें और देखें कि हम जो कुछ सिखाने की कोशिश कर रहे हैं उससे इस ज्ञान को कैसे जोड़ा जाए? इसका मतलब यह हुआ कि बच्चे आपकी कक्षा में बोलें। इसलिए वास्तव में पहली अपेक्षा यह सुनिश्चित करना है कि हम एक जीवन्त कक्षा चलाएँ जिसमें बच्चे सक्रिय रूप से भाग लेने में संकोच न करें। यहाँ हमारा गुप्त हथियार है मुस्कराना, बार-बार मुस्कराना, और यह बहुत कारगर है! अगला चरण है, जैसा कि पहले भी बताया गया है, बच्चों के अनुभवों के बारे में प्रश्न पूछना और फिर आप उनके उत्तरों को उस पाठ के साथ जोड़ने के तरीक़े खोजें जिसे आप पढ़ाने का प्रयास कर रहे हैं। यह विधि कई बार काम करेगी (लेकिन हमेशा नहीं)। लेकिन यदि एक बार आपको सफलता मिल गई यानि बच्चे सीखने की प्रक्रिया में लग गए तो आप बहुत तेज़ी से आगे बढ़ सकते हैं और फिर आप उन तरीक़ों का इस्तेमाल कर सकते हैं जिन्हें आप सामान्यतः काम में लाते हैं।

बेशक, शिक्षक हमेशा निर्धारित समय के भीतर 'पाठ्यक्रम पूरा करने' या 'पाठ्यपुस्तक के पाठों को कवर करने' के दबाव में रहते हैं। हो सकता है कि उनके पास ऐसी पाठ्यपुस्तकें हों जो नीरस हैं या उनमें जीवन्त जुड़ाव की सम्भावनाओं की कमी है या जो बच्चों के जीवन से बिल्कुल भी सम्बन्धित नहीं हैं। ऐसी स्थितियों में भी यह सम्भव है कि कक्षा सक्रिय और व्यस्त हो जिसमें प्रत्येक बच्चे को शामिल किया जा सके।

मिसाल के तौर पर खरगोश और कछुए की दौड़ की कहानी ले लीजिए। बच्चों से कहा जा सकता है कि वे खरगोश के लिए एक सांत्वना कार्ड बनाएँ या वे हमें खरगोश के उस सपने के बारे में बताएँ जो दौड़ के दौरान सोते समय उसने देखा या श्रीमान कछुए की विजय पर उसके लिए एक प्रेस-साक्षात्कार का आयोजन करें। सभी शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रम किसी न किसी रूप में *गतिविधि-आधारित या रचनावादी शिक्षणशास्त्र* का समर्थन करते हैं, इसलिए कोई भी शिक्षक जो बच्चों को चुनौतीपूर्ण कार्यों में भाग दिलाने, उस पर चिन्तन करवाने या जो उन्होंने नई स्थितियों में सीखा है उसे लागू करवाने का प्रयास कर रहा है तो वह निश्चय ही वही कर रहा होगा जो उससे अपेक्षित है।

ऐसी प्रक्रिया में हम अपने बच्चों की विभिन्न आवश्यकताओं को कैसे सम्बोधित कर सकते हैं? यह सम्भव है जब आप हर बार एक ऐसा कार्य रचें जिस पर कई बच्चे अपने आप काम कर सकें। उदाहरण के लिए, आप बच्चों से कह सकते हैं कि वे अभी-अभी पढ़ाई/सुनाई गई कहानी के आधार पर एक ड्रॉइंग/रोल प्ले बनाएँ या कक्षा का एक नक्शा बनाएँ, या यह हिसाब लगाएँ कि प्रति बच्चे के लिए मध्याह्न भोजन की लागत कितनी है। इससे आपको कक्षा के दौरान 10-15 मिनट का समय मिल सकता है, जब आप उन बच्चों के साथ काम कर सकते हैं जो किसी कारण से दूसरे बच्चों से पीछे हैं। यह उन बच्चों पर व्यक्तिगत रूप से ध्यान देने के अवसर प्रदान करता है जिन्हें अधिक समय और समर्थन की आवश्यकता होती है। इस प्रकार कक्षा में समता का अर्थ निकलता है - 'प्रत्येक बच्चे को उसकी आवश्यकता के अनुसार' शिक्षक का समर्थन, अवसर और शिक्षक का समय मिले। यह पूरी कक्षा को सामान्य तरीक़े से पढ़ाने और बाद में 'उपचारात्मक' शिक्षण करने से कहीं बेहतर है।

लेकिन आप कह सकते हैं कि हमें यह सब करने की स्वतंत्रता नहीं है। यह एक ऐसा दिलचस्प बिन्दु है जिस पर सोचा जाना चाहिए - पता नहीं क्यों, हम सभी ख़राब तरीक़े से पढ़ाने और ख़राब परिणाम प्राप्त करने के लिए स्वतंत्र हैं, लेकिन हम अपनी प्रक्रियाओं को बेहतर बनाने की कोशिश करने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं! कोशिश कीजिए तो सही, देखें क्या होता है और फिर उसके आधार पर निर्णय लीजिए।

अनुक्रियाशील होना

इस सबका मतलब यह नहीं है कि समाधान केवल शिक्षकों के पास हैं। इसके विपरीत, हमें अपनी ज़मीनी वास्तविकताओं की रोशनी में और समसामयिक, साक्ष्य-आधारित सोच के आधार पर अपनी मूल शैक्षिक प्रक्रियाओं को सावधानीपूर्वक पुन: डिज़ाइन करके शिक्षकों के प्रयासों को मज़बूत करने की आवश्यकता है। अर्थात हमें इन बातों की पुनः जाँच करनी होगी : पाठ्यक्रम को विषय-सामग्री से मूल क्षमताओं की ओर मोड़ना; पाठ्यपुस्तकों को जानकारी के स्रोतों के स्थान पर सीखने की प्रक्रियाओं को सक्रिय करने वाली बनाना; आकलन को भयोत्पादक और सही व गलत के खाँचे में रखने वाली प्रक्रिया के स्थान पर एक ऐसा शैक्षणिक उपकरण बनाना जो बच्चों को अपनी प्रगति की ज़िम्मेदारी लेने के लिए भी सशक्त बनाए; अपने शिक्षक पेशेवर विकास को पदानुक्रमित और निर्देश-आधारित के स्थान पर ऐसा रूप देना जो उन शिक्षकों के साथ समर्थकारी भागीदारी पर आधारित हो, जहाँ शिक्षकों के साथ संयुक्त रूप से लक्ष्य निर्धारित किए जाएँ और फिर उन्हें प्राप्त करने में उनकी सहायता की जाए।

इन बदलावों की ज़रूरत इसलिए है क्योंकि बच्चों को स्कूल के साथ समायोजन नहीं करना है बल्कि स्कूल को बच्चों के अनुकूल बनना होगा। ऐसा विद्यालय एक 'अनुक्रियाशील' विद्यालय होगा। मैं 'समावेशी' शब्द का उपयोग नहीं कर रहा क्योंकि इसका मतलब यह निकलता है कि हमने आपको शामिल किया है – इसमें कुछ हद तक एहसान करने वाली भावना आ जाती है जबकि वास्तव में यह बच्चे का अधिकार है और हम केवल कर्तव्यपालक हैं। इसलिए प्रत्येक बच्चे के सीखने के अनुभव को सन्तोषप्रद बनाने के लिए, जहाँ उसकी छिपी क्षमताओं को विकसित किया जा सके, शायद सबसे बड़ा बदलाव जिसकी ज़रूरत है वह है शिक्षा को देखने के हमारे अपने नज़रिए में बदलाव।

सुबीर शुक्ला ग्रुप इग्नस के साथ हैं और भारत और एशिया तथा अफ्रीका के अन्य देशों में हाशिए के बच्चों की ज़रूरतों पर ध्यान देते हुए शिक्षा व्यवस्था की गुणवत्ता में सुधार पर काम कर रहे हैं। वे मुख्य सलाहकार, डीपीईपी (1995-98) और एमएचआरडी के शैक्षिक गुणवत्ता सुधार सलाहकार (2009-11) रह चुके हैं। उन्होंने आरटीई-2009 के क्वालिटी फ्रेमवर्क के विकास का नेतृत्व किया। वे नीति आयोग द्वारा स्कूली शिक्षा-2035 के लिए भारत के विज़न को विकसित करने के लिए बनाई गई विशेषज्ञों की टीम में भी हैं। सुबीर, मनन बुक्स के माध्यम से बच्चों के लिए लिखते हैं और बच्चों के लिए एक बुनियादी शिक्षण पत्रिका, *चहक* निकालते हैं। उन्होंने हाल ही में चाइल्ड डेवलपमेंट एण्ड एजूकेशन इन दी ट्वेंटी-फर्स्ट सेंचुरी, स्प्रिंगर : सिंगापुर (अक्तूबर 2019) का सह-लेखन किया। उनसे subirshukla@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

शिक्षामित्र | एक प्रायोगिक स्कूल और संसाधन केन्द्र

सुदेशना सिन्हा

विशेष शिक्षा की अपनी पृष्ठभूमि और कोलकाता में प्रवासी बच्चों के लिए हिन्दी माध्यम स्कूल चलाने के अनुभव (1994-2004) ने अक्सर मुझे और मेरे कुछ क़रीबी सहयोगियों को बच्चों की, विशेष रूप से निम्न आय-वर्ग के, शैक्षिक आवश्यकताओं की समीक्षा करने की ओर प्रवृत्त किया। इन वर्षों के दौरान मुझे जो अनुभव हुए, उनसे पुनः उसी बात की पुष्टि हुई जिसे कई लोग पहले से ही जानते हैं। वह यह है कि - सभी के लिए एक निश्चित पाठ्यक्रम वाली 10-12 साल की स्कूली शिक्षा प्रणाली न तो प्रत्येक शिक्षार्थी के व्यक्तित्व और क्षमता का सम्मान करती है और न ही उन्हें जीवन का बेहतर रूप से सामना करने के लिए तैयार करती है। इसके अलावा सिस्टम में फिट होने की कोशिश में, हाशिए पर रहने वाले अधिकांश लोग उससे बाहर हो जाते हैं और बदले में वे अपनी उत्तरजीविता के कौशल भी खो बैठते हैं।

2004 में मैंने अपने कुछ सहयोगियों के साथ 10-14 आयु-वर्ग के बच्चों के लिए, बंगाली माध्यम का एक स्कूल स्थापित करने का फैसला किया। रचनात्मकता और समालोचनात्मकता के लिहाज से यह सबसे बेहतर उम्र होती है। साथ ही इस आयु-वर्ग के बच्चे सबसे अधिक संवेदनशील होते हैं और उनके स्कूल छोड़ने की सम्भावना भी अधिक। इसके अलावा इस आयु-समूह के बच्चों से हमें यह अपेक्षा थी कि वे बुनियादी साक्षरता और संख्या-ज्ञान प्राप्त कर चुके होंगे और इसलिए वे पाठ्यक्रम सम्बन्धी उन विभिन्न प्रयोगों के लिए तैयार होंगे जो हमने सोच रखे थे।

आरम्भ (2005-2011)

हमें दक्षिण कोलकाता में, प्रसिद्ध कालीघाट मन्दिर के पास, चेतला नामक इलाके में एक जगह मिली। पड़ोस में पंजीकृत झुग्गी-बस्तियों का सर्वेक्षण करते समय हमने दो-तीन महीनों तक वहाँ के निवासियों को नए स्कूल की अवधारणा के बारे में बार-बार बताया। सत्रह बच्चों ने दाख़िला लिया और 2005 के अप्रैल माह में *शिक्षामित्र* शुरू हुआ। इनमें से अधिकांश बच्चे सरकारी स्कूलों में जा रहे थे और कुछ स्कूल छोड़ चुके थे। सभी अपने स्कूलों से निराश थे और कुछ नया करने की कोशिश में आए थे। शिक्षामित्र स्कूल छह साल तक चला और अन्त तक नामांकन की संख्या 25 से 30 के बीच रही।

उथल-पुथल का शुरुआती दौर

हमने पाया कि यह विद्यार्थी अशान्त और आक्रामक थे तथा खुले तौर पर शिक्षण समुदाय के प्रति अपने सन्देह और तिरस्कार का प्रदर्शन कर रहे थे; वे हिंसा की ओर प्रवृत्त और सीखने के प्रति अनिच्छुक थे। अपने शिक्षण के दौरान हमें शिक्षण-योजना को स्थगित करना पड़ता था; कला और मिट्टी के काम ने कुछ हद तक उन्हें शान्त करने में मदद की। बच्चों को विभिन्न विषयों पर रोल-प्ले करने के लिए आमंत्रित किया गया जैसे ब्रेक टाइम, कक्षा-शिक्षण, स्कूल के बन्द होने के समय, बाहर खेले जाने वाले खेल, घर में बिताया गया समय आदि। अभिनय की आड़ में, बच्चों ने अपमान और यातना की वे कहानियाँ सुनाईं जो कि हाशिए पर होने के कारण उन्हें अपनी पिछली कक्षाओं में और अपने आस-पड़ोस में सहनी पड़ी थीं और कैसे पहले उन्होंने बदला लेने की कोशिश की, फिर विनम्र हुए और अन्त में आत्म-समर्पण कर दिया।

रोल-प्ले ने धीरे-धीरे समझ के एक पुल का निर्माण किया और फिर एक लोकतांत्रिक अभ्यास शुरू हुआ जिसमें विद्यार्थी और शिक्षक साथ बैठकर मुद्दों, कठिनाइयों और सकारात्मक क्षणों पर चर्चा करते और साथ ही स्कूल की गतिविधियों की समीक्षा करते हुए सुझावों पर चर्चा करते। सहयोग, देखभाल तथा सीखने और अपनी ग़लतियों को स्वीकार करने के लिए किए गए प्रयासों को प्रोत्साहन और मुक्त प्रशंसा से पुरस्कृत किया जाता था।

शारीरिक श्रम की गरिमा और स्कूल के प्रति स्वामित्व-भाव को सुनिश्चित करने और बनाए रखने के लिए शिक्षक और बच्चे स्कूल के रोज़मर्रा के रख-रखाव में लगे हुए थे। एक रोस्टर में अलग-अलग कार्यों को और उन्हें करने वालों के नामों को सूचीबद्ध किया गया। यह कार्य थे – धूल झाड़ना, पोंछा लगाना, दरवाज़े और खिड़कियाँ बन्द करना, शौचालय की सफ़ाई करना, घण्टी बजाना आदि। स्कूल-समुदाय को इस अभ्यास को स्वीकार करने और महत्त्व देने में थोड़ा समय लगा, हालाँकि कुछ अपवाद भी थे।

लगभग छह महीने में यह बच्चे इस स्कूल के आदी होने लगे। हमारा स्कूल सप्ताह में पाँच दिन, छह से सात घण्टे काम करता था। पाठ्यक्रम में संगीत, कला, शिल्प, हाथ के काम, नृत्य, रंगमंच, खेल, फ़िल्में तथा सड़कों, पुराने बन्दरगाहों, बाज़ारों,

कला दीर्घाओं, बागवानी पार्क और शिल्प-संस्थाओं का दौरा करना शामिल था जिन्हें अक्सर नियमित शैक्षिक विषयों के साथ एकीकृत किया जाता था। कला पर इतना अधिक ज़ोर दिया जाता था कि कुछ माता-पिता को, जो अपने बच्चों को भर्ती कराने आए थे, लगा कि यह संगीत और नृत्य का विद्यालय है!

बंगाली सीखना

9 से 14 वर्ष के बीच के साठ प्रतिशत विद्यार्थियों, जिन्होंने औपचारिक रूप से कक्षा II, III और IV उत्तीर्ण कर ली थी, ने साक्षरता और संख्या-ज्ञान के बुनियादी स्तर को हासिल नहीं किया था। कुछ तो बंगाली में भी अपना नाम तक लिखने में असमर्थ थे। बंगाली में बुनियादी पठन और लेखन कौशल सुनिश्चित करना हमारी सबसे बड़ी चुनौती बन गई। हमने ऐसे विभिन्न तरीक़े अपनाए जो पहले अन्य स्थानों में सफल रहे थे। बार-बार असफल होने के बाद हमने प्रो. जलालुद्दीन द्वारा शुरू की गई *रीडिंग गारण्टी स्कीम* की ओर रुख किया। इस पद्धति को अपनाने के बाद अधिकांश बच्चों ने तीन महीने के भीतर पढ़ना और लिखना सीख लिया, जबकि कुछ को थोड़ा और समय लगा।

इस विधि में इन बातों पर ध्यान दिया गया था :

- बच्चों के स्वयं के दृष्टिकोण से किसी तस्वीर या कहानी की व्याख्या करना। शिक्षार्थियों ने शिक्षक की मदद से अपनी भाषा में एक नए पाठ्य का निर्माण किया। इस विधि ने पढ़ने को सार्थक और सुखद बना दिया। शब्दों को सीखना और याद रखना आसान हो गया क्योंकि वे बच्चों के सन्दर्भ से जुड़े हुए थे।
- इसके साथ ही बच्चों का परिचय, बांग्ला भाषा की बारहखड़ी के चार्ट से करवाया गया जिसमें व्यंजन और स्वर संकेतों (मात्रा) का संयोजन किया हुआ था। इसका उपयोग सरल शब्दों (संयुक्ताक्षरों के बिना) के निर्माण के लिए किया गया जिससे सही वर्तनी को भी बल मिला। इससे डिस्लेक्सिया वाले बच्चों को भी मदद मिली, जो अन्यथा मात्रा के संकेतों को सही ढंग से जोड़ पाने में असमर्थ थे। बारहखड़ी का परिचय देने से पहले हम यह सुनिश्चित करते थे कि विद्यार्थी बंगाली अक्षरों और स्वरों के संकेतों को जान गए हैं।
- हमने तीसरा घटक यह जोड़ा कि हम उपयुक्त वर्कशीट्स का उपयोग करते थे जो बाद में शिक्षार्थियों और शिक्षकों में बहुत लोकप्रिय हुआ।

हमें जल्द ही पता चल गया कि सरल भाषा में उपयुक्त पाठ्यों का उपयोग करना कितना महत्त्वपूर्ण था : माना कि वे सभी शुरुआती शिक्षार्थी थे, लेकिन इसका मतलब यह नहीं था कि बड़े बच्चे उन्हीं पाठ्यों का आनन्द लेंगे जो छोटी आयु-वर्ग के बच्चों के लिए इस्तेमाल किए जा रहे थे! प्रसिद्ध लेखकों द्वारा रचित उचित प्रकार के आकर्षक पाठ्यों की कमी थी, जो वैसे तो बहुत अच्छे थे, लेकिन इन शुरुआती पाठकों के लिए प्रभावी नहीं थे। कई पाठ्यों के सन्दर्भ और भाषा पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वालों के लिए अपरिचित थी।

हम चाहते थे कि पठन सामग्री छोटी हो यानी एक पृष्ठ से अधिक न हो, बड़े फॉन्ट में लिखी गई हो और शब्दों के बीच पर्याप्त खाली स्थान हो। इसलिए, हम शिक्षकों और विद्यार्थियों ने कक्षा में अपने स्वयं के पाठ्यों का निर्माण शुरू किया। शिक्षकों ने ग्रिम की फेयरी टेल्स, चेखव, टॉल्स्टॉय, सुकुमार रॉय, लीला मजूमदार और अन्य लेखकों की कहानियों के लघु संस्करण बनाए। पूरे स्कूल पर मानो छोटे और बड़े अंशों को लिखने की सनक सवार हो गई थी जिनकी भाषा तो सरल हो लेकिन विचार जटिल। *शिक्षामित्र* ने विद्यार्थियों बनाए चित्रों के साथ इन्हें छापना शुरू किया। एक ही साल के भीतर पुस्तकालय की किताबों, उनकी तस्वीरों और डिज़ाइनों में बच्चों की दिलचस्पी जादुई रूप से बढ़ गई।

अँग्रेज़ी सीखना

हमारे पास पहली पीढ़ी के स्कूल जाने वालों को अँग्रेज़ी सिखाने के लिए बंगाली के समान कोई आज़माया हुआ तरीक़ा नहीं था। हमने ईसाई अम्बलम स्कूल और ऑरोविले जैसी जगहों से सलाह ली और विशेष शिक्षा की तकनीकों का इस्तेमाल किया। हमने प्रयोग के माध्यम से अपना अँग्रेज़ी पैकेज विकसित किया। इसमें उपयोग की जाने वाली कुछ विधियाँ इस प्रकार हैं :

- विद्यार्थियों को वर्ड-अटैक और वर्तनी के लिए ध्वन्यात्मक कौशल में महारत हासिल करने और तीन महीने के भीतर पचास शब्दों की एक बुनियादी शब्दावली हासिल करने में मदद की गई। बाद में और शब्द जोड़े गए। वर्ड-अटैक एक डिकोडिंग कौशल है। यह मुद्रित शब्द को बोले गए शब्द से जोड़ने की क्षमता है और पढ़ना सीखने के लिए एक बुनियादी ज़रूरत है। यह समान ध्वनि वाले शब्दों को डिकोड(decode) करने में भी मदद करता है, जैसे कि chant और pant।
- उन्हें मूल शब्दावली (संज्ञा, क्रिया, आर्टिकल्स, विशेषण, सम्बन्धबोधक अव्यय) का उपयोग करके बहुत ही सरल वाक्यों के चरण-दर-चरण निर्माण से परिचित कराया गया था। पाँच महीने के भीतर जब विद्यार्थियों में वाक्य बनाने, लिखने, पढ़ने और ज़ोर से बोलने का आत्म-विश्वास आ गया तो उन्होंने अपने दम पर लिखना शुरू कर दिया। इसके बाद उन्होंने छोटे-छोटे विवरण लिखना शुरू किया

और वर्ष के अन्त तक वे अनुच्छेद और छोटी कहानियाँ लिखने लगे।

- पढ़े या लिखे गए पाठ्य के चित्रण को प्रोत्साहित किया गया। इससे शिक्षकों को यह समझने में मदद मिली कि शिक्षार्थी ने कितना समझा है। इस प्रक्रिया से दिलचस्प और सस्ती सामग्री का निर्माण हुआ।
- इसके साथ-साथ कुछ अन्य कार्य करने के प्रयास भी किए गए जैसे चुने गए गीतों और कहानियों को ध्यान से सुनना, फिल्में देखना, शिक्षकों और आगन्तुकों के साथ अँग्रेज़ी में बातचीत करना आदि। इन सभी से बच्चों में भाषा सीखने की क्षमता विकसित करने में मदद मिली।

संख्या का ज्ञान प्राप्त करना

यह कार्य कुछ आसान था। हमने आन्तरिक रूप से ही ठोस सामग्री विकसित की। *जोड़ो ज्ञान* जैसे संगठनों से कुछ सामग्रियों को अपनी आवश्यकताओं और आर्थिक स्थिति के अनुरूप परिवर्तित किया गया।

किसी एक अवधारणा पर विभिन्न सामग्रियों को डिज़ाइन किया गया और इनका उपयोग विभिन्न शिक्षार्थियों द्वारा किया गया, जिनमें ऐसे शिक्षार्थी भी शामिल थे जिन्हें संख्या-ज्ञान को लेकर दिक्क़त थी। आमतौर पर गणित की यह सहायक सामग्रियाँ जूनियर कक्षाओं तक ही सीमित रहती हैं। लेकिन माध्यमिक स्तर के लिए पहली बार बीजगणित और ज्यामिति में उपयुक्त सामग्री बड़ी कुशलता के साथ विकसित की गईं। इन सामग्रियों की सहायता से बच्चों की अवधारणा सम्बन्धी समझ में बहुत उल्लेखनीय प्रगति देखी गई।

अन्य विषय

हमें इस बात की स्वतंत्रता थी कि हम इतिहास, भूगोल और विज्ञान जैसे सामान्य स्कूली विषयों के शिक्षण के लिए दुनिया भर में विकसित सभी समृद्ध शैक्षणिक अभ्यासों को अपनाएँ। स्थानीय सर्वेक्षणों और साक्षात्कारों के लिए पड़ोस में जाना, वर्तमान मुद्दों पर चर्चा करना, स्थानीय और वैश्विक इतिहास तथा भूगोल का अध्ययन करना, आसानी से उपलब्ध सामग्रियों के साथ व्यावहारिक प्रयोग करना और उनकी मरम्मत करना, पारिस्थितिक विज्ञान और उचित व्यवहार पर ज़ोर देना, दिन भर की, खाना पकाने की कक्षाओं में भाग लेना, कला दीर्घाओं में कला का अभ्यास करना, रंगमंच के प्रदर्शनों को अपने पढ़े जा रहे पाठों से जोड़ना, मज़ेदार वार्षिक परीक्षा का आयोजन करना जिसमें माता-पिता निर्णायकों के रूप में हों, अपनी प्रगति का आकलन करना सीखना – *शिक्षामित्र* स्कूल उन सभी तरीक़ों को आज़माने के लिए तैयार था जो अधिगम का सुदृढ़ीकरण करें।

ओपन ज़ोन तकनीक

इस तकनीक से अभ्यास और स्वतंत्र अधिगम को बढ़ावा मिला। 45 मिनट की अवधि में विद्यार्थियों को बिना शिक्षक के हस्तक्षेप के, विभिन्न विषयों की वर्कशीट को पूरा करना होता था। इन्हें ख़ुद ही जाँचने की प्रक्रियाएँ भी स्थापित की गई। बेशक, नियम तोड़े गए और अनियमितताएँ हुईं। लेकिन स्वतंत्र रूप से सीखने वाले तैयार हो रहे थे।

कला

कला और उसमें जो कुछ भी सन्निहित है, वह हमारे लिए जीने का एक तरीक़ा बन गया क्योंकि इसने बच्चों और शिक्षकों दोनों के जीवन में जड़ें जमा लीं। कला केवल एक कक्षा या पाठ्येतर गतिविधि नहीं थी। यह हर जगह फैली हुई थी : दीवारों पर, दरवाज़ों पर, नोटबुक पर, कागज़ पर और कपड़ों पर। अधिकांश परीक्षाओं में भी इसका प्रवेश हुआ।

फ़िल्में, गीत और संगीत

इन्हें अक्सर पाठ्यों के रूप में चुना जाता था क्योंकि इससे डिस्लेक्सिया वाले बच्चे अपना बेहतरीन प्रदर्शन कर पाते थे क्योंकि उन्हें पाठ पढ़ने नहीं पड़ते थे। उन्होंने चर्चाओं और गतिविधियों में, दूसरों की तुलना में कहीं अधिक सहजानुभूति से भाग लिया और सम्बन्धित वर्कशीट्स को भी दूसरों की ही तरह बहुत रुचि के साथ पूरा किया।

स्कूल का बन्द होना

अपनी समृद्ध शिक्षण पद्धतियों के बावजूद *शिक्षामित्र* पर्याप्त संख्या में विद्यार्थियों को आकर्षित नहीं कर सका। विशेष रूप से बच्चों के पिता पारम्परिक स्कूली शिक्षा को प्राथमिकता देते थे। अन्त में इसे कई अन्य कारणों से बन्द करना पड़ा जिसमें धन की कमी और आरटीई अधिनियम का लागू होना भी शामिल है। अधिकांश बच्चों को सरकारी स्कूलों में भर्ती किया गया। कुछ ने पढ़ाई जारी रखी और कॉलेज तक गए जबकि कुछ नौकरी करने लगे।

शिक्षामित्र संसाधन केन्द्र

शिक्षामित्र ने 2007 से ही अन्य संगठनों के साथ अपनी शिक्षण पद्धतियों को साझा करना शुरू कर दिया था। 2011 में स्कूल के बन्द होने के बाद, संगठन ने पूर्णकालिक गतिविधि के रूप में दूसरों को प्रशिक्षण देना, सामग्री बनाना और उनकी आपूर्ति करना शुरू कर दिया।

बंगाली प्रशिक्षण

शिक्षामित्र ने 3 दिवसीय कार्यशालाओं के माध्यम से बंगाली में त्वरित पठन और लेखन की विधि साझा करना शुरू किया। हमने देखा कि इस प्रक्रिया ने विभिन्न पृष्ठभूमि के शिक्षकों को

उत्साहित किया। पाठ्य की व्याख्या करना, अपने विचारों को सामने रखना और अपने स्वयं के पाठ्य की रचना करना – इन सबने शिक्षकों के मन में सशक्तिकरण और आनन्द की भावना का संचार किया। उनमें यह आत्म-विश्वास जागा कि वे इन विधियों का उपयोग कक्षा में कर सकते हैं। हमने कोलकाता और पश्चिम बंगाल के अन्य ज़िलों के कई सरकारी स्कूलों और निजी अँग्रेज़ी माध्यम वाले स्कूलों के शिक्षकों को प्रशिक्षित किया।

हमने बहुत कठिन परिस्थितियों में रहने वाले बच्चों के साथ काम करने वाले एनजीओ के ऐसे शिक्षकों को भी प्रशिक्षित किया जो रेलवे प्लेटफार्मों पर, बीड़ी बनाने वाले और कूड़ा बीनने वाले समुदायों में, आदिवासी बच्चों और कोलकाता और अन्य शहरों की विभिन्न झुग्गी-बस्तियों के बच्चों के साथ कार्य करते हैं। कई समूहों ने अपने स्वयं के वातावरण के अनुरूप पाठ्यों का निर्माण किया। *शिक्षामित्र* द्वारा विकसित शिक्षण-अधिगम सामग्रियों, वर्कशीट्स और पुस्तकों की माँग हमेशा बनी रहती है।

अँग्रेज़ी प्रशिक्षण

हमारा, फाउण्डेशन ऑफ बेसिक इंग्लिश प्रशिक्षण, बहुत लोकप्रिय हुआ और यह शिक्षामित्र के सर्वाधिक माँग वाले कार्यक्रमों में से एक है। यह कार्यक्रम भारत के कई राज्यों में आयोजित किया गया है जैसे पूर्वोत्तर, बिहार और हरियाणा में। इसका उपयोग अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन के स्कूलों, बेंगलूरु के कई स्कूलों और बांग्लादेश में भी किया गया है। अँग्रेज़ी में जिन शिक्षकों की नींव कमज़ोर थी, उन्हें यह कार्यक्रम बेहद लाभप्रद लगा क्योंकि इसमें वे एक नए तरीक़े से अँग्रेज़ी सीखते थे।

कक्षा II से VII (प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालय) के सरकारी स्कूल के शिक्षकों ने इस कार्यक्रम का सफलतापूर्वक उपयोग किया है; कुछ ने प्राथमिक विद्यालय के उन बच्चों को पढ़ाने के लिए एक त्वरित उपचारात्मक उपाय के रूप में भी इसका उपयोग किया है जो प्राथमिक स्कूलों में इसे सीखने से चूक गए थे। हरियाणा सरकार के स्रोत शिक्षकों ने प्रशिक्षण के बाद कहा कि इस कार्यक्रम ने पहली बार उन्हें बताया कि वास्तव में कक्षा में क्या करना है जबकि नियमित कार्यशालाओं में केवल सैद्धान्तिक बातें बताई जाती थीं। बंगाली की तरह ही, यहाँ भी आज़माई हुई वर्कशीट्स का संकलन और वर्कबुक, सीखने की प्रक्रिया को आसान बनाते हैं।

गणित प्रशिक्षण

गणित में कार्यशाला के आयोजन का अनुरोध उन्हीं सरकारी और ग़ैर-सरकारी स्कूलों और अधिगम स्थानों से आया, जिन्होंने भाषाओं के प्रशिक्षण का लाभ उठाया था।

हमारी गणित की सामग्री को पूरे भारत के स्कूलों और व्यक्तियों ने ख़रीदा है। कुछ स्कूलों ने लागत कम करने के लिए अपनी सामग्री ख़ुद बनाई। इन कार्यशालाओं के माध्यम से *शिक्षामित्र* को पता चला कि गणित का अधिगम सबसे अधिक प्रभावी तब होता था जब प्रतिभागी अपनी सामग्री ख़ुद बनाते थे। तब से इस अभ्यास को बढ़ावा मिला है। गणित और बांग्ला पढ़ाने के लिए विभिन्न संगठनों और स्कूलों में स्रोत व्यक्ति तैयार किए गए हैं। लेकिन अँग्रेज़ी के शिक्षकों को ढूँढ़ना अब भी एक चुनौती है।

अपने शिक्षणशास्त्रीय ज्ञान का प्रसार करने, शैक्षिक सामग्री के रूप में सहायता प्रदान करने और भारत के विभिन्न राज्यों के कई स्कूलों, संगठनों और यहाँ तक कि माता-पिता के लिए सलाहकार के रूप में कार्य करने के लिए *शिक्षामित्र* एक शैक्षिक संसाधन संस्थान के रूप में कार्यरत है। हमें अपने इस विश्वास से प्रेरणा मिलती है कि अधिगम हर बच्चे के लिए है - केवल अवसर पैदा करने होंगे।

सुदेशना सिन्हा पेशे से एक विशेष शिक्षिका हैं। प्रायोगिक प्राथमिक विद्यालयों (सेंट जोसेफ स्कूल में आशीर्वाद विद्यालय और शिक्षामित्र) की स्थापना करने, पाठ्यक्रम, शिक्षणशास्त्र, सामग्री, पुस्तकें और आकलन के उपकरण विकसित करने जैसे कार्यों के साथ जुड़ी रही हैं। शिक्षकों का प्रशिक्षण, शिक्षकों और बच्चों के लिए सरल और स्पष्ट भाषा में किताबें और दस्तावेज तैयार करना आदि उनकी रुचि के क्षेत्र रहे हैं। प्रभावी शिक्षण के लिए, विशेष रूप से भाषाओं के लिए, विधियों और सामग्रियों को डिज़ाइन करना उनकी विशेषज्ञता है। वे एक स्रोत शिक्षिका के रूप में कार्य करती हैं और टीचर्स सेंटर, मॉडर्न एकेडमी ऑफ कंटीन्यूइंग एजुकेशन, दिगन्तर, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय और विप्रो फाउण्डेशन में कक्षाएँ ले चुकी हैं। वे बांग्लादेश के एक वैकल्पिक स्कूल और पश्चिम बंगाल के आरियादहा में टेक्नो इंडिया ग्रुप ऑफ स्कूल्स की संसाधक सलाहकार है। वे ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस की सलाहकार भी रही हैं। अपने संगठन शिक्षामित्र के साथ-साथ वे वर्तमान में, विप्रो फाउण्डेशन के संसाधन प्रदाताओं में से एक हैं। उनसे shompare@gmail.com पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

द सेंकेड सेक्स यानी आधी आबादी | एक ग्रामीण कक्षा में लिंगभेद पर चर्चा

सुनील कुमार

सामाजिक विज्ञान का अध्यापक होने के नाते एक ऐसी कक्षा में जहाँ तीस में से उन्नीस लड़कियाँ हों, इस मुद्दे पर शिक्षण करना आसान नहीं था। कक्षा सातवीं में 'समाज और महिलाओं की भूमिका' अध्याय पढ़ाते समय बहुत-से ऐसे मुद्दे बच्चों के सामने आने वाले थे जिन्हें वे रोज़ अपने घरों में जीते हैं और महसूस करते हैं। कक्षा के बच्चे अलग-अलग सामाजिक पृष्ठभूमि से आते हैं। उनके परिवारों में अभी भी पितृसत्ता का बोलबाला है। लड़कों और लड़कियों के पालन-पोषण में कई तरह के भेदभाव आमतौर पर देखे जा सकते हैं, जैसे कि एक ही परिवार के दो बच्चों में लड़का प्राइवेट अँग्रेज़ी मीडियम स्कूल में पढ़ता है और लड़की सरकारी स्कूल में। ऐसे ही अनेक भेदभावों से बच्चे परिचित होने वाले थे। मेरी योजना में पहले दिन महिलाओं से सम्बन्धित एक चर्चा की गई। इसमें बच्चों से गाँव-समाज में पुरुष और महिलाओं द्वारा किए जाने वाले कार्यों के बारे में बताने के लिए कहा गया। सभी बच्चों ने इस चर्चा में भाग लिया।

शुरुआत लड़कों से की गई। कक्षा में उपस्थित ग्यारह लड़कों ने अपनी बात रखी। इसमें प्रमुख रूप से पुरुष बाहर के काम करते हैं, नौकरी/मज़दूरी करने बाहर जाते हैं, घर के सभी निर्णय लेते हैं, खेतों में काम करते हैं आदि बातें शामिल थीं। लड़के जो बता रहे थे, उसे ब्लैक बोर्ड पर लिखा जा रहा था। इन कार्यों ने कक्षा के ब्लैक बोर्ड का दसवाँ हिस्सा घेर लिया था।

अब बारी लड़कियों की थी। उन्होंने दिन की शुरुआत से काम गिनाने शुरू किए। सुबह उठकर पानी भरना, घर में झाड़ू लगाना, जानवरों को चारा देना, सभी के लिए नाश्ता बनाना, बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करना, कपड़े धोना, दिन का खाना बनाना, बर्तन साफ़ करना, बच्चों और बुज़ुर्गों की देखभाल करना, खेत में पुरुषों की मदद करना आदि। लड़कियों दवारा गिनाए गए कार्यों से पूरा ब्लैकबोर्ड भर गया। मैंने सभी बच्चों से सवाल किया कि क्या महिला को इन सब कामों के बदले कोई वेतन मिलता है? कोई जवाब नहीं आया। दूसरा सवाल किया कि जब पुरुष बाहर काम करने जाता है क्या तब उसे वेतन मिलता है? सभी बच्चों का जवाब था, "हाँ मिलता है।"

गृहकार्य में दो सवाल दिए गए। पहला, घर जाकर यह पता लगाने की कोशिश करनी है कि महिलाओं को उनके काम का वेतन क्यों नहीं मिलता है? दूसरा, क्या आपको अपने घर में या आस-पड़ोस में लड़के और लड़की (ख़ासकर छोटे बच्चे) की परवरिश में कोई भेदभाव नजर आता है? आज बच्चों को यह तो समझ आया कि महिलाओं द्वारा इतना सारा काम किया जाता है, वह भी बिना वेतन के, फ़िर भी उन्हें घर में पुरुषों के बराबर सम्मान नहीं मिलता है।

दूसरे दिन, बच्चों को गृहकार्य के लिए दिए गए सवालों पर चर्चा से कक्षा की शुरुआत की गई। कुछ बच्चों ने बताया कि महिलाओं को वेतन इसलिए नहीं मिलता क्योंकि वे सभी काम महिलाओं के ही हैं, अगर वे नहीं करेंगी तो कौन करेगा। लेकिन कुछ बच्चों ने तर्क दिया और कहा कि जब यही महिलाएँ दूसरे घरों में जाकर यह सब काम करती हैं तब उन्हें इसके लिए वेतन मिलता है।

अब बातचीत के दौरान कई अन्य सवाल उठने लगे कि क्या घर में किए जाने वाले कार्यों को बाहर करने वाले कार्यों के समान नहीं माना जाना चाहिए? क्या उन्हें करना केवल महिलाओं की ज़िम्मेदारी है? आख़िर में राय बनी कि घर के कार्य महिला और पुरुष दोनों के हैं, दोनों को मिल-बाँट कर करने चाहिए। वहीं मैंने अपना पक्ष रखा कि हमारा संविधान समान कार्य के लिए समान वेतन की बात कहता है, यहाँ लिंग के आधार पर भेद करना ग़लत है।

अब दूसरे सवाल के उत्तर पर चर्चा शुरू हुई। लड़कियों ने कई प्रकार के भेदभाव सामने रखे। लड़कों को खेलने के लिए हवाई जहाज़ या कार दी जाती है, लड़कियों को गुड़िया। लड़कों को भरपूर खाने के लिए दिया जाता है और लड़कियों को बचा हुआ खाना। लड़कियों को धीमी आवाज़ में बात करने को कहा जाता है, लड़कों को कोई नहीं रोकता। लड़कियों को घर से बाहर कम जाने दिया जाता है, और रात में तो बिल्कुल नहीं जा सकती हैं, लेकिन लड़कों को किसी भी समय बाहर जाने दिया जाता है। लड़कों को अच्छे कपड़े पहनने के लिए दिए जाते हैं और अच्छे स्कूल में पढ़ने भेजा जाता है साथ ही ट्यूशन क्लास के लिए भी भेजा जाता है। लड़कियों को यह सब बहुत कम मिलता है। लड़कों को बाहर खेलने दिया जाता है, लड़कियों को नहीं। लड़कियों की कम उम्र में शादी कर दी जाती है, लड़कों की नहीं होती।

इन सब चर्चाओं के बाद समानता के सिद्धान्त को बच्चों के सामने रखा गया। उन्हें समझाया कि समानता का सिद्धान्त सभी लोगों को समान मानता है चाहे वह महिला हो या पुरुष। लेकिन सामाजिक व्यवस्था ने महिला और पुरुष के मध्य असमानता को जन्म दिया। घरेलू और देखभाल के कार्यों को कम आँका गया और इसे परिवार का मामला माना गया। इसी से समाज में लिंगभेद का जन्म हुआ, जबकि हमारा संविधान लिंग आधारित भेदभाव को नहीं मानता है, ऐसा करने वालों के खिलाफ़ उचित कानूनी कार्यवाही की व्यवस्था है। ऐसे ही अनेक कारणवश लड़कियाँ स्कूल नहीं जा पातीं, उन्हें शिक्षा से दूर रहना पड़ता है और वे अच्छी नौकरी और सम्मानजनक जीवन के सपने से कोसों दूर रह जाती हैं।

हमारे समाज में महिलाओं को देवी का अवतार माना जाता है लेकिन देवी (महिलाओं) की सामाजिक और आर्थिक स्थिति पर चर्चा नहीं होती है। ऐसे ही कुछ मुद्दों पर बच्चों से बात हुई। बच्चों ने अनेक सवाल किए, "पुरुष ऐसा क्यों करते है?", "समाज में ऐसे नियम किसने बनाए?", "लड़कियों के जन्म को अशुभ क्यों माना जाता है?", "उन्हें जन्म से पहले ही या बाद में क्यों मार दिया जाता है?"

दूसरे दिन के गृहकार्य में कुछ ऐसी महिलाओं के बारे में जानकारी जुटाने के लिए कहा गया जिन्होंने किसी न किसी तरह से देश के विकास में योगदान दिया हो?

Image source: SCERT

तीसरे दिन की शुरुआत बच्चों के जवाबों से हुई। सभी ने ऐसी महिलाओं के नाम बताए जिन्होंने देश के विकास में योगदान दिया- इन्दिरा गाँधी, सानिया मिर्ज़ा, पी.वी. सिन्धु, साइना नेहवाल, मनीषा ठाकुर, किरण बेदी, कल्पना चावला, कमला भसीन आदि। इसी में मैंने अपनी बात जोड़ी कि इन महिलाओं के आगे आने का कारण शिक्षा और अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता ही थी।

इस दिन की योजना में बच्चों को महिलाओं के साथ हो रहे अन्याय, शारीरिक व यौन शोषण से बचाव के अधिकारों से परिचित कराना भी शामिल था। बच्चों को *घरेलू हिंसा से महिला संरक्षण अधिनियम 2005* से परिचित कराया। उन्हें बताया कि इस अधिनियम के माध्यम से घर के अन्दर शारीरिक तथा मानसिक हिंसा से पीड़ित महिलाओं को क़ानूनी सुरक्षा उपलब्ध कराई जाती है। *विशाखा गाइडलाइन्स* की भी बात की गई, जिसके अन्तर्गत कार्यस्थल पर महिलाओं के साथ यौन शोषण से सुरक्षा उपलब्ध कराने के प्रावधान हैं। अन्त में उन्हें बताया गया कि देश के सभी नागरिकों को संविधान में समान अधिकार प्राप्त हैं - लिंग, जाति, धर्म आदि किसी भी आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता है।

इस अध्याय को पढ़ाते समय सबसे बड़ी चुनौती थी कि बच्चों को उनके परिवार में होने वाले लिंग आधारित असमान व्यवहार से परिचित करवाना। बच्चों के लिए अपने व्यक्तिगत एवं परिवार के अनुभव साझा करना आसान नहीं था। बच्चों के साथ होने वाले दुर्व्यवहार और हिंसा के विरुद्ध आवाज़ उठा पाने के लिए उन्हें जागरूक और सशक्त बनाना भी अपने आप में एक चुनौती थी। बच्चों द्वारा साझा किए गए अनुभव बेहद मार्मिक और संवेदनशील थे, उनके माध्यम से मुझे भी विभिन्न प्रकार के भेदभावों की जानकारी मिली।

सुनील कुमार अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी (छत्तीसगढ़) में सामाजिक विज्ञान के शिक्षक हैं। इसके पहले वे दिल्ली के एक इंटरनेशनल स्कूल में पढ़ाते थे। उन्होंने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से स्नातक तथा दिल्ली विश्वविद्यालय से राजनीति विज्ञान में एमए एवं बीएड किया है। उन्हें चित्रकारी एवं यात्राएँ करना पसन्द है। उनसे sunil.kumar1@azimpremjifoundatio.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

प्रयोग करके सीखना | चीज़ें डूबती या तैरती क्यों हैं!

उमाशंकर

हमने अपने दैनिक जीवन में बहुत सारे पदार्थों को पानी में कभी डूबते तो कभी तैरते देखा है। इन घटनाओं पर जब हमारा ध्यान जाता है तो मन में एक प्रश्न उठता है कि कुछ चीज़ें क्यों तैरती हैं और कुछ चीज़ें क्यों डूब जाती हैं? हमारा दिमाग़ इसका अनुमान लगाने का भी प्रयास करता है। जैसे पत्थर भारी रहता है, इसलिए डूब जाता है और काग़ज़ या प्लास्टिक हल्का होता है, इसलिए तैरता है। लेकिन क्या इसका उत्तर केवल यहीं पर ख़त्म हो जाता है? नहीं! जैसे विशालकाय पानी का जहाज़ पानी में नहीं डूबता लेकिन एक छोटा-सा पत्थर डूब जाता है। फिर हम मान लेते हैं कि इन पहेलियों के पीछे कोई कारण होगा! कहते हैं जहाँ कोई कारण है वहाँ विज्ञान अवश्य है। पर कौन-सा विज्ञान!

कक्षा सातवीं में मापन की अवधारणा को पढ़ाने के दौरान मुझे घनत्व की अवधारणा पर भी कार्य करना था। कक्षा में बच्चों से पूछा कि, "ऐसा क्यों होता है कि कुछ चीज़ें पानी में तैरती हैं और कुछ चीज़ें डूबती हैं?"

इस पर बच्चों का तर्क आया कि, "क्योंकि कुछ चीज़ें हल्की होती हैं और कुछ चीज़ें भारी। जो चीज़ हल्की होती है वह तैरती है और जो भारी होती है वह डूब जाती है।"

मैंने कहा, "अच्छा! ऐसा है तो चलो हम प्रयोग करके देखते हैं। यह देखिए यह रही कटोरी और यह रही एक छोटी-सी कील। बताओ कौन हल्की है और कौन भारी?" बच्चों ने उत्तर दिया, "कटोरी भारी है और कील हल्की।"

मैंने पानी से भरे काँच के एक बर्तन में दोनों वस्तुओं को डुबोया। हम सबने देखा, कील डूब गई और कटोरी तैरती रही।

"ऐसा क्यों हुआ?" मैंने बच्चों से पूछा।

एक बच्चा बोला, "कटोरी उथली थी इस कारण तैर रही है। लेकिन कील उथली नहीं है।"

"पर आप लोगों ने कहा था कि जो भारी होगी वह डूबेगी।" बच्चे असमंजस में पड़ गए।

उन्होंने कहा, "नहीं,नहीं! हम ऐसा नहीं कह सकते।"

मैंने कहा, "तो फिर क्या कारण है भला!"

बच्चे आपस में चर्चा करने लगे लेकिन कुछ मूल बात निकल कर सामने नहीं आई। मैंने बात आगे बढ़ाई और पुनः एक प्रयोग का प्रदर्शन किया।

मैंने एक बीकर लिया और उसमें 200मि.ली. पानी डाला। इसके बाद उसमें 200 मि.ली. मिट्टी का तेल डाला। कुछ ही देर में मिट्टी का तेल और पानी अलग-अलग परत बनाकर पृथक नजर आ रहे थे। बच्चों ने शायद यह पहले भी देखा था। क्योंकि कुछ बच्चे धीरे–धीरे कह रहे थे कि- अरे देखना! दोनों अलग–अलग हो जाएँगे।

मैंने पूछा, "यह दोनों द्रव आपस में क्यों नहीं मिले?"

बच्चों का एक समूह बोला, "ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि पानी में तेल नहीं घुल सकता।"

बच्चों के दूसरे समूह ने व्याख्या की, "पानी में खनिज लवण होते हैं, जिसके कारण वह भारी होता है और नीचे चला जाता है। लेकिन तेल में हवा होती होगी जिसके कारण वह ऊपर आ जाता है।"

बच्चों के तीसरे समूह का कहना था, "आपने जो पहले डाला वह नीचे रहा और जो बाद में डाला वह ऊपर। अगर हम पहले तेल डालते तो तेल ही नीचे रहता।"

एक बच्चा बोला, "हमने सबसे पहले प्रयोग में देखा था कि कील डूब गई और भारी कटोरी नहीं डूबी। यहाँ अन्तर, पदार्थ कितना फैला है उसका है, तो हो सकता है कि तेल का फैलाव पानी से ज़्यादा हो।"

इन सारे तर्कों को प्रयोग करके परखने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं था क्योंकि सभी अपने तर्कों को बेहतर समझ रहे थे। सटीक निष्कर्ष तक पहुँचना आवश्यक था।

हमने पानी की थोड़ी मात्रा परखनली में लेकर उसे गर्म किया। कुछ देर में बुलबुले निकलने लगे। इससे साबित हो रहा था पानी में हवा मौजूद होती है। बच्चों को समझते देर नहीं लगी कि पानी में तो हवा है और इससे एक तर्क में शिथिलता आ गई।

फिर हमने दूसरे तर्क की ओर रुख़ किया। एक बच्चे ने बीकर में पहले मिट्टी का तेल डाला फिर पानी। पर यह क्या! मिट्टी का तेल तो धीरे से पूरा का पूरा पानी के ऊपर ही आ गया। इस तरह से एक और तर्क भी ख़ारिज हो गया।

फिर हमने अगले तर्क की ओर रुख़ किया। मैंने एक बीकर में लगभग 100मि.ली. पानी लिया। फिर उसमें ग्लिसरीन को बीकर की दीवार के सहारे धीरे–धीरे डाला। बच्चे यह देखने के लिए काफ़ी उत्सुक थे कि आखिर होगा क्या? ग्लिसरीन की एक परत नीचे तले में बैठ गई और पानी ऊपर आ गया।

मैंने पूछा, "ऐसा क्यों हुआ, जबकि ग्लिसरीन तो पानी में घुलनशील है?"

बच्चे बोले, "हम यह नहीं कह सकते कि पदार्थ अघुलनशील है इसलिए परत बन जा रही है। घुलनशील होने पर भी यह परत बन रही है शायद इसलिए क्योंकि ग्लिसरीन पानी से गाढ़ा है।" परन्तु इससे अघुलनशील वाला तर्क भी लगभग ख़ारिज हो रहा था।

अन्तिम तर्क सबसे अलग किन्तु सोचने वाला था। एक बच्चे ने कहा कि यदि कील को पीटकर फैला दें तो शायद यह तैरने लगेगी। बच्चे का कहना था कि तेल अधिक फैला हुआ है जबकि पानी कम फैला हुआ। इस तर्क ने समझ को एक नई दिशा दी। लेकिन यह बात बहुत सारे बच्चों को समझ नहीं आई।

मैंने बच्चों से पूछा, "1 किलो रूई और 1 किलो शक्कर में से क्या हल्का होगा?"

कई बच्चे (एक स्वर में) बोले, "रूई!"

लेकिन थोड़ी देर बाद बच्चे सोचने लगे और कहने लगे कि दोनों की मात्रा तो एक समान है, तो दोनों का वज़न समान होगा।

मैंने पूछा, "कौन ज़्यादा जगह घेरेगा?"

बच्चों ने जवाब दिया, "रूई, क्योंकि वह फैली हुई है जबकि शक्कर के कण पास-पास हैं।"

कम घना(विरल) = अधिक क्षेत्रफल में फैलाव = कम घनत्व

अधिक घना(सघन) = कम क्षेत्रफल में फैलाव = अधिक घनत्व

इस तरीक़े से मैं अधिकांश बच्चों को पदार्थ के घनत्व की विशेषताओं को समझाने में सफल हो पाया। क्या यह बात जो ठोस वस्तुओं पर लागू हो रही थी और वह तरल में भी तो लागू नहीं हो रही थी? प्रयोग के दौरान पानी और मिट्टी के तेल, दोनों के आयतन समान थे। तो क्या इनके वज़न अलग–अलग रहे होंगे जिसके कारण वे परत बनाकर अलग थे? यह प्रश्न बच्चों के मन में जन्म ले रहा था।

इसको सरल करने के लिए मैंने पानी और मिट्टी के तेल के साथ अन्य तरल जैसे ग्लिसरीन, तिल के तेल के समान आयतन को भी बीकर में डाला। बारी-बारी से डालने पर भी कुछ पदार्थ ऊपर की ओर आ रहे थे, तो कुछ नीचे भी चले जा रहे थे। बच्चे यह देखकर काफ़ी आश्चर्यचकित थे कि प्रत्येक तरल की अलग-अलग परतें बन रही हैं।

एक बच्चे ने कहा, "यदि प्रत्येक पदार्थ का आयतन एक जैसा है और अलग-अलग परत बन रही तो इसके वज़न में निश्चित ही अन्तर होना चाहिए। हमें इन सब पदार्थों के वज़न निकालने चाहिए।" सभी बच्चों ने इस पर हामी भरी।

पर द्रव्यमान का मापन करें कैसे? तभी एक बच्चे ने सुझाया कि हम सीरिंज की सहायता से इसका मापन कर सकते हैं। हम सीरिंज में अलग-अलग पदार्थ के समान आयतन लेंगे और उसे इलेक्ट्रॉनिक तुला में तौल कर देखेंगे। बच्चों के ग्रुप ने बारी–बारी से कक्षा के सामने प्रदर्शन करते हुए यह क्रियाकलाप करके देखा और उन्होंने सारणी बनाई।

इसे बच्चों ने वज़न के घटते क्रम में जमाया :

ग्लिसरीन > पानी > तिल तेल > मिट्टी तेल

ग्लिसरीन का वज़न सबसे अधिक और मिट्टी के तेल का वज़न सबसे कम था। यह क्रम बीकर में निचली से ऊपरी परत तक बने क्रम को ही प्रदर्शित करता था। अब बच्चों को समझ में आ चुका था कि घनत्व पर आयतन और द्रव्यमान का किस प्रकार प्रभाव पड़ता है और क्यों पदार्थ तैरते हैं या डूब जाते हैं।

यह मेरा एक बेहतरीन अनुभव था जहाँ कक्षा में तर्क, प्रयोग, विश्लेषण और प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर बच्चे किसी अवधारणा को समझ रहे थे और दैनिक जीवन से जोड़कर देख रहे थे।

क्र	पदार्थ	आयतन	मात्रा (वज़न)
1	मिट्टी का तेल	1ml	7.6 mg
2	पानी	1ml	8.7 mg
3	ग्लिसरीन	1ml	11.7 mg
4	तिल का तेल	1ml	8.3 mg

उमाशंकर अज़ीम प्रेमजी स्कूल, धमतरी, छत्तीसगढ़ में 2016 से विज्ञान विषय के शिक्षक के बतौर कार्यरत हैं। वे बायोटेक्नोलॉजी में स्नातक एवं प्राणी विज्ञान में परास्नातक की उपाधि प्राप्त हैं। एक शिक्षक के तौर पर उनकी रुचियाँ बच्चों के साथ प्रयोग, खोजबीन और विश्लेषण के द्वारा विज्ञान की प्रक्रियाओं को सीखने में हैं।
उनसे umashankar@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

नली-कली | सभी के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की ओर एक क़दम

उमाशंकर पेरिओडी

पृष्ठभूमि

नली-कली से मेरा परिचय 2007 में यादगीर ज़िले के सुरपुर नामक स्थान में *चाइल्ड-फ्रेंडली स्कूल इनिशिएटिव* (सीएफएसआई) के माध्यम से हुआ था। हम सरकारी स्कूलों के पूर्ण और समग्र सुधार के लिए एक ब्लॉक में कार्य कर रहे थे और इस पहल में नली-कली एक महत्त्वपूर्ण घटक था। लम्बे संघर्ष के बाद सुरपुर की टीम को यह बात समझ में आ चुकी थी कि बच्चों की शिक्षा के स्तर में सुधार तभी होगा जब शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया पर ध्यान दिया जाएगा और नली-कली पद्धति के माध्यम से यह सम्भव था।

नली-कली पद्धति इसलिए भी महत्त्वपूर्ण थी क्योंकि इसमें बहु-ग्रेड, बहु-स्तरीय तथा गतिविधि-आधारित शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया अपनाई जाती थी; अतः इससे शिक्षकों की अपेक्षित संख्या की कमी को लेकर जो महत्त्वपूर्ण बाधा सामने आया करती थी, वह भी सम्बोधित हो सकती थी। ज्यों-ज्यों हम इस पद्धति के माध्यम से कार्य करते गए, हमें विश्वास होता गया कि यह कार्यप्रणाली किसी भी अन्य प्रणाली की तुलना में अधिक सफल रूप से हर बच्चे तक पहुँचेगी और वह भी अपने मूल तत्व अर्थात गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के साथ, जिसके आधार पर नली-कली पद्धति बनाई गई है। इससे सुरपुर के सभी 309 स्कूलों के प्रत्येक बच्चे तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पहुँचाने की हमारी प्रेरणा को बढ़ावा मिला।

इसे वास्तविकता का रूप देने के लिए हमने मई के तीसरे सप्ताह में उत्तर-पूर्व कर्नाटक के छह ज़िलों में नली-कली शिक्षकों के लिए एक बड़े पैमाने पर ऑनलाइन क्षमता-निर्माण प्रक्रिया का आयोजन किया। कलबुर्गी के शिक्षा आयुक्त के कार्यालय के निमंत्रण पर एक सप्ताह के लिए ग्यारह हज़ार शिक्षकों ने इस क्षमता-निर्माण प्रक्रिया में भाग लिया। हमने सभी पहलुओं में उनकी सहायता की जैसे : परिकल्पना करना, योजना बनाना, स्रोत व्यक्तियों को प्रशिक्षित करना और डिजिटल प्लेटफॉर्म को सम्भालने के लिए फील्ड के छोटे समूहों की सहायता करना। दिलचस्प बात यह है कि सप्ताह भर का यह कार्यक्रम शिक्षकों और अधिकारियों को बहुत अच्छा लगा। शुरू में थोड़ी-सी समस्या हुई, लेकिन बाद में शिक्षक सक्रिय रूप से चर्चा और अन्तःक्रिया करने लगे।

यह एक उपलब्धि थी क्योंकि मुख्य रूप से यह सभी प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक थे और उनमें से अधिकांश कर्नाटक के सर्वाधिक पिछड़े ज़िलों के ग्रामीण स्कूलों में कार्य करते थे। एक अध्ययन के अनुसार इस सफलता का कारण नली-कली की व्यवस्थित प्रणाली और उसकी स्पष्ट पद्धति थी। सामान्यतः इस प्रक्रिया में शिक्षकों के लिए निर्देश होते हैं और उन्हें शिक्षण-अधिगम सामग्री प्रदान की जाती है।

यह पद्धति सभी बच्चों को बुनियादी स्तर के अधिगम की गारण्टी देती है, जिसमें इस बात को भी महत्त्व दिया जाता है कि बच्चे, शिक्षकों और साथियों के समर्थन के साथ *ख़ुद पहल करते हुए अपनी गति के हिसाब सीखें।* इस पद्धति में एक सुगमकर्ता के रूप में शिक्षक की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसलिए इस कार्यक्रम की सफलता के लिए नली-कली के प्रत्येक शिक्षक तक पहुँचना ज़रूरी था।

सुरपुर की टीम के लिए नली-कली का कार्य अत्यन्त गहन था क्योंकि हम तीन स्तरों पर कार्य कर रहे थे : पहला, कक्षा स्तर पर हर एक शिक्षक को साप्ताहिक ऑनसाइट मदद देना, दूसरा, किए गए कार्य की पाक्षिक समीक्षा बैठकें आयोजित करना और तीसरा, क्लस्टर और ब्लॉक स्तरों पर द्विमासिक शिक्षक क्षमता-निर्माण प्रक्रियाओं की योजना बनाना। टीम के लिए भी यह कार्य करते हुए सीखने की एक क्रिया थी, ठीक वैसे ही जैसा कि शिक्षकों के सेवाकालीन प्रशिक्षण में होता है। इसके चलते व्यक्तिगत रूप से सदस्यों का सीखना और योगदान काफ़ी अधिक था।

हमने 2004 में सीएफएसआई शुरू किया था और 2007 में हमारे पास बच्चों के अधिगम-स्तर का मूल्यांकन था। हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि परिणाम निराशाजनक थे क्योंकि मूल्यांकन से पता चला कि तीन साल बाद भी बच्चों के *सीखने के स्तर में कोई सुधार नहीं* हुआ था। ज़ाहिर है कि हमसे पूछताछ की गई। इतना निवेश करने के बाद भी कोई परिणाम कैसे नहीं निकला? या बच्चों के सीखने के स्तर में कोई सुधार क्यों नहीं हुआ! हमें थोड़ा धक्का लगा था। हमने अनुरोध किया कि हमें तीन वर्ष और दिए जाएँ, जो हमें दिए भी गए। अब अपेक्षाएँ बहुत स्पष्ट थीं।

परिवर्तन करना

हमने शिक्षकों की क्षमता निर्माण के लिए उनके साथ कार्य करने पर अपना ध्यान केन्द्रित किया। एक बात बिल्कुल स्पष्ट थी कि अपने विकास के लिए शिक्षकों को आसानी से संसाधन उपलब्ध नहीं होते थे। इसके अतिरिक्त, शिक्षकों के पास ऐसे अवसर नहीं थे जहाँ वे एक साथ मिलकर चर्चा करें, अपने अनुभव और चुनौतियों को साझा करें, सुझाव प्राप्त करें और ख़ुद को उन्नत करें। हमने महसूस किया कि शिक्षकों के स्वैच्छिक शिक्षण समुदाय का निर्माण करना उनके पेशेवर विकास के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण था।

शिक्षकों के फोरम और अधिगम केन्द्र

इस प्रकार उन शिक्षकों के लिए *स्वैच्छिक शिक्षक मंच* (वॉलंटरी टीचर्स फोरम या वीटीएफ) का जन्म हुआ जो मिलकर चर्चा करने एवं अपने विचार और अनुभव साझा करने के लिए स्वयं का एक स्थान चाहते थे। इसके कारण शिक्षक अधिगम केन्द्र (टीचर लर्निंग सेंटर या टीएलसी) बनाए गए जो संसाधन-समृद्ध थे। वहाँ एक अच्छा पुस्तकालय, विज्ञान और गणित की शिक्षण-अधिगम सामग्री, कंप्यूटर व इंटरनेट कनेक्शन था। हालाँकि हमारा अनुभव बताता है कि शिक्षकों को संसाधन कक्षों की ओर आकर्षित करना आसान नहीं है, यहाँ तक कि समृद्ध रूप से सुसज्जित शिक्षक अधिगम केन्द्रों में भी। अस्तु, टीएलसी धीरे-धीरे लोकप्रिय होता गया और आज हमारे पास कर्नाटक के दस ज़िलों में पचास ऐसे शिक्षक अधिगम केन्द्र हैं।

एक न्यूज़लैटर की स्थापना

नली-कली को लेकर एक आलोचना यह की जाती थी कि मौजूदा संरचना में शिक्षकों को सोचने और चिन्तन करने के अवसर नहीं दिए गए थे। अपने अनुभवों के बारे में बताने से सोचने और चिन्तन करने में मदद मिलती है। चूँकि लेखन से लोगों को चिन्तन करने में और भी ज़्यादा मदद मिलती है, इसलिए हमने एक न्यूज़लैटर शुरू किया जिसमें शिक्षकों के कक्षा सम्बन्धी अनुभवों पर लेख शामिल किए जाते थे। प्रारम्भ में तो शिक्षकों ने केवल वही लिखा जो उन्होंने किया था, लेकिन धीरे-धीरे वे आगे बढ़े और इन अनुभवों पर चिन्तन करना शुरू किया। लेखन की वजह से वे अन्य सामग्रियों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित हुए और इससे उन्हें अपने ज्ञान के क्षितिज का विस्तार करने में मदद मिली।

मेले

कक्षा और पाठ्यपुस्तकों से परे सीखने का एक और नवाचार भी किया गया। इसके तहत बच्चों ने विज्ञान, भाषा, गणित और सामाजिक विज्ञान की विभिन्न अवधारणाओं पर सामग्री तैयार की और अन्य बच्चों, अभिभावकों और समुदाय के सामने सार्वजनिक प्रस्तुतियाँ दीं। हालाँकि इससे प्रभावशाली परिणाम तो देखने में नहीं आए, किन्तु इन सभी चीज़ों ने संकीर्ण संरचना से परे जाने में मदद की और नली-कली प्रक्रिया के लिए पूरक का कार्य किया।

परामर्श देना (mentoring)

हृदय कान्त दीवान के सहयोग से नली-कली कार्यक्रम की गहन समीक्षा की गई जो हमारे कार्य के साथ निकटता से जुड़े हुए थे। उन्होंने नली-कली कार्यक्रम का विश्लेषण करने और उसे समझने में हमारी मदद की। इससे प्राप्त एक महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि यह थी कि हमारी कार्यप्रणाली इतनी संरचित और केन्द्रीय रूप से संचालित थी कि इसमें शिक्षक के लिए कोई गुंजाइश नहीं थी। किसी शिक्षक के लिए सब कुछ इस तरह से पूर्वनिर्धारित और संरचित नहीं किया जा सकता जिसमें उसके सोचने, स्वतःस्फूर्त अनुक्रिया दिखाने और किसी विशेष बच्चे को किसी दिए गए सन्दर्भ में तभी के तभी सिखाने की कोई गुंजाइश न हो। इसमें शिक्षक निर्देशों का पालन करते और उन्हें जो बताया गया था, वही कर देते थे!

हृदय कान्त दीवान ने इस ओर ध्यान दिलाया कि इस तरह का तरीक़ा गतिविधि अधिक और शिक्षा कम है। इसलिए, हालाँकि यह एक अच्छी शुरुआत थी, लेकिन शिक्षकों को इससे आगे जाना था। उन्हें स्वतंत्र और रचनात्मक रूप से सोचना था, बच्चे और उसके सन्दर्भ को समझना था और उसके अनुकूल अनुक्रिया दिखानी थी। शिक्षकों को निर्देशों का अनुसरण करने और जो बताया गया है केवल वही करने के दायरे परे जाना होगा। उन्हें स्वयं सोचना होगा, इस प्रक्रिया पर चिन्तन करना होगा और नवाचार के माध्यम से हर बच्चे के अधिगम में सहायता करनी होगी।

और तब हमने शिक्षक-शिक्षा के लिए अवसर और स्थान बनाने की पूरी प्रक्रिया शुरू की। हमने शिक्षकों के साथ मिलकर कार्य करना शुरू कर दिया। हमने वीटीएफ, मेले और टीएलसी की अपनी पहलों को जारी रखने के साथ में शिक्षकों के साथ सह-शिक्षण किया, उन्हें समर्थन दिया और उनकी सहायता की। हमारा पूरा ध्यान शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया पर था।

एक लम्बी यात्रा

जिस किसी ने भी शिक्षा के क्षेत्र में कार्य किया है, वह जानता है कि सुधार में बहुत अधिक समय लगता है। परिणाम देख पाना और प्रभाव डाल पाना धीमी प्रक्रिया है; यह एक लम्बी यात्रा है! इसने हमारे धैर्य की परीक्षा ली क्योंकि सुधार हो तो रहा था लेकिन उसकी गति बहुत धीमी थी। हमने सात

साल के निष्ठापूर्ण कार्य के बाद ही बच्चों के सीखने के स्तर में मामूली सुधार देखा। 2015 के बाद, अब हम यह देखते हैं कि एसएसएलसी के परिणामों में उत्तर-पूर्व कर्नाटक के अन्य सभी ब्लॉकों की तुलना में सुरपुर के विद्यार्थियों का प्रदर्शन लगातार बेहतर हो रहा है।

आज जब हम मुड़कर पीछे देखते हैं तो पाते हैं कि 1995 में कर्नाटक के मैसूर ज़िले के एच.डी.कोटे ब्लॉक में यूनिसेफ की सहायता से पायलट परियोजना के रूप में शुरू हुई नली-कली परियोजना एक चौथाई सदी से अस्तित्व में है। जिस व्यक्ति ने इस बहु-ग्रेड, बहु-स्तरीय, गतिविधि-आधारित शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया को शुरू करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई, वे थे श्री एम.एन.बेग, जो उस समय एच.डी.कोटे के ब्लॉक एजुकेशन अधिकारी थे। उन्होंने इस कार्यक्रम में रुचि रखने वाले कुछ शिक्षकों के साथ कार्य की शुरुआत की। वे रमा और पद्मनाभ राव द्वारा शुरू किए गए ऋषि वैली सैटलाइट एक्स्टेंशन प्रोग्राम का अध्ययन करने के लिए आन्ध्रप्रदेश के मदनपल्ली में ऋषि वैली स्कूल गए। यह प्रोग्राम ग्रामीण क्षेत्रों में प्रभावी प्राथमिक शिक्षा के एक मॉडल के रूप में उभरा था।

1995 में एच.डी.कोटे के इन शिक्षकों का कार्य सराहनीय है। वे प्रेरित और परिश्रमी लोग थे, जिन्होंने नली-कली के लिए आवश्यक हर चीज़ पर कार्य किया और उसे बनाया - पाठ्यक्रम, शिक्षण-अधिगम सामग्री, प्रक्रिया, समीक्षा और शोध। इन सबसे बढ़कर यह बात मुख्य थी कि उन्हें इस प्रयोग में गहरी आस्था थी और वे इसके प्रति आशावान थे।

बाल-केन्द्रित दृष्टिकोण

श्री बेग कहा करते थे कि नली-कली को एक आनन्दप्रद बाल-केन्द्रित दृष्टिकोण के अनुसार डिज़ाइन किया गया है, जिसमें कक्षा में बहु-ग्रेड, बहु-स्तरीय अधिगम पर ध्यान दिया गया था। अधिगम की विभिन्न शैलियों को ध्यान में रखते हुए इसमें आकलन के पारम्परिक/सामान्य तरीक़ों को अधिगम प्रक्रिया के सतत और व्यापक आकलन में परिवर्तित किया गया और इस तरह से अधिगम को एक ऐसा अनुभव बनाया गया जो भय और तनावमुक्त हो।

पाठ्यक्रम को छोटी और प्रबन्धनीय इकाइयों में पुनर्गठित किया जाता है जिन्हें मील का पत्थर कहते हैं। प्रत्येक विषय (भाषा, गणित, पर्यावरण अध्ययन) के लिए मील के पत्थर हैं। गतिविधियों और अधिगम-सामग्री के चरणों से गुज़रता हुआ बच्चा सीखने की सीढ़ी पर चढ़ता है। कक्षाओं को एक साथ रखा जाता है और इसमें अपने साथियों से सीखने की पर्याप्त गुंजाइश रहती है। बच्चे सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेते हैं, वे अपनी स्थिति को पहचानते हुए किसी एक गतिविधि समूह कार्ड का चयन करते हैं और वे जिस गतिविधि समूह से जुड़े होते हैं उसमें शामिल होते हैं। यह इस प्रकार से हैं :

1. पूर्व-तैयारी
2. तैयारी
3. क्षमता तैयारी की गतिविधियाँ
4. अधिगम
5. अभ्यास
6. मूल्यांकन

शिक्षक पूरी कक्षा में घूमते हुए विभिन्न समूहों के बच्चों को विभिन्न प्रकार की सहायता प्रदान करते हैं। बच्चों द्वारा निर्मित सामग्री को कक्षा में बनाए गए अधिगम पण्डाल में प्रदर्शित किया जाता है।

प्रगति और वर्तमान इतिहास

25 साल की अपनी यात्रा के दौरान नली-कली कार्यक्रम धीरे-धीरे एच.डी.कोटे के कुछ ब्लॉकों से लेकर कर्नाटक के सभी उनचास हज़ार सरकारी स्कूलों में पहुँच गया है। 1995-96 में यूनिसेफ की मदद से एच.डी.कोटे के कुछ विद्यालयों में शुरू होने के बाद 1999-2000 तक यह कार्यक्रम ज़िले के सभी स्कूलों द्वारा अपनाया गया जिसे पुनः यूनिसेफ और विश्व बैंक का समर्थन मिला। 2004-05 में इसे राज्य के आठ अतिरिक्त ब्लॉकों के सभी छोटे स्कूलों में शुरू किया गया। 2007-08 तक इसे राज्य के उन सभी स्कूलों में कक्षा I और II को मिलाकर शुरू किया गया जहाँ विद्यार्थियों की संख्या तीस से कम थी। 2009-10 में कक्षा I, II और III को मिलाकर राज्य के सभी कन्नड़ा माध्यम स्कूलों में नली-कली की शुरुआत की गई। अब कर्नाटक के सभी स्कूलों में नली-कली है। कर्नाटक में अब नली-कली पर काफ़ी सोच-विचार किया जा रहा है और यह कई अध्ययनों का विषय बन गया है। इस पद्धति का मुख्य उद्देश्य यह है कि प्रत्येक बच्चा सीखने की प्रक्रिया में भाग ले और उसे सीखने में आनन्द आए।

आगे का रास्ता

सर्व-समावेशी शिक्षा के लिए शिक्षक का प्रत्येक बच्चे तक पहुँचना बहुत महत्त्वपूर्ण है। इसके निम्नलिखित फायदे हैं :

- बच्चे बिना किसी डर के प्रश्न पूछ सकते हैं और शिक्षक और साथी धैर्यपूर्वक उत्तर देते हैं।
- जिस किसी बच्चे को मार्गदर्शन की ज़रूरत होती है उसे अपने शिक्षकों या साथियों से यह सहायता मिल जाती है।

- बच्चों के कार्य को सुनियोजित अधिगम पण्डाल (बच्चों द्वारा तैयार की गई सभी सामग्रियों और अन्य शिक्षण सामग्री को लटकाने के लिए कक्षा के अन्दर बनाई गई अस्थायी छत) पर बहुत विशिष्टता के साथ दिखाया जाता है।
- शिक्षण सामग्रियाँ कक्षा में ही उपलब्ध होती हैं।
- विद्यार्थी भयमुक्त वातावरण में कार्य करते हैं।
- बच्चों की अनुक्रियाओं से पता चलता है कि उन्होंने शिक्षक द्वारा की गई व्याख्या और निर्देशों को समझ लिया है।
- बच्चों के घर की भाषाओं का उपयोग स्वतंत्र रूप से किया जाता है।

निष्कर्ष

हालाँकि नली-कली की 25 साल पुरानी यात्रा में बहुत से उतार-चढ़ाव आए हैं, फिर भी हमें लगता है कि यह यात्रा सफल रही है। हम अपने शिक्षकों को प्रशिक्षित करने में सक्षम हुए हैं; प्रशिक्षण मॉड्यूल, स्रोत व्यक्ति और सामग्री तैयार हैं, अब हमारी तत्काल आवश्यकता यह है कि अधिक शिक्षकों की नियुक्ति की जाए। *सभी के लिए शिक्षा* एक सरल तटस्थ विचार नहीं है; यह एक बहुत ही शक्तिशाली अवधारणा है जो कुछ अर्थों में अत्यधिक राजनीतिक भी है, जहाँ 'राजनीतिक' का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति को सशक्त बनाना और इसके लिए समाज के सबसे अधिक हाशिए पर रहने वाले वर्गों सहित सभी को शिक्षा उपलब्ध कराना।

इसके लिए हमें और अधिक परिश्रम करने के लिए तैयार रहना होगा क्योंकि केवल प्रत्येक बच्चे तक पहुँचना ही पर्याप्त नहीं है। उतनी ही महत्त्वपूर्ण बात यह भी है कि उसे किस तरह की शिक्षा प्रदान की जा रही है। सभी के लिए शिक्षा के विचार में यह बात सन्निहित है कि शिक्षा *गुणवत्तापूर्ण* हो, जिसके लिए हमें अभी काफ़ी लम्बा रास्ता तय करना है। हम नली-कली के माध्यम से लगभग सभी बच्चों तक भले ही पहुँच चुके हों, लेकिन क्या वे सारे बच्चे गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं?

इसका जवाब देने के लिए अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन और टाटा ट्रस्ट द्वारा दो ज़िलों (एक कर्नाटक में और दूसरा महाराष्ट्र में) में 'लिटरेसी रिसर्च इन इंडियन लैंग्वेज' (LiRIL) अध्ययन किया गया; जिससे हमें निचली कक्षाओं में भाषा के अधिगम को सुधारने की दिशा में कुछ अन्तर्दृष्टि मिली। अध्ययन से पता चला है कि दोनों ज़िलों में भाषा का अधिगम औसत से कम है। नली-कली की पद्धति बाल-केन्द्रित है और सीखने की व्यक्तिगत प्रक्रियाओं में सुनने, बोलने, बातचीत करने, समूहों में कार्य करने और बच्चे को संवाद करने के लिए भाषा का उपयोग करने के अवसर देने जैसे आवश्यक कौशलों को अधिक स्थान नहीं मिलता। नली-कली में समूह-कार्य भी सीमित होता है क्योंकि बच्चा भले ही समूह में बैठा हो लेकिन वह व्यक्तिगत रूप से कार्य कर रहा होता है। मुझे लगता है कि यह पहलू बहुत महत्त्वपूर्ण है - कक्षा और उसकी प्रक्रियाएँ अधिगम के अनुकूल हों, बच्चों को दूसरों की बात सुनने के बहुत सारे अवसर मिलें और उन्हें ठोस अनुभवों से लेकर अमूर्त विचारों वाले विभिन्न विषयों पर बोलने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। यह केवल विभिन्न समूहों, अवसरों और स्थितियों में होता है क्योंकि इन अन्तःक्रियाओं में बच्चों को बातचीत के लिए भाषा का उपयोग करना पड़ता है। LiRIL का यह अध्ययन एक ऐसी महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि है जिसे हमें गम्भीरता से लेना होगा और उसे नली-कली पद्धति में शामिल करना होगा ताकि हम गुणवत्तापूर्ण शिक्षा को हर बच्चे तक पहुँचा सकें।

आज स्थिति 1995 से बहुत अलग है, जब एच.डी.कोटे में नली-कली प्रयोग शुरू हुआ था। इन वर्षों के दौरान, नली-कली पद्धति ने एक व्यापक आधार बनाया है - बुनियादी न्यूनतम स्तर की शिक्षा के साथ सभी बच्चों तक पहुँच। अब हमारे सामने यह चुनौती है कि शिक्षकों को सशक्त बनाया जाए ताकि वे बुनियादी ढाँचे और संरचना से परे जाकर और अपने शिक्षकत्व का प्रयोग कर *सभी* बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा उपलब्ध करा सकें।

उमाशंकर पेरिओडी अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में कर्नाटक राज्य प्रमुख हैं। विकास के क्षेत्र में उन्हें तीस से भी अधिक वर्षों का अनुभव है। उन्होंने कर्नाटक के बीआर हिल्स में जनजातीय शिक्षा के साथ-साथ राष्ट्रीय साक्षरता अभियान में बड़े पैमाने पर योगदान दिया है। वे ज़मीनी स्तर के कार्यकर्ताओं और प्राथमिक विद्यालय के शिक्षकों को, जिसे वे 'बेयरफुट रिसर्च' कहते हैं, प्रशिक्षण देते आ रहे हैं। वे कर्नाटक स्टेट ट्रेनर्स कलेक्टिव के संस्थापक सदस्य भी हैं। उनसे periodi@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

क्या कौशल-समावेशी शिक्षा सभी के लिए स्कूली शिक्षा सम्भव करेगी?

वी. शान्ताकुमार

सरोकार रखने वाले कई लोगों का मानना है कि स्कूली शिक्षा में कौशलों का अपर्याप्त समावेशन नुकसानदायक है क्योंकि इससे कई बच्चे (या उनके माता-पिता) स्कूली शिक्षा में रुचि खो देते हैं, बच्चे अपने माता-पिता या समुदाय के पारम्परिक कौशलों से दूर हो जाते हैं। भारत में स्कूली शिक्षा पूरी कर चुके वयस्कों की व्यापक बेरोज़गारी का एक कारण यह भी है। यह एक जटिल मुद्दा है और इसे समझने के लिए हमें भारत के अनुभव सहित ऐतिहासिक और अन्तर्राष्ट्रीय अनुभव देखने होंगे।

औपनिवेशिक शिक्षा

कई टिप्पणीकारों ने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन को इस बात के लिए दोषी ठहराया है कि उसने भारत में एक *सामान्य-उद्देश्य* वाली स्कूली शिक्षा शुरू की जो विभिन्न प्रकार के कौशलों का विकास नहीं करती थी। औपनिवेशिक प्रशासन द्वारा ऐसा निर्णय लेने के पीछे एक कारण था। भारत के लिए शिक्षा डिज़ाइन करते समय यूके में बहस छिड़ी हुई थी, जहाँ पर उस समय तक दो प्रकार की स्कूली शिक्षा चल रही थी : एक, सामान्य-उद्देश्य वाली स्कूली शिक्षा, जिसका पक्षपोषण मुख्य रूप से सम्पन्न लोग करते थे और दूसरी, जिसे 'प्रशिक्षुता या अप्रेंटिसशिप' कहा जाता था, ग़रीब परिवारों के बच्चों के लिए थी। ऐसी दोहरी शिक्षा प्रणाली के सामाजिक प्रभावों को लेकर चिन्ताएँ थीं। जो लोग असमानता के बारे में सोचते थे, उन्होंने तर्क दिया कि निर्दिष्ट वर्षों तक सभी बच्चों को सामान्य-उद्देश्य वाली स्कूली शिक्षा दी जाए। ब्रिटेन में रणनीति के इसी बदलाव ने भारत में औपनिवेशिक शिक्षा को प्रभावित किया।

गाँधी का दृष्टिकोण

गाँधी औपनिवेशिक शिक्षा के खिलाफ़ थे और इसका एक कारण था उस समय के अधिकांश भारतीयों की आजीविका से इसका जुड़ाव न होना। उन्होंने अपनी *नई तालीम* की अवधारणा में कृषि और कारीगरी के कौशलों को शिक्षा के अंग के रूप में शामिल किया। कुछ लोगों ने इस विचार का विरोध किया, उदाहरण के लिए, तमिलनाडु के द्रविड़ कज़कम (डीके) के नेता, जिन्हें लगा कि इसके कार्यान्वयन से जाति व्यवस्था जारी रहेगी।

हालाँकि, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर के कुछ उदारवादी लोग जैसे जवाहर लाल नेहरू, गाँधी के दृष्टिकोण को लेकर उत्साहित नहीं थे, किन्तु भारत में स्वतंत्रता के बाद की सरकारों ने देश के ऐसे कई स्कूलों का समर्थन किया जो *नई तालीम* के साथ प्रयोग करना चाहते थे। लेकिन कुछ दशकों बाद इनमें से कई स्कूलों ने मुख्यधारा की स्कूली शिक्षा प्रदान करना शुरू कर दिया था।

इसका एक महत्त्वपूर्ण कारण था। कई किसान और कारीगर अपने बच्चों को उन स्कूलों में नहीं भेजना चाहते थे जो कृषि या कारीगरी के कौशल सिखाते हों। उनका कहना था कि बच्चे अपने माता-पिता के कार्यों में मदद करके इन कौशलों को और भी बेहतर तरीक़े से सीख सकते हैं और इसके लिए उन्हें स्कूल में जाने के लिए समय भी नहीं निकालना पड़ेगा। अतः यह स्पष्ट हो गया कि ग़रीब माता-पिता अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए केवल तभी तैयार थे यदि उन्हें लगे कि उस शिक्षा से उनके बच्चों को एक अलग और बेहतर जीवन मिल सकेगा।

अन्य देशों में व्यावसायिक कौशल

यूरोप

जर्मनी एक ऐसा देश है जहाँ माध्यमिक विद्यालय में बच्चों के कुछ वर्गों को व्यावसायिक धारा की ओर मोड़ दिया जाता है। ज़्यादातर जर्मन लोग, जो कार और अन्य इंजीनियरिंग उत्पाद बनाने वाले कारख़ानों में कार्य करते हैं, वे व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त किए हुए होते हैं। जर्मनी के सम्बन्ध में दो महत्त्वपूर्ण कारकों पर विचार किया जाना चाहिए : पहला, जो लोग व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करते हैं, उन्हें औद्योगीकरण की वजह से अच्छा वेतन और सामाजिक सुरक्षा के सभी लाभ मिलते हैं। दूसरा, स्कूल ही बच्चों को व्यावसायिक और सामान्य श्रेणियों में रखते हैं (बाद वाले समूह के विद्यार्थी विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं)। इस प्रकार माता-पिता की सामाजिक-आर्थिक स्थिति इस विकल्प को प्रभावित नहीं करती है।

इटली की स्थिति कुछ अलग है, हालाँकि वहाँ भी विद्यार्थियों के पास माध्यमिक विद्यालय में व्यावसायिक धारा की पढ़ाई करने का विकल्प है। इटली में माता-पिता अपने बच्चों के लिए धारा का चयन करने में अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कामकाजी वर्ग के माता-पिता चाहते हैं कि उनके बच्चे जल्द-से-जल्द नौकरी करने लगें जिसके लिए व्यावसायिक धारा उपयुक्त है। इसलिए सम्भव है कि वे अपने बच्चों को व्यावसायिक धारा का चयन करने के लिए प्रोत्साहित करें, भले ही उनकी योग्यता और रुचि सामान्य धारा और बाद में विश्वविद्यालय की शिक्षा में हो। हो सकता है कि इसने इटली में असमानताओं और वर्ग-भेद के बने रहने में योगदान दिया हो।

यूके और यूएसए

दूसरी ओर, यूके में, और इसके प्रभाव के कारण यूएसए में, 12 साल तक सभी बच्चों को सामान्य-उद्देश्य वाली स्कूली शिक्षा प्रदान की जाती है। इसके फ़ायदे और नुकसान दोनों हैं। अपनी सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के बावजूद सभी बच्चों के सामने विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त करने का विकल्प बना रहता है। यह भी हो सकता है कि कई विद्यार्थी जो रुचि की कमी या अन्य कारणों से आगे चलकर ऐसी शिक्षा प्राप्त न करें, तो उनके कई साल बर्बाद हो सकते हैं, जिनका उपयोग अन्यथा वे किसी लाभदायक व्यवसाय या कौशल प्राप्त करने के लिए कर सकते थे। वैसे पॉलिटेक्निक या सामुदायिक कॉलेजों में कौशलों की शिक्षा, सामान्य-उद्देश्य स्कूली शिक्षा के 12 साल बाद उपलब्ध होती है।

कुछ प्रयोग

ऐसे अन्य रोचक प्रयोग हुए हैं जो यहाँ उल्लेखनीय हैं। उन्नीसवीं सदी के अन्त में त्रावणकोर की रियासत ने किसानों के बच्चों के लिए एक स्कूल शुरू करने का फ़ैसला किया। इसका उद्देश्य, सुविज्ञ किसान बनाना था। लेकिन पाठ्यक्रम पूरा होने के बाद, कोई भी विद्यार्थी कृषि-क्षेत्र में वापस नहीं जाना चाहता था, इसकी बजाय उन्होंने सरकारी नौकरी की माँग की।

दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में, विशेषकर केरल, ब्राज़ील और इंडोनेशिया में मछुआरों के परिवारों के बच्चों के लिए स्कूल शुरू करने के प्रयास भी किए गए। कहीं-कहीं तो यह स्कूल मछुआरों के बच्चों को मुख्यधारा की शिक्षा प्रदान करने के काम भी आए क्योंकि उनके परिवार का वातावरण नियमित, मुख्यधारा के स्कूलों में दी जाने वाली स्कूली शिक्षा के लिए बहुत अनुकूल नहीं है। उनमें से कुछ मछली से जुड़े व्यापार को छोड़कर नियमित रूप से नौकरी भी कर सके। इस प्रकार अधिकांश मामलों में स्कूलों का उपयोग कर प्रशिक्षित मछुआरे बनाने का उद्देश्य पूरा नहीं हो सका। यदि समुद्री मत्स्य-पालन छोटे पैमाने पर ही जारी रहता है (और दुनिया के कई हिस्सों में अधिकांश मत्स्य पालन इसी तरह से किया जा रहा है), तो स्कूल जाने वाले उम्र के लड़कों को मछली पकड़ने की गतिविधियों में जल्दी ही भाग लेना पड़ता है, जिससे वे स्कूली शिक्षा को अधिक समय नहीं दे पाते।

आइए, अब एक और स्थिति पर विचार करते हैं। चीन, वियतनाम, थाईलैंड और कुछ हद तक इंडोनेशिया भी, निर्माण उद्योगों में रोज़गार पैदा करने के मामले में भारत से बेहतर प्रदर्शन कर रहे हैं। इन देशों में कारख़ानों में लाखों श्रमिक काम करते हैं। यह श्रमिक कौन हैं? क्या यह वे लोग हैं जिन्होंने अपनी स्कूली शिक्षा के हिस्से के तौर पर कुछ कौशल प्राप्त किए हैं? इन सभी देशों में लड़के और लड़कियाँ नियमित स्कूली शिक्षा पूरी करते हैं, शहरों में जाते हैं और ऐसे कारख़ानों में नौकरी करते हैं जहाँ मोबाइल फोन, खिलौने, लैपटॉप आदि के पुर्जे जोड़ने का काम होता है या वस्त्र बनते हैं। जो काम उन्हें करने होते हैं उसके हिसाब से उन्हें अपने कार्य स्थलों पर ही कुछ महीनों का प्रशिक्षण दे दिया जाता है।

यदि हम अपने पड़ोसी देश, बांग्लादेश को देखें तो वहाँ पर लगभग 60 प्रतिशत वयस्क महिला आबादी को वैतनिक रोज़गार प्राप्त है (भारत में यह आँकड़ा 30 प्रतिशत से कम है)। बांग्लादेश में इस रोज़गार का एक उल्लेखनीय भाग कपड़े के कारख़ानों में देखा जा सकता है, जो अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ारों में सिले हुए कपड़ों का निर्यात करते हैं। यह कामगार कुछ वर्षों की स्कूली शिक्षा पाने के बाद आते हैं और कभी-कभी तो स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद भी काम पर लगते हैं, लेकिन उस स्कूली शिक्षा में कौशल का घटक भारत से बहुत अलग नहीं है।

स्कूलिंग और स्किलिंग

इसलिए शायद अनुभवों के आधार पर यह विचार सही नहीं बैठता है कि स्कूली शिक्षा में कौशल के समावेश की कमी के कारण भारत में युवा वर्ग नौकरी पाने में असफल है। भारत में बेरोज़गारी के अन्य कारण हो सकते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले कई संगठन जो समाज में असमानता के बारे में चिन्तित हैं, वे स्कूलों में सभी बच्चों को सामान्य शिक्षा प्रदान करने के लिए तर्क देते हैं। यदि स्कूलों में कौशल या कार्य के बारे में जानकारी या अनुभव प्रदान किया जाता है, तो वे तर्क देते हैं कि अपनी सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के बावजूद सभी बच्चों को ऐसी जानकारी या अनुभव दिया जाना चाहिए। वे छोटे, पारम्परिक व्यापारों में लगे परिवारों से बच्चों को लाने के अन्य साधनों की वकालत करते हैं, हालाँकि उनके द्वारा स्कूली शिक्षा का उपयोग पूरी तरह से नहीं कर पाने के बारे में भी उनकी चिन्ता बनी रहती है। अनिवार्य स्कूली शिक्षा या माता-पिता को अपने बच्चों को स्कूल भेजने के लिए विभिन्न प्रकार की मदद देना इस लक्ष्य को पाने की रणनीतियाँ हो सकती हैं।

जीवन को पाठों के साथ जोड़ने का महत्त्व

अगर हम चाहते हैं कि हर बच्चा सीखे, तो कक्षा में जो कुछ होता है, उसे बच्चों के लिए दिलचस्प बनाया जाना चाहिए। स्कूली शिक्षा को प्रत्येक बच्चे के लिए दिलचस्प बनाने के लिए अध्यापकों की शिक्षण-पद्धति और अन्य अभ्यासों में बदलाव करना होगा। वास्तविकता (बच्चों का जीवन) के साथ अमूर्तता (पाठ) को जोड़ना महत्त्वपूर्ण है, यह सभी बच्चों के लिए समान रूप से महत्त्वपूर्ण है, उनके लिए भी जो विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं। वास्तविक जीवन के साथ सम्बन्ध न होना कॉलेज और विश्वविद्यालय की शिक्षा में भी एक मुद्दा है और इसके चलते अधिगम बहुत उपयोगी नहीं बन पाता, भले ही यह डिग्रियाँ कुछ विद्यार्थियों

को नौकरी दिलाने में सहायक होती हों।

तो फिर पारम्परिक कौशलों का क्या? औद्योगिक या आर्थिक विकास के कारण लोग पारम्परिक व्यवसायों को छोड़ देते हैं। क्या कृषि एक महत्त्वपूर्ण ज़रूरत नहीं है? क्या हम आधुनिकीकरण या विकास के चलते पारम्परिक कौशलों को गँवा रहे हैं? यह वाकई चिन्ता के विषय हैं।

यहाँ पर दो महत्त्वपूर्ण बिन्दु देखने को मिलते हैं। पहला, अगर कृषि या कारीगरी या पारम्परिक कौशल से जुड़े कुछ लोगों या विशिष्ट सामाजिक-आर्थिक समूहों को सिर्फ़ अपने जीवन-निर्वाह के लिए इन व्यवसायों में बने रहना है तो कुछ मुद्दे सामने आ सकते हैं। यह एक वांछनीय सम्भावना नहीं है क्योंकि यह तभी काम करेगा जब कृषि श्रमिकों के बच्चे स्वयं अपनी इच्छा से कृषि श्रमिक बन जाएँ। दूसरा, कुछ व्यवसायों से मिलने वाले मुनाफ़ों में गिरावट आई है जैसे कि खेती और कारीगरी कौशल और सम्भव है कि सामाजिक-आर्थिक विकास के कारण आगे भी यह स्थिति बनी रहे तथा अगर इन व्यवसायों का अस्तित्व बनाए रखना है और उन्हें फलने-फूलने देना है तो इस मुद्दे को सम्बोधित करना आवश्यक है।

पारम्परिक कौशल मुख्यधारा की शिक्षा से लाभान्वित होते हैं

मैं इस सम्बन्ध में दो अनुभव बताना चाहता हूँ। अमेज़न के देशज समूहों की बस्तियों की यात्रा के दौरान मैं ऐसे लोगों से मिला जिन्होंने स्कूल या कॉलेज की शिक्षा प्राप्त की थी, लेकिन वे उन पारम्परिक, पारिवारिक आजीविका में लगे रहे जो भूमि, जंगल और नदी पर निर्भर थी। इन बस्तियों में जीवन सुरक्षित है क्योंकि भोजन पर्याप्त रूप से उपलब्ध है। जैसे कि टैपिओका, नदी की मछलियाँ और फलों की कई किस्में यहाँ मिलती हैं और इसलिए देशज समूहों के यह शिक्षित लोग उद्योगों या शहरों में नौकरी नहीं करना चाहते हैं और न ही शहर की मलिन बस्तियों में रहना चाहते हैं। लेकिन उनके लिए शिक्षा कई विभिन्न कारणों से महत्त्वपूर्ण है : वे बाहरी लोगों की घुसपैठ का विरोध कर सकते हैं और क़ानूनी रूप से अपने क्षेत्रों की रक्षा कर सकते हैं, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ारों में अपने पारम्परिक उत्पादों को बेच सकते हैं और दुनिया के विभिन्न हिस्सों के दूसरे लोगों के साथ जुड़ सकते हैं।

हाल ही में मैंने पंजाब में 'शिक्षित' किसानों के एक समूह से मुलाकात की। इसमें दिल्ली से लौटे हुए सॉफ्टवेयर इंजीनियर थे, स्कूल के पूर्व शिक्षक थे और अमरीका से लौटे हुए एक सज्जन शामिल थे। वे कीटनाशकों के उपयोग के बिना जैविक कृषि कर रहे हैं और उन्होंने बताया कि वे पंजाब की पारम्परिक खेती के तरीक़ों को पुनर्जीवित कर रहे हैं। औपचारिक शिक्षा ने उन्हें रसायनों का उपयोग किए बिना खेती के नए तरीक़े सीखने, विभिन्न ज़िलों में नेटवर्क विकसित करने और ऐसे नेटवर्क के माध्यम से अपने उत्पादों की बिक्री में मदद की है। वे अपने कार्य के महत्त्व के प्रति सचेत हैं और मेरे जैसे बाहरी लोगों को इस बारे में अच्छी तरह से समझाने में सक्षम हैं।

इन दोनों उदाहरणों में - यानी अमेज़न के देशज लोगों और पंजाब के जैविक किसानों में – हम यह देख सकते हैं कि यह लोग पारम्परिक कौशल या आजीविका का पुनरुद्धार कर रहे हैं और औपचारिक शिक्षा ने इन कौशलों की पहुँच को बढ़ाने, मुख्यधारा के समाज का सामना करने और दूसरों के साथ सार्थक अन्तःक्रिया करने में मदद की है।

सारांश

हालाँकि मैं उन लोगों की चिन्ताओं के प्रति सहानुभूति रखता हूँ जो यह मानते हैं कि सभी बच्चों को स्कूल में लाने और स्कूली शिक्षा को सफलता के साथ पूरी करने में कौशल-आधारित स्कूली शिक्षा का न होना एक गम्भीर बाधा है, किन्तु सामाजिक या आर्थिक गतिशीलता प्राप्त करने की व्यक्तिगत इच्छा या बढ़ती असमानता के बारे में समाज की चिन्ता इससे सम्बन्धित प्रयोगों को अप्रभावी बना सकती है।

इसके अलावा इस बात का भी अपना महत्त्व है कि प्रत्येक बच्चा कुछ निश्चित वर्षों के लिए सामान्य-उद्देश्य वाली शिक्षा प्राप्त करे। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि भारत की स्कूली शिक्षा से सम्बन्धित गम्भीर समस्याओं को कम करके आँका जाए। स्कूल जाने वाली उम्र के आधे से अधिक बच्चे स्कूली शिक्षा पूरी नहीं करते हैं या वे स्कूल जाने पर भी बहुत ज़्यादा नहीं सीखते, तथा; शिक्षा पूरी होने के बाद भी कई बच्चे अच्छा रोज़गार पाने में असफल रहते हैं। चिन्ता की एक और बात यह है कि कई लड़कियाँ वैतनिक रोज़गार में नहीं हैं। इस स्थिति के लिए अन्य सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक कारण हो सकते हैं जिनके बारे में हमें सोचना चाहिए और उन्हें सम्बोधित करने का प्रयास करना चाहिए।

वी. शान्ताकुमार अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, बेंगलूरु में प्रोफ़ेसर हैं। वे 1996-2011 में सेंटर फॉर डेवलपमेंट स्टडीज़ (त्रिवेन्द्रम) के संकाय सदस्य थे। वर्तमान में उनकी रुचि, विकास और शिक्षा के अन्तर-सम्बन्धों और उन तरीक़ों के बारे में है जिनसे जनसंख्या समूहों के बीच की 'दूरी' को कम किया जा सके ताकि उनके बीच 'विकास का अन्तर' कम हो सके। उन्होंने क्षेत्रीय और वैश्विक मुद्दों पर सलाहकार के रूप में कई असाइनमेंट और अनुसन्धान परियोजनाओं पर काम किया है। उनसे santhakumar@apu.edu.in पर सम्पर्क किया जा सकता है। **अनुवाद :** नलिनी रावल

बच्चों का साहित्य और बाल-केन्द्रित अभ्यास

वर्तुल ढौंडियाल

'मैडम, क्या मैं भी वे कार्य कर सकती हूँ जो भईया और दीदी करते हैं?' दीक्षा ने पूछा। उसकी शिक्षिका ने सुखद आश्चर्य के साथ पूछा, 'कौन-से कार्य?' 'चमीक्षा', दीक्षा ने कहा। 'हाँ, हाँ, क्यों नहीं, ज़रूर कर सकती हो!' उसकी शिक्षिका ने बहुत ख़ुशी के साथ कहा। तब दीक्षा ने बहुत शर्माते हुए पूछा, 'तो मेरा वीडियो भी भेजा जाएगा?' बच्ची की प्यारी-सी बातें सुनकर शिक्षिका हँसी। उन्होंने उससे वादा किया कि यदि उसने किसी कहानी की समीक्षा की तो वे उसके वीडियो को शिक्षकों के समूह में साझा करेंगी।

दीक्षा, देहरादून ज़िले के विकासनगर ब्लॉक में डण्डा जंगल के प्राथमिक विद्यालय में कक्षा एक की छात्रा है। वह जौनसारी जनजाति की है और उसके पिता एक दिहाड़ी मज़दूर हैं। इस सरकारी स्कूल के अधिकांश विद्यार्थी साधारण सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के हैं और पहली पीढ़ी के शिक्षार्थी हैं, जिनके घर में पढ़ाई में उनकी मदद करने वाला कोई नहीं है। इसलिए स्कूल में इन बच्चों की शिक्षा और उपलब्धियों का एकमात्र श्रेय उनके शिक्षकों को दिया जा सकता है।

शिक्षकों की भूमिका

सरकारी स्कूल के शिक्षकों के साथ काम करते हुए मैंने देखा कि *ऐसे शिक्षक भी हैं जो यह मानते हैं कि सभी विद्यार्थी सीख सकते हैं।* यह शिक्षक अपने शिक्षण में प्रगतिशील तरीक़ों का प्रयोग करते हैं और पढ़ाई में अपने विद्यार्थियों की रुचि बनाए रखने के लिए नए-नए तरीक़े आज़माते हैं। वे कक्षा की गतिविधियों या आकलन के साधनों को डिज़ाइन करते समय अपने विद्यार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं को भी ध्यान में रखते हैं। दुर्भाग्य से ऐसे शिक्षकों की संख्या सीमित है।

दूसरी ओर ऐसे शिक्षक हैं जो इस बात पर पूरा विश्वास करते हैं कि केवल कुछ विद्यार्थी ही अच्छी तरह से सीख सकते हैं। उनकी इस धारणा के पीछे अक्सर उनके शिक्षण सम्बन्धी व्यक्तिगत अनुभव होते हैं। ऐसे शिक्षकों के पढ़ाने के तरीक़ों को देखने से पता चलता है कि वे विभिन्न विषयों को पढ़ाने के लिए पारम्परिक तरीक़ों का प्रयोग करते हैं। वे केवल पाठ्यपुस्तक का अनुसरण करते हैं और हालाँकि हर विद्यार्थी के अधिगम की ज़रूरतें अलग होती हैं, लेकिन इसके बावजूद भी वे कक्षा में एक ही सामान्य रीति से पढ़ाते जाते हैं।

नीरस शिक्षण

ऐसी कक्षाओं में इस तथ्य की पूरी तरह से अवहेलना की जाती है कि हर व्यक्ति के सीखने की शैली अलग-अलग होती है। जो विद्यार्थी इस तरह के पारम्परिक तरीक़ों के माध्यम से सीखने में सक्षम हैं, वे मुख्य रूप से ऐसे विद्यार्थी हैं जिनके पास पहले से ही किसी प्रकार की सामाजिक और शैक्षिक पूँजी होती है; कम-से-कम उनके अपने परिवार में कोई-न-कोई तो शिक्षित होता है और उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति बेहतर होती है। अक्सर यह विद्यार्थी पहले से ही एक ऐसी भाषा में बातचीत करते हैं, जिसे 'सभ्य' (शहरी) माना जाता है और वे ऐसे सामाजिक शिष्टाचार का पालन करते हैं जिसे शिक्षकों द्वारा 'उपयुक्त' माना जाता है।

पारम्परिक दृष्टिकोण में तथ्यों और विषय-सामग्री को याद करने पर ज़ोर दिया जाता है, लेकिन उसे समझने और आत्म-सात करने पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जाता। इस तरह के दृष्टिकोण के आधार पर किया गया आकलन केवल उस विषय-सामग्री का परीक्षण करता है जिसे विद्यार्थियों ने याद किया है। जवाब या समस्या-समाधान के इन तरीक़ों में व्यक्तिगत सोच, रचनात्मकता और नवीनता या नई चीज़ों को आज़माने का मौका ही नहीं दिया जाता। यह पूरा दृष्टिकोण अत्यन्त पाठ्यपुस्तक उन्मुख और शिक्षक-केन्द्रित-सा प्रतीत होता है, जिसमें विद्यार्थी को अक्सर एक ऐसा निष्क्रिय शिक्षार्थी माना जाता है, जिसे ज्ञान प्राप्त करना है और जब पूछा या आकलन किया जाए तो उसे उस ज्ञान को पुन: पेश कर देना है। यह एक उबाऊ, थकाऊ और निरर्थक पद्धति है जिसमें सभी बच्चे रुचि नहीं ले सकते। कई बच्चों को कक्षा का वातावरण अजनबी-सा लगता है, जिसमें दुनिया के बारे में उनके पूर्व-ज्ञान, उनकी भाषा, उनके सन्दर्भ आदि की कोई प्रासंगिकता नहीं होती और उन्हें अपेक्षित अनुशासन, अभिव्यक्ति और याद रखने तरीक़े सीखने होते हैं। अब चूँकि अधिकांश विद्यार्थी इन विधियों को लेकर सहज नहीं हो पाते, इसलिए उन पर जल्द ही बुद्धू होने का ठप्पा लगा दिया जाता है और उन्हें पिछड़ा हुआ, यहाँ तक कि धीमी गति से सीखने वाले शिक्षार्थियों के रूप में देखा जाने लगता है। इस वजह से शिक्षा से उनकी दूरी और बढ़ने लगती है और वे स्कूल और शिक्षा प्रणाली को छोड़ने तक को तैयार हो जाते हैं।

हर बच्चे को वैयक्तिक रूप से पढ़ाना

दूसरी ओर, जो शिक्षक यह मानते हैं कि अपनी-अपनी क्षमता के स्तरों में अन्तर के बावजूद सभी विद्यार्थी सीख सकते हैं, वे अपने विद्यार्थियों की व्यक्तिगत प्रतिभा, पसन्द और नापसन्द, सीखने की शैली, चुनौतियों, सामाजिक-आर्थिक सन्दर्भों और सीखने की ज़रूरतों को समझने पर बहुत ध्यान देते हैं। इन शिक्षकों का अपने विद्यार्थियों के साथ एक अच्छा और दोस्ताना सम्बन्ध होता है और वे हर विद्यार्थी के विभिन्न विचारों और मतों पर खुले दिमाग़ से ध्यान देते हैं। इन शिक्षकों के लिए सीखने का अर्थ अवधारणाओं और विषय-सामग्री को याद रखने तक सीमित नहीं है; वे कक्षा के लिए अपेक्षित अधिगम के इष्टतम उद्देश्यों से अवगत होते हैं और पाठ्यपुस्तक की विषय-सामग्री के बजाय विद्यार्थियों की दक्षताओं पर जोर देते हैं।

यह शिक्षक आमतौर पर हर विद्यार्थी या विद्यार्थियों के समूहों के लिए अलग-अलग अनुदेशनों, विभिन्न उदाहरणों या गतिविधियों का उपयोग करते हैं। वे पूरी कक्षा को एक ही तरीक़े से नहीं पढ़ाते। वे यह भी जानते हैं कि एक बार किए हुए योगात्मक आकलन (Summative assessment) से उन सभी दक्षताओं के बारे में ज़्यादा पता नहीं चलता जो विद्यार्थी एक शैक्षिक वर्ष में हासिल करते हैं। इसके विपरीत, वे आकलन को शिक्षक के लिए एक ऐसे अधिगम के रूप में देखते हैं[1] जिसमें विद्यार्थियों में अधिगम की कमी की पहचान करने पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है और इस प्रकार का आकलन भविष्य के शिक्षण की योजना बनाने में मदद करता है। साथ ही विद्यार्थियों को इससे स्व-आकलन करने में सहायता मिलती है और वे यह समझ पाते हैं कि उन्हें और क्या सीखने की ज़रूरत है। इस तरह का आकलन एक प्रकार का रचनात्मक आकलन (formative assessment) है जिसमें विद्यार्थियों की शक्तियों और सीखने की ज़रूरतों की पहचान करने की गुंजाइश सन्निहित है।

2018-19 में *पोटली* पुस्तकालय कार्यक्रम के दौरान देहरादून के विकासनगर ब्लॉक के सरकारी स्कूलों में ऐसे कई तरीक़े देखने में आए। इस कार्यक्रम में अट्ठाईस स्कूलों के शिक्षकों ने स्वेच्छा से भाग लिया। ऐसी कई घटनाओं के विवरण मिलते हैं जिनमें इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि कार्यक्रम के दौरान विद्यार्थियों के सीखने के स्तर में सुधार हुआ। उन विद्यार्थियों में तो यह परिवर्तन सर्वाधिक स्पष्ट रूप से नज़र आया जो पढ़ या लिख नहीं सकते थे- वे भी पुस्तकों में रुचि लेने लगे। हालाँकि शुरू में वे केवल चित्रों को देखकर आनन्द लेते थे, लेकिन बाद में यह बात सामने आई कि इन बच्चों ने पढ़ना-लिखना सीखने में रुचि दिखाई और इन दक्षताओं को प्राप्त किया।

यह कार्यक्रम इस धारणा पर आधारित था कि यदि स्कूल में बच्चों को पर्याप्त और अच्छा साहित्य उपलब्ध हो और अध्यापकों को बाल-केन्द्रित तरीक़ों के बारे में बताकर उन्हें सहयोग प्रदान किया जाए तो इससे विद्यार्थियों के सीखने के स्तर में वांछित बदलाव लाया जा सकता है। कार्यक्रम में विभेदित अनुदेश[2] को बढ़ावा देने पर ध्यान केन्द्रित किया गया ताकि कक्षा के भीतर सभी विद्यार्थी प्रभावी ढंग से सीख सकें, भले ही उनकी सीखने की क्षमताओं में कितनी भी विविधता क्यों न हो। कार्यक्रम का डिज़ाइन ऐसा था कि इसने शिक्षकों को अपने तरीक़ों की जाँच-पड़ताल करने और उन पर चिन्तन करने का अवसर प्रदान किया।

परिणामों का विश्लेषण

बैठकों के दौरान रिकॉर्ड किए गए, शिक्षकों के चिन्तन-मनन, शिक्षण के विवरणों और उनके विचारों का विश्लेषण किया गया तो स्पष्ट समझ बन सकी कि हमें भाषा-शिक्षण के कार्यक्रमों में किन बातों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए।

कार्यक्रमों के दौरान उभरे कुछ बुनियादी सिद्धान्तों से जो अन्तर्दृष्टि मिली, उनसे सभी बच्चों को अपनी गति से और अपने तरीक़े से सीखने में मदद मिल सकती है। इन सिद्धान्तों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है :

1. कार्यक्रम ऐसे होने चाहिए जो शिक्षकों को इस बारे में मार्गदर्शन दे सकें कि क्या सिखाना है और क्यों सिखाना है। शिक्षकों को, शिक्षण के ऐसे तरीक़ों को विकसित करने के लिए समर्थन और मार्गदर्शन प्रदान किया जाना चाहिए जो उनके विद्यार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सबसे अच्छे हों।

2. यह बात बहुत स्पष्ट रूप से सामने आई कि हर बच्चा सीख सकता है, लेकिन एक सामान्य प्रकार का शिक्षण सभी विद्यार्थियों के अधिगम की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा नहीं करेगा, और न ही यह एक ही कक्षा के विद्यार्थियों की विभिन्न अधिगम-शैलियों और प्रक्रियाओं के अनुरूप होगा।

3. विभेदित अनुदेश की पद्धति ग्रामीण सरकारी स्कूलों की वर्तमान शिक्षण परिस्थितियों- बहु-ग्रेड, बहु-स्तरीय शिक्षण के लिए सबसे उपयुक्त है।

4. ग्रेडेड अथवा विभिन्न कक्षानुसार पर्याप्त पठन सामग्री उपलब्ध हो तो उससे पढ़ने और लिखने में बच्चों की रुचि विकसित करने में मदद मिलती है। इस सामग्री में विभिन्न शैलियों के पाठ शामिल होने चाहिए जैसे कि कहानी,

कविता, नाटक आदि। लेकिन इस रुचि के साथ में शिक्षक को चाहिए कि वे बच्चों को व्यक्तिगत रूप से अनुदेश और समर्थन भी दें क्योंकि केवल रुचि होने से कोई विद्यार्थी पढ़ना और लिखना सीखने में सक्षम नहीं हो सकता

5. शिक्षक नए दृष्टिकोण और तरीक़ों को सीखने के लिए तैयार हैं, लेकिन सैद्धान्तिक व्याख्यान उन चुनौतियों और स्थितियों से निपटने में ख़ास मदद नहीं कर सकते जो कक्षा में शिक्षण के दौरान दिन-प्रतिदिन सामने आते हैं। इसलिए यह ज़रूरी है कि रिसोर्स पर्सन कक्षाओं में जाकर समय बिताएँ ताकि वे वास्तविक कक्षा की स्थितियों के लिए विशिष्ट रूप से निर्मित समाधान सुझाने में शिक्षक की मदद कर सकें।

प्राथमिक शाला डण्डा जंगल में संक्षिप्त बातचीत के एक महीने बाद, दीक्षा की शिक्षिका ने शिक्षक-समूह में एक वीडियो साझा किया। मुझे यह देखकर बहुत ख़ुशी हुई कि दीक्षा ने अपनी पाठ्यपुस्तक की एक कहानी की समीक्षा की थी। उसने कहानी तथा उसके पात्रों पर चर्चा की और बताया कि उसे कहानी में क्या अच्छा लगा और क्या नहीं। उसने यह भी कहा कि कहानी के प्रमुख पात्र के उलट, वह अपने दोस्तों को दुख नहीं पहुँचाएगी। हालाँकि यह उस तरह की समीक्षा नहीं थी जो हमें सामान्यतया पढ़ने को मिलती है, लेकिन यह एक विद्यार्थी के चिन्तन को दर्शाती है, जिसने कहानी के बारे में सोचा और अपनी राय (बाहरी दबावों से प्रभावित हुए बिना व्यक्त किए गए मौलिक विचार) को व्यक्त किया।

ऐसे उदाहरण और अनुभव, शिक्षकों और प्रशिक्षकों के इस विश्वास को बढ़ावा देते हैं कि हर बच्चा सीख सकता है, ज़रूरत केवल इस बात की है कि शिक्षक प्रत्येक बच्चे को एक विशिष्ट व्यक्ति माने और उसे ऐसा व्यक्तिगत सहयोग/समर्थन प्रदान करे जो उस शिक्षार्थी की आवश्यकता के अनुरूप हो।

References

1 *The Learning, Teaching and Assessment Guide*, Chapter 3, http://www.ltag.education.tas.gov.au

2 *The Differentiated Classroom*: Carol Ann Tomlinson

वर्तुल ढौंडियाल देहरादून के अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन में हिन्दी भाषा के स्रोत व्यक्ति के रूप में कार्यरत हैं। उन्होंने पत्रकारिता और जनसंचार में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त की है। उन्होंने 'प्रथम' और 'रूम-टू-रीड' जैसे संगठनों में भी कार्य किया है। उन्होंने हिस्ट्री चैनल के लिए कंटेंट एडिटर के रूप में कार्य किया है। वे दर्शन और शोध में रुचि रखते हैं। उनसे vartul.dhaundiyal@azimpremjifoundation.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।
अनुवाद : नलिनी रावल

पत्र, सम्पादक के नाम

{ सभी प्रतिक्रियाएँ अँग्रेज़ी *अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व*, अप्रैल 2020 (हिन्दी *अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व*, जनवरी, 2021) में प्रकाशित लेखों पर हैं। **अनुवाद :** नलिनी रावल}

बस ज़रा सिर पर हाथ रख देना...: प्रतिभा कटियार - मुझे इस लेख में लेखिका का विचार व्यक्त करने का तरीक़ा बहुत अच्छा लगा। किसी बच्चे के अधिगम में ऐसे विविध कारक होते हैं जो उसकी कुल शिक्षा को प्रभावित करते हैं। इस लेख में लेखिका ने न केवल भावनात्मक पहलू के बारे में बात की है, बल्कि उन लेखों का सन्दर्भ भी दिया है जो उनके इस तर्क को दृढ़तापूर्वक स्थापित करते हैं कि शिक्षा का अधिकार जीवन के अधिकार के बराबर है। यह लेख सूक्ष्म अवलोकनों के माध्यम से सीखने पर भी ज़ोर देता है। इससे मुझे यह एहसास भी हुआ कि स्कूल के स्तर पर हमारी अन्तःक्रियाएँ हमें अपने अनुभवों पर चिन्तन करने के लिए अन्तर्दृष्टि प्रदान करती हैं। लेखिका मैडम को एक बार फिर से धन्यवाद। उनके अवलोकन और लेख ने मुझे भी लिखने के लिए प्रोत्साहित किया है।

***स्वीटी**, श्रीनगर, गढ़वाल, उत्तराखण्ड*

सबके लिए शिक्षा : एक सम्भावित सुन्दर चित्र : अनन्त गंगोला - शीर्षक लेख पढ़ने में मुझे वास्तव में बहुत आनन्द आया। इसे बहुत अच्छी तरह से और सरल रूप में लिखा गया है। इसमें निहित सन्देश स्पष्ट है। शिक्षा के क्षेत्र में मेरा ज्ञान या अनुभव उतना नहीं है, जितना कि लेखक का, लेकिन पिछले डेढ़ साल से इस क्षेत्र में काम करते हुए मेरे सरोकार भी यही हैं।

शिक्षा और स्वास्थ्य दो ऐसे क्षेत्र हैं, जिनके साथ प्रयोग नहीं किए जा सकते क्योंकि यह लाखों लोगों के जीवन को, किसी पूरी पीढ़ी को, बना या बिगाड़ सकता है। ऐसी घटनाओं को देखकर मेरा हृदय विदीर्ण हो जाता है कि जहाँ शिक्षक अपनी ज़िम्मेदारी नहीं निभाते, माता-पिता अबोध हैं, समाज आलोचनात्मक और बच्चे असहाय। हम कहाँ जा रहे हैं? कभी-कभी मुझे लगता है कि रटकर सीखना ही ठीक था, कम-से-कम व्यक्ति बुनियादी बातें तो सीख लेता था।

***बिन्नी ठाकुर**, सहायक प्रबन्धक, जानकीदेवी बजाज ग्राम विकास संस्था, कांगड़ा, हिमाचल प्रदेश*

इसमें कोई सन्देह नहीं कि लर्निंग कर्व के सभी अंकों के लेख विशिष्ट होते हैं; यह पत्रिका मेरे जैसे पाठकों के लिए एक उत्प्रेरक की तरह है जो प्रसिद्ध शिक्षाविदों/कार्यरत शिक्षकों के व्यापक अनुभवों को सामने ले आती है। मैं फील्ड में एक सदस्य के रूप में कार्यरत हूँ और इस नाते मुझे लगता है कि इस अंक **(हर बच्चा सीख सकता है भाग-1)** में कक्षा के कुछ विश्वसनीय चित्र हमारे सामने प्रस्तुत किए हैं और उन विशिष्ट परिस्थितियों से निपटने का नज़रिया भी हमें दिया है। स्वाती सरकार के लेख **हर बच्चे के लिए चार संक्रियाएँ** से गणित की कक्षा को समझने में बहुत मदद मिली। कमलेश चन्द्र जोशी के लेख **पढ़ने से जूझते बच्चे** में बच्चों के लेखन के चित्रों का उपयोग और चन्द्रिका सोनी के लेख **विषयों की रेलगाड़ी पर चिट्ठी की सवारी** को शिक्षकों की कार्यशालाओं में साझा करने पर सदस्यों को बहुत मदद मिलेगी।

यदि ऐसे और अधिक लेख शामिल किए जाएँ जो कक्षा-आधारित हों तथा जिनमें जानकारी दी गई हो जो शिक्षकों के अनुभवों पर आधारित हो तो उनसे बहुत मदद मिलेगी। पुस्तक समीक्षाओं से हमें पढ़ने के लिए पुस्तकें चुनने में मदद मिलती है।

***रवीन्द्र जैन**, रिसोर्स पर्सन, ज़िला संस्थान अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, मंड्या, कर्नाटक*

मुझे राजश्री श्रीनिवासन का **समावेशी कक्षाओं के लिए शिक्षकों को तैयार करना** शीर्षक लेख बहुत दिलचस्प लगा क्योंकि वे एक ऐसे कार्यक्रम के बारे में बात कर रही हैं जो विद्यार्थियों को 'चुनौती' देता है। इसलिए मैं यह समझने की कोशिश कर रही हूँ कि जब किसी विद्यार्थी को किसी अनाथालय या झुग्गी-झोपड़ी दिखाने के लिए ले जाया जाता है तो वह जिस तरह की चुनौती का सामना करता है, उसकी तुलना अगर ऐसे शिक्षक के साथ की जाए जो ख़ुद भी उसी प्रकार की चुनौती का सामना करते हैं जब वे बच्चों को अपनी कक्षा में पहली बार किसी कहानी के बारे में बताने के लिए कहते हैं – तो क्या होगा? दोनों ही, अपरिचित क्षेत्र की खोज करते हुए, एक नए अनुभव से रूबरू होंगे और शायद कुछ ऐसे तरीक़ों के बारे में जानेंगे जो उन्हें अपर्याप्त लगें (अनुभव, परिप्रेक्ष्य या तैयारी की दृष्टि से)। पर एक बेहतर ढंग से संचालित चर्चा के द्वारा इस अपर्याप्तता को एक सकारात्मक अनुभव और विकास की सम्भावना में बदला जा सकता है।

मुझे लगता है कि शिक्षकों के लिए परिवर्तन या अधिगम का सबसे शक्तिशाली पल वह है जब वे अपने बच्चों के बीच, अपनी कक्षा में वास्तव में इस 'अपर्याप्तता' को महसूस करते हैं। इसका मतलब है कि उन्होंने कुछ नया करने की कोशिश की है और उस अपर्याप्तता को दूर करने के लिए वे बदलाव लाने का विकल्प चुन सकते हैं।

***अर्चना**, एसोसिएट, ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, यादगीर, कर्नाटक*

पत्र, सम्पादक के नाम

ब्यूटी पार्लर के सामने पढ़ती हुई लड़की वाला मुखपृष्ठ बहुत अच्छा है। सम्पादकीय में सम्पादिका की सकारात्मक और स्वागत टिप्पणी के साथ-साथ पत्रिका के बारे में भी समग्र विचार दिया गया है। **सबके लिए शिक्षा : एक सम्भावित सुन्दर चित्र** लेख में अनन्त गंगोला, भारत में सबके लिए शिक्षा नीति के विकास के रोड मैप की व्याख्या करते हैं; इसके कारण कैसे स्कूलों में विद्यार्थियों की संख्या बेतहाशा बढ़ गई है और कैसे पहली पीढ़ी के शिक्षार्थियों के लिए शिक्षक तैयार नहीं हैं। उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला है कि सभी के लिए शिक्षा हमारे समाज के तथाकथित सबसे निचले तबके ख़ासकर दलितों और आदिवासी बच्चों तक पहुँचने में विफल रही है, जो इस प्रणाली में फिट होने के आदी नहीं हैं और इस कारण से उनकी मासूमियत व मौलिकता नष्ट हो जाती है। इसी प्रकार के आदिवासी समुदाय में काम करने के कारण मैं लेखक की भावनाओं को पूरी तरह से समझ सकती हूँ। शिक्षा प्रणाली में एक ही तरीक़ा सबके लिए ठीक बैठे, यह सम्भव नहीं है। इससे शिक्षा प्रणाली को फ़ायदा कम और नुकसान ज़्यादा हो रहा है। *'मेरा तो यह विचार है कि शिक्षक को सबके लिए शिक्षा के सन्दर्भ में जिस तरह की तैयारी की ज़रूरत है, वह सरकार या समाज द्वारा प्रदान नहीं की जा रही है, हालाँकि यह स्पष्ट नहीं है कि इसका कारण इच्छाशक्ति की कमी है या संसाधनों की कमी।'* यह पूरे विचार का सार है और एक ऐसे अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पहलू पर प्रकाश डालता है जिस पर हमें काम करने की ज़रूरत है - सबके लिए शिक्षा के सन्दर्भ में, अपने शिक्षकों को तैयार करना।

विमला रामचन्द्रन के **बच्चों की क्षमता में शिक्षक का विश्वास महत्त्वपूर्ण है** शीर्षक लेख ने मुझे शिक्षकों के साथ कार्य करने एवं उन्हें अपने पूर्वाग्रहों के प्रति सचेत करने और चिन्तन करने में उनकी मदद करने के महत्त्व पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित किया। यह बात बड़ी दिलचस्प लगी कि अमृता मसीह **(कहानी के माध्यम से बच्चों को जोड़ना)** ने किस प्रकार से बच्चों को अपने ख़ुद के अधिगम की ज़िम्मेदारी लेना सिखाया। **अधिगम के लिए सहायक वातावरण बनाना** शीर्षक लेख में अरुणा ज्योति विभिन्न प्रकार के शिक्षार्थियों को संलग्न करने के विविध व्यावहारिक तरीक़े बताती हैं। यह लेख माता-पिता के साथ जुड़ाव स्थापित करने के तरीक़े भी बताता है ताकि उनमें अपने बच्चे की शिक्षा के बारे में स्वामित्व की भावना पैदा हो सके। चन्द्रिका सोनी का लेख **विषयों की रेलगाड़ी पर चिट्ठी की सवारी**... एक शिक्षक के अनुभव को दर्शाता है जो पत्र की यात्रा की नाटकीय स्थिति पैदा करके विद्यार्थियों को पत्र लिखने की कला के बारे में सिखाती हैं। **रोज़नामचा बनाम चिन्तन : एक शिक्षक की डायरी** शीर्षक लेख में गजेन्द्र देवांगन के वे विचार बहुत व्यावहारिक थे जिसमें उन्होंने बताया कि कैसे वे एक छोटे लड़के को कार्य करने के लिए प्रेरित कर पाए जो अधिक समय तक एकाग्र होकर कार्य नहीं कर पाता था। निश्चित रूप से हम फील्ड में शिक्षकों के साथ कार्य करते समय इन तरीक़ों का उपयोग कर सकते हैं। मैं शिक्षकों के साथ चर्चा के दौरान उदाहरण के रूप में इस लेख का उपयोग करूँगी और उन्हें डायरी लिखने के लिए प्रेरित करूँगी। दो कार्यरत शिक्षकों, जनक राम और मुंशीलाल बारसे द्वारा लिखित टीएलएम : **गणित सीखने-समझने के साथी** शीर्षक लेख हमें बताता है कि सीखने में छोटी कक्षा के बच्चों की मदद करने के लिए उन्होंने विभिन्न शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में ठोस वस्तुओं का प्रभावी ढंग से प्रयोग कैसे किया। उनकी यह बात विशेष रूप से प्रासंगिक है कि *'जब बच्चे स्वयं कोई परिभाषा गढ़ते हैं, तो वह समझ सदा के लिए उनके साथ रहती है।'* कमलेश चन्द्र जोशी का लेख **पढ़ने से जूझते बच्चे**, उच्च प्राथमिक शिक्षकों के साथ हमारे कार्य के लिए बहुत प्रासंगिक है। लेखक के अनुसार सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पठन सामग्री बच्चों के जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए और वांछित सफलता प्राप्त करने के लिए उनके कौशल को विकसित करने की दिशा में हम जो भी कार्य करें, वह व्यवस्थित रूप से किया जाना चाहिए। इस अंक में कई अन्य दिलचस्प लेख भी हैं जैसे – ईसीई टीम, संगारेड्डी द्वारा लिखित **बच्चे विविध तरीक़ों से सीखते हैं**; कमला भण्डारी द्वारा लिखित **भाषा-शिक्षण : सामग्री को सन्दर्भ से जोड़ना** आदि।

अक्षता एस. बेलुडी, रिसोर्स पर्सन, *ज़िला संस्थान अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, कोप्पल, कर्नाटक*

लर्निंग कर्व के हाल के अंक में प्रकाशित रोचक और प्रेरक लेखों को पढ़कर मुझे बहुत अच्छा लगा, विशेष रूप से **बच्चे विविध तरीक़ों से सीखते हैं** शीर्षक लेख। आपने सभी उत्साही कार्यरत शिक्षकों के विचारों, अनुभवों एवं कार्यों को साझा करने के लिए जो मंच दिया है, वह शिक्षा के क्षेत्र में सभी के लिए बहुत उपयोगी है। मेरा व्यक्तिगत अनुभव यह है कि विभिन्न पृष्ठभूमि वाले बच्चों की रुचि भी अलग-अलग होती है। भाषा की दिक़्क़त के चलते आँगनवाड़ी में एक बच्ची निष्क्रिय रहा करती थी। लेकिन बाद में वह कक्षा में बहुत सक्रिय हो गई क्योंकि हमने उसकी रुचियों और पृष्ठभूमि को समझने के बाद उस पर विशेष ध्यान दिया था। हम अगले अंक की प्रतीक्षा कर रहे हैं!

***मछेन्दर जुकान्ती**, अर्ली चाइल्डहुड एजुकेशन इनिशिएटिव, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, संगारेड्डी, कर्नाटक*

पत्र, सम्पादक के नाम

मेरी समझ में ईसीएमएल कार्यक्रम, ऐसे बच्चों के सर्वाधिक कमज़ोर समूह तक पहुँच रहा है, जिन्हें यदि समर्थन और सुविधाजनक स्कूली शिक्षा का विकल्प न मिले तो उनके स्कूल छोड़ने की सम्भावना अधिक है और हो सकता है कि वे बाल-मज़दूरी करने लगें। सुमति, भीमा और विष्णु जैसे बच्चों के बारे में पढ़कर मुझे ख़ुशी होती है कि कम-से-कम कुछ बच्चे तो बचपन में स्कूल छोड़ने से बच गए हैं और उच्च शिक्षा हासिल कर पा रहे हैं। दूसरी ओर मैं उन बच्चों के बारे में सोचती हूँ जो इस तरह के कार्यक्रमों का लाभ नहीं उठा पाए हैं और पदानुक्रमित समाज की नियति में फँसकर रह गए हैं।

***सुप्रिया नारायणकर**, ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बेंगलूरु*

प्रवासी श्रमिकों के बच्चों के लिए अवसर शीर्षक का अनुभवजन्य लेख जो शोभा और शुभा के विचारों और वर्तमान कार्यों को व्यक्त करता है, उल्लेखनीय है। इसे पढ़कर हमारी आँखों के सामने उन प्रवासी मज़दूरों का चित्र आ जाता है जो देश के विभिन्न हिस्सों में नौकरी की तलाश में महानगरों की ओर जाते हैं। इस लेख को पढ़ते समय हम इस बात की सराहना कर पाए कि बाल-विकास और अधिगम पर सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों का कितना प्रभाव पड़ता है। हम समझ पाए कि प्रवासी बच्चों की शिक्षा के लिए कितने ईमानदार प्रयास और अभिनव दृष्टिकोण अपनाए जा रहे हैं। यह शिक्षा के नवीन दर्शन की सम्भावना भी व्यक्त करता है।

प्रवासी श्रमिकों की शिक्षा के कार्यक्रम की पूरी रूपरेखा साझा करने के लिए धन्यवाद।

***हनुमन्त राजू**, ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बेंगलूरु*

फील्ड में कार्य करते समय हम अपनी क्षमता-वृद्धि के लिए और शिक्षकों के साथ अपने कार्य के समर्थन के लिए अक्सर लर्निंग कर्व के लेखों की मदद लेते हैं। मैंने हाल ही में प्रवासी श्रमिकों के बच्चों के लिए अवसर पर एक लेख (अप्रैल 2020) पढ़ा और इसने मुझे दर्शन, प्रक्रिया, शिक्षणशास्त्र और हितधारकों की भागीदारी के बारे में बहुत ही व्यावहारिक जानकारी दी। इस लेख ने उन बच्चों को 'मुख्यधारा' में लाने के लिए ब्रिज स्कूलिंग के प्रयोजन पर प्रकाश डाला है, जिन्हें व्यवस्थागत और सामाजिक बाधाओं, दोनों से सम्बन्धित कई असुविधाओं का सामना करना पड़ रहा है। माता-पिता और पहले इस केन्द्र का हिस्सा रहे बच्चों सहित शिक्षक और समुदाय की भूमिका को अच्छी तरह से व्यक्त किया गया है। जिन बच्चों को मुख्यधारा में लाया गया है, उनकी सफलता से पाठकों को एक सम्पूर्ण चित्र बनाने में मदद मिलती है। एक शहर में इस कार्य में 12 साल लग गए, यह तथ्य हमें बताता है कि समतामूलक शिक्षण परिवेश का समर्थन और निर्माण करने में जो मुद्दे सामने आते हैं, वे कितने महत्त्वपूर्ण और जटिल हैं। इस तरह के शैक्षिक और सामाजिक रूप से प्रासंगिक लेखों को सामने लाने में, लेखकों सहित पूरी टीम के प्रयासों की हम बहुत सराहना करते हैं। फील्ड के सदस्य हमेशा लर्निंग कर्व की प्रतीक्षा में रहते हैं। इस अद्भुत पठन-सामग्री के लिए धन्यवाद।

***रामचन्दर गिरि,** ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, बेंगलूरु*

प्रारम्भिक बाल्यावस्था शिक्षा (ईसीई) से सम्बन्धित लेख प्रकाशित करने के लिए धन्यवाद। इसी क्षेत्र में शिक्षक-प्रशिक्षक होने के नाते केस स्टडीज़ ने ज़मीनी स्तर की वास्तविकताओं को समझने में मेरी मदद की है। मैं उन केस स्टडीज़ को अपनी देखी हुई चीज़ों के साथ जोड़ सका। उपलब्ध संसाधनों और ज्ञान के साथ ईसीई के संचालन में आँगनवाड़ी शिक्षकों का संघर्ष और जुनून प्रेरणादायक है। मैं इस बात से सहमत हूँ कि आँगनवाड़ी शिक्षकों को अभी भी पाठ्यक्रम की समझ और शिक्षण के तरीक़ों के लिए और अधिक समर्थन की आवश्यकता है। मैं ईसीई कार्यक्रम के महत्त्व को जानता हूँ, अतः मुझे लगता है कि इसे नीतिगत स्तर से लेकर अभिभावकों तक और अधिक पहचान मिलनी चाहिए तथा अधिक पेशेवरों को इस क्षेत्र में प्रवेश करना चाहिए।

***चिन्नाब्रह्मैया**, ज़िला संस्थान, अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन, संगारेड्डी, कर्नाटक*

Write to us at learningcurve@apu.edu.in

अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी लर्निंग कर्व के पुराने अंक **http://azimpremjiuniversity.edu.in/Site Pages/resources-learing-curve.aspx** से डाउनलोड किए जा सकते हैं।

यह पत्रिका अँग्रेज़ी और कन्नड़ा में भी छपती एवं प्रकाशित होती है।

अपने सुझाव,टिप्पणियाँ, मत और अनुभव हमें इस ईमेल पते पर भेज सकते हैं :
learningcurve@apu.edu.in

मुद्रक तथा प्रकाशक मनोज पी. द्वारा अज़ीम प्रेमजी फाउण्डेशन फॉर डेवलपमेंट के लिए
आदर्श प्रा.लि.,4 शिखरवार्ता, प्रेस काम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल पिन 462 011 से मुद्रित

एवं अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, सर्वे नम्बर 66, बुरुगुंटे विलेज, बिक्कनाहल्ली मेन रोड, सरजापुरा, बेंगलूरु, कर्नाटक - 562 125 से प्रकाशित
मुख्य सम्पादक : प्रेमा रघुनाथ

अगला अंक

शाला और समाज

Azim Premji University
Survey No. 66, Burugunte Village,
Bikkanahalli Main Road, Sarjapura
Bengaluru, Karnataka – 562 125

080-6614 4900
www.azimpremjiuniversity.edu.in

Facebook: /azimpremjiuniversity

Instagram: @azimpremjiuniv

Twitter: @azimpremjiuniv